भारत में सबसे ज्यादा बिकनेवाली हिन्दी पत्रिका

मनोहर कहानियाँ

रहस्य-रोमांच विशेषांक



श्रमिक नेता नियोगी
अब तक की
सम्पूर्ण अन्त

वूडू: अफ्रीका का
अनोखा तंत्र-मंत्र

मंदिर के बाघ का रहस्य,
जिसे जिम कार्बेट
नहीं समझ पाये

मूल्य : 10-00



पुरुषों के लिए आधुनिक घड़ी, जिसके मेन डायल पर है, एक अकेला सेकण्ड डायल. Rs. 1150*

टाइटन की क्लासीक. बारीक पसन्द की पहचान.

हीरे और मोती का फ़र्क तो सबको नज़र आता है, पर हीरों में कोहिनूर की पहचान के लिए चाहिए नज़र की बारीकी.

वो नज़र जो स्वयं टिक जाती है टाइटन की क्लासीक पर. घड़ियों का एक ख़ज़ाना जिसमें १८ और २३ कैरेट गोल्ड प्लेटिंग की दोहरी परत के रूप को उभारता है शानदार लैदर स्ट्रैप. और आपको मिलती है शानदार घड़ियाँ जिनमें झलकता है पुराना राजसी अन्दाज़ या आधुनिक शान-शौकत.

टाइटन की क्लासीक एक पसन्द है ४०० से ज़्यादा अन्तर्राष्ट्रीय क्वॉर्ट्ज़ घड़ियों के ख़ज़ाने से. हर घड़ी के साथ आपको मिलेगा टाटा के नाम का भरोसा और २ साल की गारण्टी.

टाइटन की क्लासीक. फ़र्क शान का. बारीक पहचान का.

Classique



TITAN
QUARTZ
The Changing Face Of Time

* उत्तर प्रदेश में लागू सभी कर इस कीमत में शामिल हैं

Ogilvy&Mather 5548 HIN


Look no further...
GRAVIERA
SUITING
(A Unit of Grasim Industries Ltd.)



माया ने विश्व प्रसिद्ध
टाइम, यू०एस० न्यूज एंड वर्ल्ड रिपोर्ट, वर्ल्ड मानीटर
जैसी समाचार पत्रिकाओं से सहयोग-अनुबंध किया है।
इस अनुबंध के तहत इन पत्रिकाओं में प्रकाशित
विश्व की ताजा सामग्री हिंदी में प्रकाशित करने का एकमात्र
अधिकार माया को मिला है।

हर अंक में नियमित प्रकाशित

देश के साथ अब दुनिया भी माया

मनोहर कहानियाँ

जनवरी १९९२



वूडू : अफ्रीका का अनोखा तंत्र-मंत्र

पश्चिमी अफ्रीका के आव कबीले के रहस्यमय वूडू-तंत्र की रोचक कथा





मैन्सन और उसकी शिष्याओं का मुकदमा

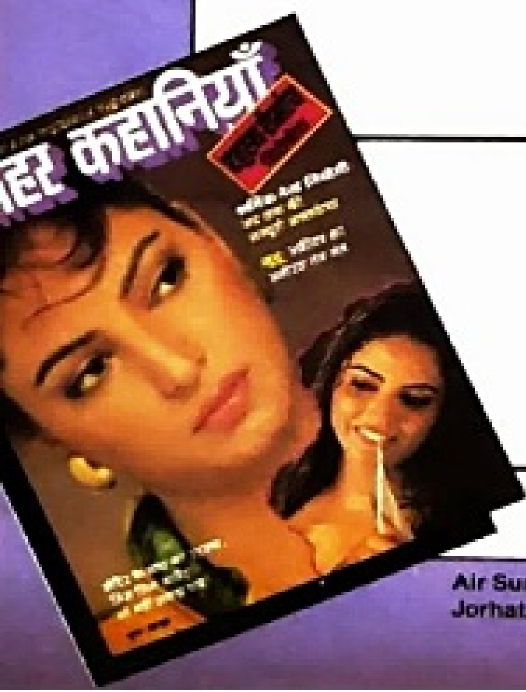
पांच लोगों की हत्या के रहस्योद्घाटन की कहानी

जगबीर को मौत का बुलावा

अर्जुन पुरस्कार प्राप्त हाकी खिलाड़ी राजबीर कौर के भाई की हत्या का रहस्य क्या है?

इस अंक में

लघुकथाएं

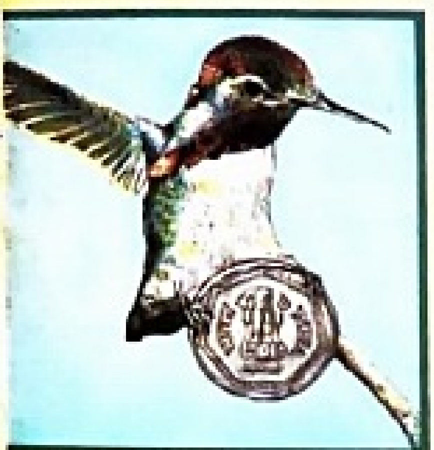


संपादकीय कार्यालय : मनोहर कहानियां, २८१, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद—३

Air Surcharge Rs. 1 Per copy for Kathmandu, 50 Paise Per Copy for Dibrugarh, Dimapur, Imphal, Jorhat, Mohanbari, Shilong, Silcher, Port Blair, Tinsukia and Tezpur. For Agartala, it is 25 paise.

संसार का सबसे छोटा पक्षी





क्यूबा में एक ऐसा पक्षी पाया जाता है, जो छोटे आकार के पक्षियों में भी सबसे छोटा है। भौंरे के आकारवाला संसार का यह सबसे छोटा पक्षी 'मेलीसूगा हेलेना' नाम से पुकारा जाता है। इसका भार लगभग दो ग्राम होता है। यह भार अंग्रेजी सिक्का पेनी के भार से भी कम होता है।

यह पक्षी ऐसे क्षेत्रों में होता है, जो दुर्गम हैं। जब लोगों ने संसार के इस छोटे मरमरपक्षी को पहली बार देखा, तो उन्हें यह भ्रम हो गया कि वे कोई कीड़ा-मकोड़ा तो नहीं देख रहे हैं। यह पक्षी एक सेकेण्ड में ८० बार अपने पंख फड़फड़ाता है। भौंरे के आकारवाले ये पक्षी अपने पंख इतनी जल्दी-जल्दी फड़फड़ाते हैं कि हम यह पता ही नहीं लगा सकते कि वे पंख फड़फड़ा रहे हैं। इनके पंखों की फड़फड़ाहट का पता लगाने के लिए एक ऐसे आवृत्ति दर्शी यंत्र का प्रयोग करना पड़ता है, जो तीव्र गतिवाली स्ट्रोब लाइट से युक्त होता है। इसकी सहायता से हमारे लेंस इन पक्षियों को उस समय देख सकते हैं, जबकि वे अपने पेंसिल के आकारवाले निवास दण्ड पर बैठकर पंखों को फड़फड़ाते हैं।

ये पक्षी वृक्षों पर सौ फुट की ऊंचाई पर रहते हैं। इन्हें नीचे उतारने के लिए जब चारा डाला जाता है, तब ये कहीं जाकर उतरते हैं। नीचे उतरने पर ही हम इनका चित्र ले सकते हैं। चोंच से लेकर अपने पिछले सिरे तक नाप में ये दो इंच से थोड़े ही बड़े होते हैं। इन पक्षियों के नर ही संसार के सबसे छोटे पक्षी माने जाते हैं। मादा चिड़िया नर पक्षियों से लगभग एक इंच बड़ी होती है। ये आकार में वैसी ही होती हैं, जैसे कि जमैका तथा हिसपैनीओला द्वीप के वर्नेन मरमर पक्षी होते हैं।

ये पक्षी विशिष्ट रूप में एकाकी ही रहते हैं। कुछ सेकेण्ड के लिए सहवास के समय ही ये मादा पक्षियों के साथ रहते हैं। इनमें से अधिसंख्यक भयानक रूप से प्रदेश-प्रेमी होते हैं। ये अकारण से अन्य मरमर पक्षियों से युद्ध करते हैं। इनके ही युद्ध प्रिय स्वभाव से प्रेरित होकर क्यूबा के इस क्षेत्र के लोगों ने इनके नाम पर अपने एक युद्ध देवता का नाम भी रख लिया है। जब कभी उन्हें पता लगता है कि किसी मादा मरमर पक्षी ने उनके निवास-दण्ड को चुरा लिया है, तब वे बदले की भावना से प्रेरित होकर उस पर आक्रमण करने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

मादा पक्षी का घोंसला मकड़जाल जैसा डाल से जकड़ा हुआ होता है। यह महीन तन्तु-जाल से तथा पेड़ों के तने तथा डालियों के महीन रेशे से झीना-झीना बुना होता है। यह 'लिचेन' से प्रभूषित होता है। नीचे कोमल पंक्ति-बंधन वाला समुच्चय होता है, जिसमें कहवा के बीजों से भी छोटे दो अण्डे आ सकते हैं। मई और जून में अभिजनन होता है।

पक्षी जगत में मरमर पक्षी के शरीर के भार की प्रति इकाई मेटाबोलिक दर सबसे अधिक ऊंची है। आनुपातिक तौर पर इसे भारी मात्रा में भोजन की आवश्यकता होती है। छोटे-छोटे मकड़े, मक्खियां और अन्य कीड़े तो इसमें सबसे छोटे आकारवाले पक्षी के पूरक भोजन पदार्थ हैं। यह अपना अधिकांश पोषण-तत्व एक विशेष प्रकार के तुरही के आकारवाले फूलों से प्राप्त करता है। ये पुष्प प्रचुर मात्रा में मकरन्द उत्पन्न करते हैं। इन फूलों के पौधों का विकास ही इसलिए होता है कि इनके पराग का संक्रमण कीड़े-मकोड़ों की अपेक्षा मरमर पक्षी अधिक करें।

कभी संसार के ये सबसे छोटे पक्षी सापेक्षिक रूप में सारे क्यूबा में पाये जाते थे, किन्तु अब ऐसे पक्षी माने जाते हैं, जिनकी प्रजातियों के अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। यद्यपि क्यूबा इनके संरक्षण का प्रयास कर रहा है, तथापि ये दुर्लभ हो रहे हैं। इनके वास स्थल भी तेजी से घटते जा रहे हैं। ये यहाँ शायद ही कभी दिखायी पड़ते हैं। संसार के इस सबसे छोटे पक्षी का भविष्य क्या होगा, यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका कोई उत्तर नहीं मिल रहा है। ●


आपके परिवार की पहली पसंद
एम डी एच
मसाले
MDH
Garam masala
MDH
Peacock Kasoori Methi
Hygienic, Flavourful & Tasty
AGMARK
MDH
DEGGI MIRCH
MAHASHIAN DI HATTI (P) LTD.
अपने रोजाना के खाने को एम.डी.एच. मसालों से स्वादिष्ट बनाइए। बरसों से गृहिणियों का साथ निभाते रहे हैं एम.डी.एच. मसाले। एम.डी.एच. गरम मसाला, देगी मिर्च या कसूरी मेथी को अपनी रसोई का साथी बनाइए और खाने वालों की मुस्कान का आनंद लीजिए। अपने बेसनी मुर्ग, शाही टुकड़े, मेथी परांठों या पालक पनीर में एम.डी.एच. का जादू आजमा कर तो देखिए।
महाशियां दी हट्टी प्रा॰ लि॰
कार्पोरेट आफिस :
एम.डी.एच. हाउस, 9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली- 110015
ब्रांचेज : दिल्ली • गुड़गांव • गाजियाबाद • कानपुर
MDH 70 वर्षों से आपका विश्वसनीय नाम

श्रमिक नेता नियोगी: अब तक की सम्पूर्ण अन्तर्कथा

सोमदत्त शास्त्री

सितम्बर २८ को शंकर गुहा नियोगी अपने पुराने साथी लोक स्वातंत्र्य संगठन महासचिव राजेन्द्र सायल के बुलाने पर रायपुर गये थे। उन्हें सायल ने भोपाल से आये पत्रकार नरेन्द्र कुमार सिंह से मिलने के लिए बुलवाया था। शाम को ही रायपुर पहुंच नियोगी अपने कुछ मित्रों के अलावा चचेरी बहन सरिता से भी मिले। उन्होंने उससे दूसरे दिन भिलाई आकर मिलने को कहा। सरिता चाहती

सफलताओं को बांटना और खतरों से अकेले जूझना नियोगी के स्वभाव में था। उनकी मान्यता थी कि मजदूर आन्दोलनों में हिंसा का प्रवेश मूर्खता है...और वे हिंसा के शिकार हुए

नियोगी : आखिरी सलाम

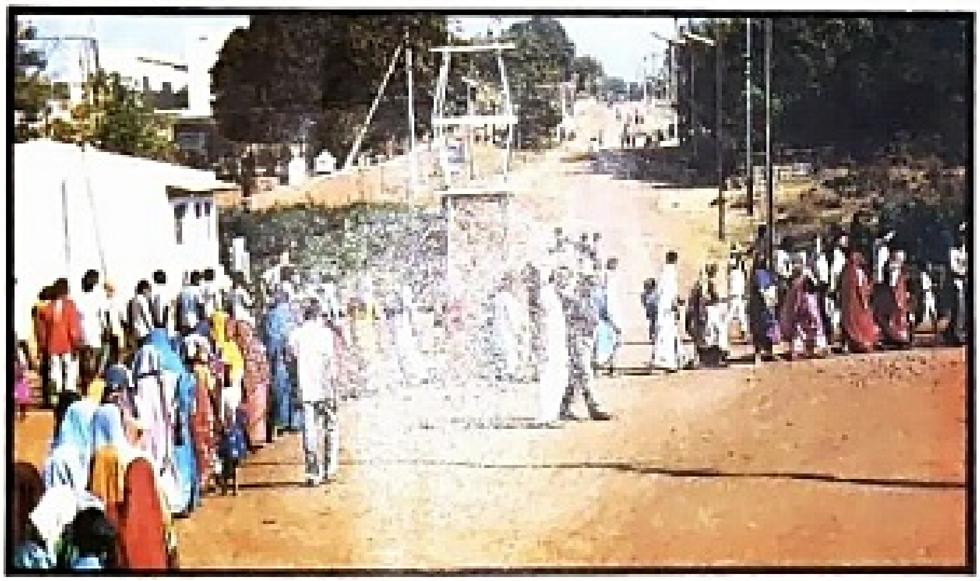


अंतिम संस्कार





नियोगी की जनशक्ति



जुलूस में नियोगी एक पुलिस अधिकारी के साथ



श्रमिक सभा में नियोगी

थी कि नियोगी खाना उसके साथ घर में खायें। पर खाने का आग्रह 'फिर कभी' कहकर उन्होंने इसलिए टाल दिया, क्योंकि उन्हें पत्रकार श्री सिंह के साथ होटल पिकाडली में डिनर लेते हुए साक्षात्कार देना था।

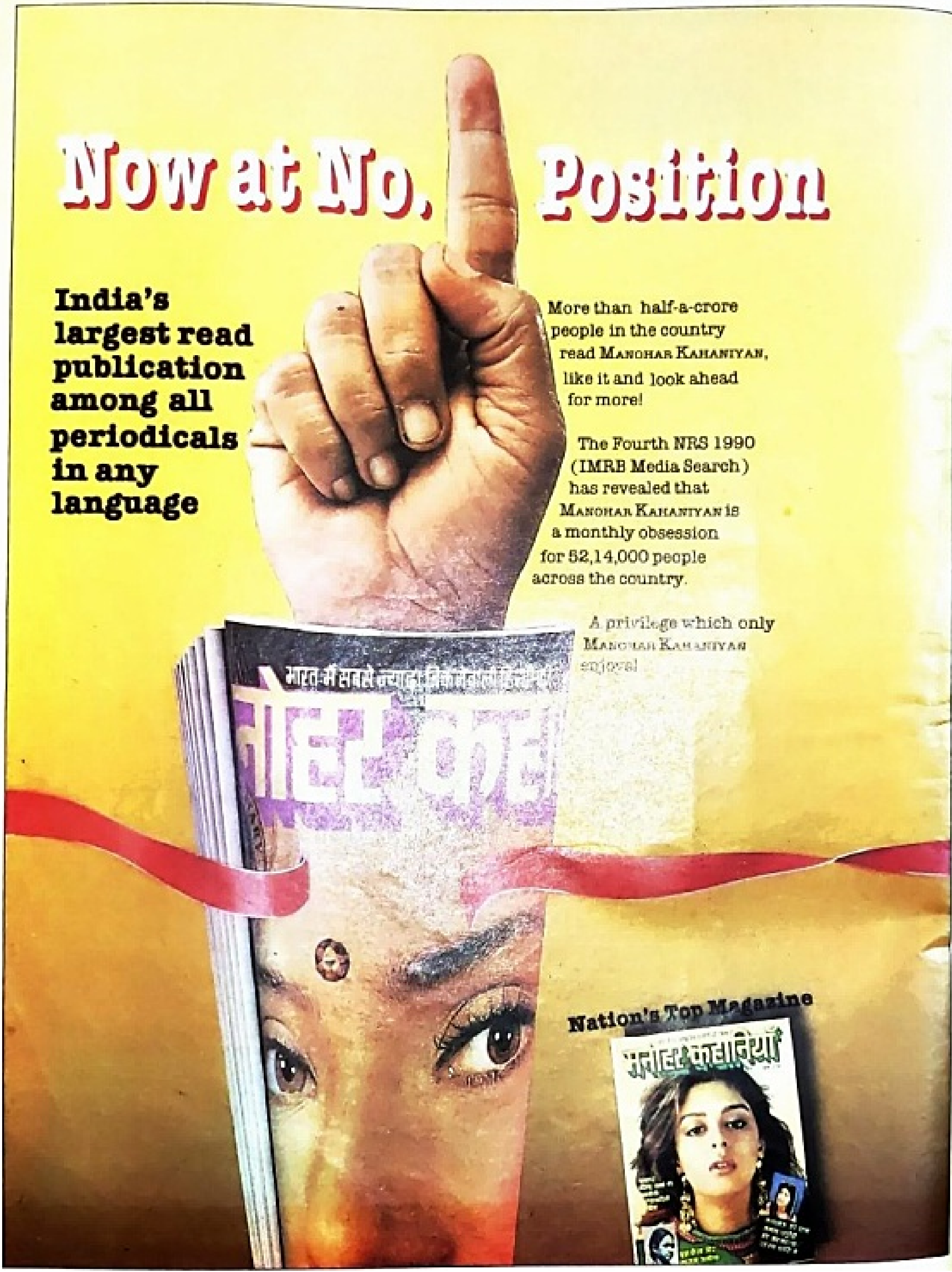
बड़े होटलों में भोजन आदि से वे प्रायः बचते थे और इसे 'बड़े लोगों का चोचला' कहा करते थे। पर कभी-कभी यह चोचला उन्हें पालना पड़ता था। हालांकि ऐसे समय वे अपने आपको असहज और उस पूरे वातावरण से हर स्तर पर कटा-कटा-सा महसूस किया करते थे। होटल पिकाडली में उस रोज खाना खाते और बातें करते हुए वे सहज नहीं थे। उनको चिंता इस बात को लेकर थी कि मध्य प्रदेश में श्रमिक आंदोलनों पर उद्योगपति, सरकार और माफिया गिरोहों का कब्जा हो रहा था।

रायपुर से नियोगी संगठन की फिएट कार द्वारा रात करीब साढ़े बारह बजे भिलाई के लिए रवाना हुए। भिलाई में हुडको कालोनी स्थित अपने निवास एम० आई० जी० १/५५ तक पहुंचते-पहुंचते उन्हें डेढ़ बज गये। इस आवास में उन्हें छोड़कर ड्राइवर दीपक सरकार कार लेकर छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के कार्यालय चला गया।

भिलाई का यह आवास नियोगी ने कुछ ही महीने पहले अपनी यूनियन की बढ़ती गतिविधियों को सही ढंग से नियंत्रित करने के लिए लिया था। इस आवास में वे सपरिवार रहने का इरादा भी रखते थे। लेकिन बच्चों की पढ़ाई की वजह से फिलहाल उन्हें अकेले रहना पड़ रहा था। अपनी देखभाल और हिफाजत के लिए वे किसी विश्वस्त साथी को साथ रखा करते थे।

नियोगी की आदत थी कि जब तक वे कुछ लिख-पढ़ नहीं लेते थे, सो नहीं पाते थे। उस रात भी घर आकर हमेशा की तरह मच्छरदानी लगी चारपाई पर लेटते ही नियोगी ने एक किताब में आंखें गड़ा लीं और शायद इसी हाल में उनकी पलकें मुंद गयीं। नियोगी को सोया जानकर उनकी देखभाल के लिए तैनात उनका एक अन्य भरोसेमंद ड्राइवर बहलराम साहू बगल के दूसरे कमरे में जाकर सो गया।

रात के लगभग साढ़े तीन बजे बहलराम की नींद उस वक्त खुल गयी, जब उसने हलके से धमाके के बाद नियोगी के कमरे से चीखें सुनीं— "ओ मां...मार डाला। बचाओ...।" बहलराम को पहले तो कुछ सूझा ही नहीं, फिर भागकर वह नियोगी के कमरे में पहुंचा। तब वे खून से लथपथ तड़पते दिखाई दिये। बहलराम उनकी हालत देखकर घबरा गया। वह फौरन बाहर आया और सामने गुरुकृपा निवास में रहनेवाले मोटगांवकर


Now at No. Position
India's largest read publication among all periodicals in any language
More than half-a-crore people in the country read MANOHAR KAHANIYAN, like it and look ahead for more!
The Fourth NRS 1990 (IMRB Media Search) has revealed that MANOHAR KAHANIYAN is a monthly obsession for 52,14,000 people across the country.
A privilege which only MANOHAR KAHANIYAN enjoys!
Nation's Top Magazine
मनोहर कहानियाँ

को बुला लाया। फिर उन्हीं के स्कूटर से वह छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा कार्यालय गया। बहलराम की सूचना पर मोर्चा कार्यालय में सोये हुए संगठन के लोग अनूप सिंह और बसंत वगैरह घटनास्थल पर पहुंचे। तब तक नियोगी अचेत हो गये थे। इन लोगों ने उन्हें कार में डाला और सेक्टर नौ स्थित भिलाई अस्पताल में ले गये। वहां डाक्टरों ने उन्हें देखते ही मृत घोषित कर दिया।

अस्पताल से भिलाई के सुपेला पुलिस थाने को इस अविश्वसनीय हादसे की सूचना दी गयी। पांच बजते-बजते महानिरीक्षक ए० एन० सिंह तोमर, अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक बी० बी० एस० ठाकुर, फोरेंसिक एक्सपर्ट और डाग स्क्वाड का अमला साथ लेकर घटनास्थल पर पहुंचे। प्रारम्भिक जांच से पता चला कि किसी ने सड़क की ओर खुलनेवाली खिड़की से गोलियां दागकर नियोगी की हत्या कर दी थी। गोलियों से मच्छरदानी में सुराख हो गये थे।

२८ सितम्बर के सबेरे का रक्ताभ सूरज छत्तीसगढ़ अंचल की मजदूर बस्तियों के लिए दुख, आघात और विषाद लेकर आया था। नियोगी की हत्या की खबर जहां-जहां पहुंची, मजदूर बदहवास होते चले गये। दल्ली राजहरा, जहां से नियोगी ने अपने सार्वजनिक जीवन का सफर शुरू किया था, मातम में डूब गया। हजारों रोते-कलपते, तथा रोष से थरथराते श्रमिकों ने अस्पताल घेर लिया। इसी स्थिति में सुबह के नौ से बारह बजे तक तीन डाक्टरों ने नियोगी का पोस्टमार्टम किया। नियोगी के बायें कंधे के ऊपरी भाग में छः बड़े छेद मिले, जो गोलियों के थे। गोलियों ने फेफड़े और हृदय को भेदकर रख दिया था। छाती में रक्त जम जाने की वजह से नियोगी की मौत हुई थी।

उसी दिन भोपाल में मुख्यमंत्री सुंदरलाल पटवा ने नियोगी के हत्यारों का सुराग देनेवाले को २५ हजार रुपये इनाम देने की घोषणा कर दी। कुछ लोगों को पूछताछ के लिए पुलिस अभिरक्षा में ले लिया गया। इनमें नियोगी का ड्राइवर बहलराम भी शामिल था, जो आखिरी क्षणों में उनके साथ था। लेकिन इतने से श्रमिकों को संतोष नहीं हुआ। देखते-देखते पूरा मध्य प्रदेश आंदोलित होने लगा। यह किसी मामूली आदमी की हत्या नहीं थी, बल्कि उस श्रमिक नेता की हत्या थी, जिसकी एक आवाज पर लाखों लोग संगठित हुआ करते थे। श्रमिकों को जिन लोगों पर इस हत्या का शक था, वे न सिर्फ बाहुबल को खरीदने की ताकत रखते थे, बल्कि पुलिस एवं प्रशासन की बागडोर थामे सरकार के शीर्ष में बैठे लोगों तक उनकी सीधी पहुंच थी।

अपनी दहाड़ से धन्ना सेठों की ऊंची-ऊंची अट्टालिकाओं के अलावा दल्ली राजहरा से दिल्ली तक सत्ता के कंगूरों को थरथराकर रख देनेवाले



शोकाकुल आशा नियोगी



शोकाकुल क्रान्ति, मुक्ति और जीत

शंकर गुहा नियोगी का जन्म ४८ वर्ष पूर्व शुक्रवार १४ फरवरी १९४३ को असम के चाय बागानों की खुशबू के बीच नौगांव जिले के जमुनामुख ग्राम में हेरम्ब कुमार गुहा नियोगी के घर हुआ था। शायद बहुत कम लोग जानते हों कि उनका नाम 'धीरेश' रखा गया था। पर उन्हें चाहनेवालों ने उनको विषपायी 'शंकर' बना डाला, जो वे जीवनपर्यन्त बने रहे। अपने समर्थकों के बीच वे 'बैगा' और 'मितान' नाम से भी जाने जाते थे। छत्तीसगढ़ में बैगा प्रेतबाधा उतारनेवाले को कहते हैं और मितान मीत का अपभ्रंश है। नियोगी इन दोनों नामों को जीवन भर सार्थक करते रहे। जिससे भी वे अपने साधारण व्यक्तित्व के साथ एक बार मिले, वह उनका सदा के लिए मित्र बन गया। इसी तरह बड़े-बड़ों के सिर चढ़कर बोलने वाला भूत उतारने में भी उन्हें महारत हासिल थी।

सन् १९६९ से '७५ तक के गुमनामी भरे दौर में कुछ लोगों ने शंकर गुहा नियोगी को 'मदन' के रूप में भी जाना। इस दौरान नियोगी गुंजेवाही और पाटन के दुर्गम इलाकों में अज्ञातवास में थे। यहां वे श्रमिकों के साथ गिट्टी तोड़ते थे, बकरियां चराते थे, या पीठ पर लादकर चड्डी बनियान बेचा करते थे। फ़ाकाकश और चिंताओं में डूबे नियोगी के जीवन का यह शायद सबसे मुश्किल दौर था। इसी दौर ने उन्हें श्रम और मनुष्यता का लौह पुरुष बनाकर मानव अधिकारों के लिए लड़ना सिखाया था।

एक बार उन्होंने बड़ी बेफिक्री से हंसते हुए कहा था, "मेरे बारे में आप निश्चिंत रहिए। मैं खुशबू हूं, कोई फूल नहीं, जो मुरझा जाऊं।"

नियोगी का बचपन सुकूनभरा नहीं था। हालांकि पिता ठेकेदार थे, पर वैसे नहीं, जैसे आम ठेकेदार होते हैं। अभाव और अंतहीन कठिनाइयां साथ लगी थीं। घर के भीतर और बाहर के इस वातावरण में नियोगी के अंदर विप्लव के अंकुर फूटते चले गये। मार्क्स, लेनिन, रवीन्द्र नाथ ठाकुर और नेताजी सुभाष उनके आदर्श थे।

नियोगी का लगभग समूचा जीवन यायावरी

का रहा। उनकी पैदाइश के कुछ समय बाद ही उनका पूरा परिवार नौगांव से पश्चिम बंगाल में जलपाईगुड़ी चला आया। यहीं उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। वे यहां आनन्दचंद्र कालेज के छात्र रहे। फिर आगे की पढ़ाई के लिए वे आसनसोल के सातग्रुरिया में अपने ताऊ मन्मथनाथ गुहा के यहां चले आये, जो उन दिनों कुश बिहार कालेज में प्राचार्य थे। शंकर विज्ञान के अच्छे विद्यार्थी थे। परिस्थितियां ऐसी बनीं कि एक जगह जम कर पढ़ना नहीं हो सका। सातग्रुरिया से दुर्ग आकर नियोगी ने बी० एस-सी० पास करने के साथ-साथ ए० एम० आई० का त्रिवर्षीय इंजीनियरिंग कोर्स भी किया।

यह सारी पढ़ाई उनके लिए व्यर्थ गयी। शिक्षित होने का दम्भ उनमें कभी नहीं दिखा। जब भी इस विषय पर कोई बात चली, उन्होंने यही कहा, "बस इतना समझ लीजिए कि शिक्षा के नाम पर साक्षर हूं।"

नियोगी पांच भाई तथा दो बहनों में सबसे बड़े थे। उनसे छोटे प्रणव फिलहाल इम्फाल में फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर हैं। अनूप जलपाईगुड़ी में घर संभालते हैं। स्वराज केन्द्रीय रक्षा विभाग में हैं। मृणाल मेदिनीपुर, हल्दिया में कारखाने में काम करते हैं। बहनों में बड़ी शीला कलकत्ते में तथा पांचाली बिन्नागुड़ी में ब्याही हैं। नियोगी के बचपन का अधिकांश समय अपने जिस चचेरे भाई अरुण गुहा के साथ बीता था, वे अमेरिका में इंजीनियर हैं और सपरिवार वहीं रहते हैं।

बचपन से ही नियोगी का झुकाव वामपंथी आंदोलन की ओर हो गया था। नियोगी अच्छे नाटककार थे। छात्र जीवन में उन्होंने जितने भी नाटकों का मंचन किया, उसमें सर्वहारा और पूंजीपतियों के द्वंद्व का चित्रण था। जलपाईगुड़ी में लोगों से चंदा मांगकर एक झोपड़े में उन्होंने पुस्तकालय बनाया था। उसमें विप्लवी साहित्य की अधिकता थी। यह पुस्तकालय में बदला जा चुका है। नियोगी को बचपन में माचिस की डिब्बियों के लेबल जमा करने का गहरा शौक था।

पश्चिम बंगाल से भिलाई की ओर वे अपनी मां कल्याणी देवी की मृत्यु के बाद रवाना हुए थे। पूरा परिवार आर्थिक संकटों से घिर गया था। नियोगी पर पूरे परिवार का बोझ आ पड़ा। वे इस बोझ को वहन करने के इरादे से ही भिलाई की ओर चल पड़े थे, जहां उनके मामा शितांशु राय इस्पात कारखाने में फोरमैन थे। वे सेक्टर छह में रहते थे। नियोगी उन्हीं के घर रहने लगे और कारखाने के कोक ओवेन में नौकरी कर ली।

उस समय पश्चिम बंगाल नक्सलवादी आंदोलन से धधक रहा था। अतः छत्तीसगढ़ में रहनेवाले 'खुराफाती' बंगालियों पर पुलिस चौकसी रखे हुए थी। नियोगी भी इससे अछूते नहीं रहे। श्रमिकों को हक के लिए प्रेरित करना उनकी



नियोगी एक जनसभा में बोलते हुए

आदत थी। इसी आदत को पुलिस ने नक्सली गतिविधि मान लिया। एक साल बाद ही सन् '६२ में आतंकवादी कदम उठाने और तोड़फोड़ करने के आरोप में जिला प्रशासन ने उन पर कार्रवाई शुरू कर दी, तब वे भूमिगत हो गये।

पुलिस से बचने के लिए नियोगी बस्तर के घने जंगलों में चले गये। वहीं से उनके अंतहीन संघर्षों की नयी शुरुआत हुई। अपनी इस नयी और पुरानी जिंदगी की तुलना करते हुए वे कहा करते थे, "सन् '६१ में जब मैं बतौर ट्रेनी आया था, तब अपनी तनख्वाह का आधे से अधिक रुपया सूट-बूट पर खर्च किया करता था। लेकिन जब मैंने मजदूरों की जिंदगी को नजदीक से देखा, तब मुझे लगा कि मैं भी एक कामगार हूं। मुझे भी उनके बीच उन्हीं की तरह रहकर काम करना चाहिए और मैं उनमें रमता चला गया।"

अज्ञातवास का समय नियोगी ने खेतों में छुपकर और पेड़ों की डालों पर रातें बिताकर बिताया। इस बीच बकरियां चराने-बेचने और पत्थर तोड़ने आदि के काम करते रहे। कलकत्ता भी गये, पर पुलिस ने पीछा नहीं छोड़ा। सो पुनः वापस चले आये। इन्हीं दिनों बालौद में अकाल पड़ा। हैजा फैलने लगा। तब नियोगी वहां पहुंच गये और पुलिस की निगाहें बचाकर लोगों की सेवा करते रहे। कुछ दिन कम्युनिस्ट पार्टी के होल टाइमर बनकर कार्य करते रहे।

भिलाई में स्थापित एशिया के सबसे बड़े इस्पात कारखाने के लिए कच्चा लोहा जिन आठ खदानों से निकाला जाता है, उनमें से एक खदान दानी टोला है, जो दल्ली राजहरा तथा बालौद गांवों के बीच जंगलों के मध्य है। इसी खदान क्षेत्र में सन् '७२ में नियोगी अचानक प्रकट हुए और दो सौ मजदूरों के साथ मिलकर छत्तीसगढ़ खदान मजदूर संघ की आधारशिला रखी।

दानी टोला खदान क्षेत्र में उन्हें जिस आदिवासी परिवार ने पनाह दी थी, उसी परिवार की महिला श्रमिक 'आसो' से उन्होंने विवाह कर लिया। इस विवाह को याद करते हुए आसो, जिन्हें 'आशा' नाम से जाना जाता है, कहती है, "हम लोग उन दिनों दानी टोला खदान में साथ-साथ काम करते थे। वे मजदूरों के हितों को लेकर संघर्ष कर रहे थे। उनके इसी गुण को लेकर मेरा उनसे प्रेम हो गया और इमरजेंसी लगने के दो साल पहले हमने शादी कर ली।"

नियोगी ने यह शादी भावावेश में नहीं की थी, बल्कि काफी सोच-समझकर ही यह कदम उठाया था। इस शादी से पहले उन पर घरवालों ने भी दबाव डाला था कि वे किसी पढ़ी-लिखी सजातीय लड़की से शादी कर लें। लेकिन वे अपनी बहन शीला तथा पिता से बोले, "मैं पढ़ी-लिखी पत्नी नहीं चाहता, क्योंकि उसे उसके योग्य खाना-कपड़ा देने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है। फिर मेरे सामाजिक जीवन में भी इससे बाधा आएगी। मैं किसी अनपढ़ युवती से शादी करूंगा।"

इस बातचीत के बाद नियोगी घर दुर्ग वापस लौटे, तो सन् '८१ तक उनकी कोई खबर ही नहीं मिली। सन् '८१ के अंत में अखबारों में पढ़कर नियोगी के परिवारवालों को पता लगा कि उन्होंने शादी कर ली है। फिर पूरा परिवार दल्ली राजहरा नियोगी से मिलने और आशा को देखने आया। नियोगी की उपलब्धियों और लोकप्रियता को देखकर उनके पिता की खुशी का ठिकाना नहीं था। आशा को देखकर भी सबने सराहा।

नियोगी बंगलामिश्रित हिन्दी बोलते थे। इसलिए शुरुआत में वे मजदूरों से घुल-मिल नहीं पाये थे। पर बाद में वे उनसे कुछ ऐसे समरस हुए कि उनकी जिंदगी का हिस्सा बन कर रह गये। बस्तर की माड़िया और छत्तीसगढ़ी बोलियां उन्होंने सीख ली थीं। सन् '७२ में ही दानी टोला खदान के ३६५ आदिवासी गांवों को उन्होंने संगठित करना चाहा। इस प्रयास में एक बार फिर वे पुलिस की निगाह में आ गये और बालौद से जगदलपुर चले गये। जगदलपुर में बेकार घूमते हुए उन्हें पकड़ लिया गया। दो महीने जेल में रहे। फिर वापस बालौद लौट आये।

सन् '७६ में दानी टोला में आपातकाल के दौरान वे गिरफ्तार कर लिये गये। उन दिनों आशा के गर्भ में 'क्रांति' पल रही थी। गर्भस्थ शिशु का नाम नियोगी ने क्रांति रखने का सुझाव जेल से ही पत्र लिखकर दिया था। जेल से छूटकर नियोगी वापस लौटे, तब उनके सामने शोषित और पीड़ित श्रमिकों का भयभीत समुदाय था। एटक और इंटक के नेताओं से परेशान श्रमिक नेतृत्व विहीन भटक रहे थे। अफसरों और ठेकेदारों से इन श्रमिकों की रूह कांपती थी। देश का सबसे मजबूत लोहा तैयार करनेवाले ये श्रमिक ठेकेदार से बात करने की हिम्मत तक नहीं जुटा पाते थे। इन्हीं



"मैं ने खोया केवल
अतिरिक्त भार
मगर स्वास्थ्य
बरकरार"
Complan
"धन्यवाद
कॉम्प्लान"
जी हां, जब आप डायटिंग करती हैं, तो वज़न के साथ-साथ और
भी कुछ खो देती हैं – बहुमूल्य पोषक तत्व. ऐसे में
आपके लिए ज़रूरी है कॉम्प्लान. एक पूर्ण नियोजित आहार.
इसमें वो सभी 23 ज़रूरी पोषक तत्व हैं, जो आपके शरीर के लिए
आवश्यक हैं. आपकी बढ़िया सेहत के लिए ज़रूरी है
एक ही व्यायाम... रोज़ाना लीजिए कॉम्प्लान!
Complan
23
अत्यावश्यक
पोषक तत्व
नियोजित
मात्रा में
कॉम्प्लान®
परिपूर्ण नियोजित आहार

मजदूरों को लेकर नियोगी ने छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की स्थापना की। फिर अफसरों-ठेकेदारों का संघ द्वारा घेराव होने लगा। ताकत बढ़ती चली गयी।

२-३ जून १९७७ को पुलिस ने दल्ली राजहरा की श्रमिक बस्ती के झोपड़े से नियोगी को गिरफ्तार करना चाहा। श्रमिकों ने प्रतिकार किया और दो किस्तों में गोलियां चलाकर ११ श्रमिक भून दिये गये। पहली गोलीबारी २ जून की रात को तब चली, जब नियोगी को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस दल ने छापा मारा। तब श्रमिकों ने आठ पुलिसवालों को पकड़ लिया। रात के पौने तीन बजे पुलिस ने ४५ राउण्ड गोलियां चलायीं। दूसरे दिन दोपहर में १८ राउण्ड गोलियां चलीं।

इन दोनों गोलीकांडों की न्यायिक जांचों में नियोगी निर्दोष सिद्ध हुए।

नियोगी का संघर्ष जारी रहा। हिरी माइंस के तीन हजार श्रमिकों का विभागीकरण करने की मांग मान ली गयी। ठेकेदारी पथ की समाप्ति के लिए नियोगी ने खदान मजदूरों की समितियां बना दीं। सहकारी समितियां खदानों का ठेका खुद लेने लगीं। 'मितान' नाम से एक अखबार भी इसी समय निकाला गया।

ठेकेदार-राजनेता उनसे जलने लगे, पर मुकाबले की हिम्मत किसी में नहीं थी। नियोगी की 'अकड़' तोड़ना इसलिए उनके वश में नहीं था, क्योंकि वे उनसे चंदा मांगने नहीं जाते थे। मजदूर ही अपनी मेहनत के रुपयों में से संघ को २०-२५ लाख रुपये मासिक चंदा देते थे। फिर चला कुप्रचार का लम्बा दौर। पर अब तक नियोगी के पांव मजदूरों की बस्ती में अडिग हो गये थे। चार स्कूल, चालीस बिस्तरों का अस्पताल, मजदूर बस्तियों में पेयजल के लिए टैंकर, जीपें, कारें—क्या नहीं था संघ के पास? यह सब करने के पीछे उनकी एक ही भावना थी कि श्रमिक चेतना जागृत हो। संघ का सारा काम उन्होंने श्रमिकों के नेतृत्व में गठित १७ अलग-अलग विभागों को बांट दिया, ताकि किसी तरह की गड़बड़ी की कोई गुंजाइश न रहे। इन भौतिक साधनों के अलावा हजारों श्रमिकों की दृढ़ शक्ति से वे लैस थे, पर उनके रहन-सहन की सादगी और व्यवहार का भोलापन ज्यों का त्यों बना रहा।

मजदूरों की आर्थिक स्थिति सुधारने की दिशा में दूसरा कदम नियोगी ने शराबबंदी का उठाया। यूनियन से जुड़े २५ हजार श्रमिकों के लिए शराब पीना वर्जित कर दिया गया। नियोगी मानते थे कि केवल मजदूरी बढ़ाने से काम नहीं चलेगा, श्रमिकों को बेहतर जीवन भी देना होगा। श्रमिकों ने नियोगी की बात समझी और शराब से नाता तोड़ना शुरू कर दिया। इससे शराब के ठेकेदार और उनके सरपरस्त नेता तिलमिला उठे। इलाके की सैकड़ों शराब की भट्टियां बेकार हो गयीं। इन दिनों उद्योग मंत्री थे झुमुकलाल भेड़िया। वे नियोगी से खार खाये बैठे थे, क्योंकि सन् '८० में विधानसभा चुनाव में नियोगी समर्थित प्रत्याशी के कारण बड़ी मुश्किल से उन्हें विजय मिली थी। एक तरह से यह उनके लिए राजनैतिक खतरे की पहली घंटी थी।

भेड़िया ने इस खतरे को भांपकर शराब ठेकेदारों की शह पर सर्वप्रथम नियोगी को जिलाबदर करने की नोटिस निकलवायी। लेकिन प्रशासन ने नोटिस मजदूरों के रोष के कारण वापस ले लिया। तब १४ दिसम्बर १९८० को संजय गांधी के जन्मदिन पर नियोगी को नीचा दिखाने के लिए भेड़िया प्रशासन की ताकत झोंककर एक रैली निकालने का यत्न किया। उसी दिन इसके जवाब में नियोगी ने 'शहीद वीरनारायण सिंह स्मृति दिवस' का आयोजन करके अपनी ओर से रैली निकाली। इसमें २५ हजार लाल-नीले गणवेश में सजे स्त्री-पुरुष शामिल थे। यही नियोगी की ताकत का पहला खुला प्रदर्शन था।

अपनी विफलता से बौखलाये भेड़िया ने अपने भतीजे वीरेन्द्र भेड़िया की अध्यक्षता में एक सहकारी समिति बनवायी और भिलाई इस्पात के अधिकारियों पर दबाव डालकर ३० सदस्यों को काम दिलवाया गया। पर नियोगी समर्थकों के कारण जब वे काम न कर सके, तो सैकड़ों की तादाद में संगीनधारी पुलिस तैनात कर दी गयी। मजदूरों का भुगतान रुकवा दिया गया। तरह-तरह के हथकंडे अपनाये जाते रहे। पर इतने से भी काम नहीं बना, तो नियोगी को गिरफ्तार करने का खतरनाक खेल फिर खेला गया। धोखे से नियोगी को दुर्ग बुलाकर गिरफ्तार किया गया और फौरन जेल भेज दिया गया। एक दर्जन उनके समर्थक नेता भी गिरफ्तार कर लिये गये। राजहरा के चप्पे-चप्पे में पांच हजार जवानों का पहरा बैठा दिया गया। पुलिस हिरासत में नियोगी को मारने की साजिश तक रची गयी, लेकिन वे अपनी सतर्कता से बच गये।

परिणाम फिर उलटा रहा, मजदूर भड़क उठे। धरना, जुलूस, प्रदर्शन और गिरफ्तारियों का दौर चल पड़ा। लौह अयस्क की पूर्ति ठप्प हो गयी। नियोगी को नक्सली करार दिया जाने लगा। राजनीति का यह कैसा अजब विरोधाभास था कि भेड़िया जी, जो सन् '७७ के गोलीकांड में नियोगी को समर्थन देने विपक्षी नेता की हैसियत से मैदान में आये थे, उन्हें नक्सली सिद्ध करने पर आमादा नजर आने लगे थे। जबकि हकीकत यह थी कि सन् '६९ में नक्सली आंदोलन से असहमति रखने की वजह से नियोगी ने नया संगठन खड़ा किया था, जिसका झंडा अलग था। सन् '७७ की गोलीबारी के बाद तो वे स्पष्ट रूप से यही कहने लगे थे, "हमें हिंसा नहीं चाहिए। गोलीबारी तो बिल्कुल नहीं। हम शांतिपूर्ण आंदोलन चाहते हैं। गोलीबारी में मजदूरों की जान जाने के सिवा और मिलता क्या है?"

मजदूरों के दबाव के सामने एक बार फिर सरकार को झुकना पड़ा। नियोगी तीन माह बाद जेल से आजाद होकर वापस लौट आये। विपक्ष में रहकर जो दल नियोगी के साथ रहते थे, वे सत्ता की सीढ़ी चढ़ते ही उनके खिलाफ हो जाते थे। मध्य प्रदेश के प्रायः हर मुख्य मंत्री के कार्यकाल में नियोगी शासकों आंखों की किरकिरी बने रहे। श्यामाचरण शुक्ल, सुन्दरलाल पटवा, प्रकाश चंद सेठी, मोतीलाल वोरा, अर्जुन सिंह, वीरेन्द्र कुमार सखलेचा—इन सभी के शासन काल में वे गिरफ्तार हुए और विजय की आशा के साथ अबीर-गुलाल से पुते हुए वापस लौटे। नियोगी ने अपने सार्वजनिक जीवन के दो दशकों में से पांच साल किस्तों में जेलों में काट दिया था। लाठी खाना, बूटों तले रौंदा जाना तो उनके लिए खेल की तरह था।

सफलताओं को बांटना और खतरों से अकेले जूझना नियोगी की आदत थी। सन् '७७ की गोलीबारी में ही अपने ग्यारह साथियों के साथ शहीद होते-होते वे बाल-बाल बचे थे। इस तरह के कई दूसरे हमलों में भी बचते रहे। धमकियां तो उन्हें कई बार मिलीं।

सन् '७७ का ही एक रोमांचकारी किस्सा नियोगी के जेहन में आजीवन नक्श रहा। यह वही समय था, जब पुलिस उनके पीछे पड़ी थी। ३ जून की गोलीबारी के बाद रात डेढ़ बजे मजदूरों की बस्ती से नियोगी पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये। उन्हें पुलिस की जीप में बैठाकर डाला माहर खदानों के जंगल में ले जाया गया। वीरान जगह में जीप रोककर एक पुलिस अफसर उनसे बोला, "नियोगी, अगर तुम भाग निकलना चाहते हो, तो चुपचाप खिसक सकते हो।"

नियोगी को साजिश की गंध आयी। उन्हें लगा कि पुलिस योजनाबद्ध तरीके से मारकर यह सिद्ध करना चाहती है कि फरार होने की कोशिश में मारा गया। नियोगी पुलिसवालों की बातों को अनसुनी करके जीप में बैठे रहे। साजिश धरी की धरी रह गयी, वरना नियोगी की कहानी शायद उसी दिन खत्म हो जाती।

इस तरह का हादसा नियोगी के जीवन में पहली और अंतिम बार नहीं हुआ था। कुल साढ़े चार दशकों की जिंदगी में पांच साल जेल में बिताते हुए अनेक बार उन्होंने इस तरह की स्थितियों का बूटों, राइफलों के बटों और लाठियों के रूप में सामना किया था। फिर भी उनकी यह मान्यता भंग नहीं हुई कि मजदूर आंदोलनों में हिंसा का प्रवेश मूर्खता है। कठिन से कठिन परीक्षाएं देकर भी वे अपने इरादों से टस से मस नहीं होना चाहते थे। यही औरों के लिए मुश्किल बात थी।

यों तो भिलाई के श्रमिक जगत में नियोगी का सन् '६० से ही परोक्ष-अपरोक्ष प्रभाव बना हुआ था, लेकिन वे यहां सीधे संघर्ष में फरवरी '८६ में आये। भिलाई में नये आंदोलन की शुरुआत उन्होंने ट्रक ड्राइवर-क्लीनरों को लामबंद करके की थी। इस दौरान उन पर हमला भी हुआ, पर वे हटे नहीं। धीरे-धीरे उनका परचम औद्योगिक क्षेत्र के उद्योगपति शिविरों में धावा बोलने लगा। अंत में विजय नियोगी के हाथ लगी। २७ जुलाई '८६ को जामुल सीमेंट फैक्टरी में जो समझौता हुआ, उसके तहत प्रत्येक ड्राइवर को तीन से लेकर चार सौ रुपये तक का लाभ पहुंचा।

इससे पहले सन् '८७ में भिलाई के उद्योगपतियों का नियोगी से उस वक्त साबका पड़ा था, जब बी० के० तथा बी० एस०, यानी बालकिशन और बख्तावर सिंह को राजहर लौह अयस्क के आटोमेटिक कासिंग प्लांट का १४ करोड़ का ठेका मिला था। यह ठेका खदानों के मशीनीकरण का था, जिसके नियोगी सख्त विरोधी थे। राजहरा क्षेत्र में कुल आठ खदानें हैं—राजहरा, कोकान, दल्ली, मयूरपानी, झरनदल्ली, आरा डोंगरी, दानी टोला और महामाया। इन खदानों में कोई चालीस हजार मजदूर कार्यरत हैं। इनमें से तीस हजार मजदूर सीधे-सीधे नियोगी से जुड़े थे और उनके एक इशारे पर जान तक देने को तैयार थे।

इन खदानों के यंत्रीकृत किये जाने का विरोध करते हुए नियोगी ने सवाल उठाया कि खदानों में कार्यरत मजदूर आखिर कहां जाएंगे? उन्होंने खदान प्रबंधक को चुनौती दी कि वह साबित करे कि मजदूरों ने लक्ष्य से कम उत्पादन किया, या संयंत्र के संचालन में अवरोध खड़ा किया। उनका कहना था कि यदि ऐसा नहीं है, तो खदानों का यंत्रीकरण बेमानी होगा। इस मामले में नियोगी को ठेका लेनेवाली कम्पनियों के अलावा इस्पात संयंत्र प्रबंधन तथा शासन से भी जूझना पड़ा। इस त्रिकोणीय हमले से जूझने के लिए आठ महीने तक नियोगी आंदोलनरत रहे। शासन अपना निर्णय वापस लेने को तैयार नहीं था। पर अंततः पलड़ा नियोगी के पक्ष में झुका। समझौता यह हुआ कि यंत्रीकरण से बेकाम हुए मजदूरों को अन्यत्र क्षमतानुसार काम दिया जाएगा और मजदूरों को स्थायी किया जायेगा। इस आंदोलन में किसी आंशिक विजय के साथ ही नियोगी ने उद्योगपतियों को उनकी मांद में घुसकर ललकारने का निर्णय लिया और फिर भिलाई चले आये। भिलाई इस्पात कारखाने में प्रति वर्ष ४२ लाख टन कच्चे लोहे का उत्पादन होता है। भिलाई से मध्य प्रदेश के सात जिले रायपुर, बिलासपुर, दुर्ग, राजनांदगांव, रायगढ़, सरगुजा और बस्तर सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं। भिलाई इस्पात कारखाने में मजदूरों तथा दीगर कामगारों को संतोषप्रद वेतन मिल रहा है। लेकिन इस संयंत्र पर आश्रित जो २०० छोटी-बड़ी रासायनिक, सीमेंट और इंजीनियरिंग औद्योगिक इकाइयां हैं, उनके हजारों मजदूरों की हालत ठीक नहीं है। वे स्वयं को बेहद असुरक्षित और शोषित महसूस करते रहे हैं। इन उद्योगों से जुड़े कोई २५००० मजदूरों की शिकायत है कि उन्हें नियमित नहीं किया जाता। पहचानपत्र नहीं दिया जाता। शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने पर मजदूरों को मनमाने ढंग से हटा दिया जाता है, मारा-पीटा जाता है, वेतन कम मिलता है, स्वास्थ्य सुविधाएं नहीं हैं तथा दूसरी तरह की और भी कई मुश्किलें हैं।

इन सभी समस्याओं को लेकर नियोगी ने भिलाई और उसके आसपास के मजदूरों की आवाज बुलंद करने के लिए प्रगतिशील इंजीनियरिंग श्रमिक संघ, छत्तीसगढ़ केमिकल मिल्स मजदूर संघ और प्रगतिशील सीमेंट श्रमिक संघ नामक संगठन सक्रिय थे। इनमें सबसे बड़ी यूनियन इंटक की थी। इसके अलावा, सीटू, हिन्द मजदूर सभा और एटक की यूनियनें थीं। इन यूनियनों ने नियोगी के द्वारा गठित संगठनों से उस वक्त खतरा महसूस किया, जब २५ हजार श्रमिक उनके झंडे तले खड़े नजर आये। पुरानी यूनियनों से ऊब गये मजदूरों को नियोगी के रूप में आशा की किरण दिखाई देने लगी। मजदूरों का मानना था कि पुरानी यूनियनें उद्योगपतियों की 'जेबी' यूनियन बन गयी हैं।

नियोगी का कहना था कि उस क्षेत्र की औद्योगिक इकाइयों में कार्यरत एक लाख मजदूरों की तरक्की उनका लक्ष्य है। नियोगी ने छंटनी प्रथा पर भी कड़ा विरोध प्रकट किया। नियोगी ने ऐसे अनेक मामले ढूंढ़े, जिनमें श्रमिकों को दुर्घटना का मुआवजा नहीं मिला था। नियोगी के प्रयासों से मजदूरों में जो जागृति आयी, उससे भिलाई के मुख्यतः सिम्प्लेक्स उद्योग समूह, बी० ई० सी० उद्योग समूह, केड़िया डिस्टिलरी तथा भिलाई वायर्स प्रभावित हुए।

केड़िया डिस्टिलरीज के मालिक कैलाशपति केड़िया, सिम्प्लेक्स उद्योग समूह के मूलचंद शाह, अरविंद शाह, बी० ई० सी० इंजीनियरिंग के जैनबंधु और भिलाई वायर्स का खेतावत परिवार नवधनाढ्यों में माने जा सकते हैं। इन सभी की गिनती मध्य प्रदेश के स्थापित औद्योगिक घरानों में होने लगी है। सिम्प्लेक्स उद्योग समूह की भिलाई के आसपास उरला और टेडेसरा ग्रामों में सात यूनिट हैं। यह उद्योग समूह अपने लौह निर्मित उत्पादों को रूस तथा जापान में निर्यात करता रहा है। इधर यह समूह चीन के सहयोग से २२० करोड़ लागत का स्पंज आयरन उद्योग डालने की योजना बनाये था, जो अपने अंतिम चरण में थी।

केड़िया डिस्टिलरी की दो यूनिटें हैं। इसी तरह बी०ई०सी० इंजीनियरिंग की भी दो यूनिटें हैं। इन सभी उद्योगपतियों के यहां काम कर रहे मजदूर नियोगी के आह्वान पर अपनी मांगों को लेकर हड़ताल पर चले गये। इनमें से केड़िया उद्योग समूह के कैलाशपति केड़िया ने नियोगी से आंशिक समझौता कर लिया, पर कुछ मुद्दों पर मतभेद बरकरार थे। सिम्प्लेक्स तथा अन्य उद्योगों से नियोगी कोई समझौता नहीं कर पाये।

भिलाई में नियोगी को दोहरे संघर्ष का सामना करना पड़ रहा था। एक तरफ मान्यताप्राप्त यूनियनें स्वयं के अस्तित्व पर नियोगी को खतरे के रूप में देख रही थीं, दूसरी तरफ उद्योगपतियों को नियोगी शत्रु नजर आ रहे थे। नियोगी ने इंटक के बाद एटक को नीचे धकेल दिया था। इससे दोनों बड़ी यूनियनें उन्हें नीचा दिखाने पर आमादा थीं। इस तरह नियोगी के मामले में उद्योगपतियों और दूसरी यूनियनों के लोग भीतर-भीतर एक होकर मुकाबले में उठ खड़े हुए। प्रशासन भी इस गठजोड़ में शरीक नजर आने लगा। इस बीच केड़िया डिस्टिलरी में हड़ताल पुनः प्रभावी होती नजर आने लगी।

भिलाई की अपनी यूनिटों के इर्द-गिर्द श्रमिक आंदोलनों का साया मंडराता देखकर केड़िया ने महाराष्ट्र की अपनी इकाई को चालू कर दिया। दूसरी तरफ नियोगी के आंदोलन से प्रभावित अन्य उद्योगपतियों ने केड़िया के कंधों पर अपनी बंदूक टिका दी। इसकी वजह थी उनकी सत्ता से निकटता। जैसा कि कहा जाता है, केड़िया के मुख्यमंत्री पटवा से तो मधुर संबंध थे ही, भाजपा में भी उनकी गहरी पैठ थी, क्योंकि १९९० के विधानसभाओं के चुनाव का खर्च उन्होंने उठाया था तथा लोकसभा चुनाव के दौरान भी पार्टी की मदद की थी। केड़िया के बहाने उद्योगपतियों को सरकार की कृपा आसानी से हासिल हो रही थी। १४ सितम्बर १९९० को नियोगी ने पहली बार विशाल जुलूस निकाल कर श्रमिक शक्ति का अहसास कराया, तो उद्योगपतियों ने भी पुलिस प्रशासन को ढाल बनाकर यह सिद्ध कर दिया कि उन पर शासन का वरद हस्त है।

नया साल लगते-लगते नियोगी का आंदोलन तीव्र होता गया। उद्योगपतियों ने 'बाहुबली' मजदूरों की व्यवस्था करके एहतियात का पुख्ता बंदोबस्त कर लिया। इसके बाद आंदोलन के दौरान झड़पों और संघर्षों की अनेक घटनाएं हुईं। इन घटनाओं में पुलिस उद्योगपतियों का पक्ष लेती नजर आयी। मजदूरों की रपटों पर पुलिस ने कोई कार्रवाई नहीं की। २५ जून को तो उद्योगपति-पुलिस साठगांठ का रंग खुलकर सामने आ गया। उस दिन पुलिस ने शांतिपूर्ण जुलूस निकाल रहे श्रमिकों पर लाठी चार्ज किया। इस घटना को लेकर पुलिस की भूमिका की तीव्र आलोचना हुई, जगह-जगह चक्का जाम हुए, और औद्योगिक क्षेत्र में धारा १४४ लागू कर दी गयी।

इस बीच एक हादसा और हुआ। मार्च '९१ में आर०के० इंडस्ट्रीज में आग लग गयी। यहां केड़िया ग्रुप के डिब्बे बनते थे। इस मामले में नियोगी समर्थक आठ लोग गिरफ्तार हुए। इस अग्निकांड को लेकर नियोगी का कहना था कि आग मजदूरों को फंसाने की साजिश के तहत लगायी गयी। इस अग्निकांड को लेकर जो रहस्योद्घाटन हुए, उनसे यह सिद्ध हो गया कि वाकई साजिश के तहत लगायी गयी थी। इस बहाने नियोगी को भी लम्बे समय तक जेल में ठूंस रखने की योजना थी, ताकि उनकी अनुपस्थिति में आंदोलन को तोड़ा जा सके। पर समय रहते इस साजिश से नकाब तो उठ गया, लेकिन रहस्योद्घाटन करनेवाले भिलाई के पत्रकार डा० देबीदास गुंडों के हमले के शिकार हुए।

इसी समय नियोगी ने एक बयान देते हुए मुख्य मंत्री सुंदरलाल पटवा को चुनौती दे दी कि वे दुर्ग से आकर चुनाव लड़ें। यहां गौरतलब है कि नियोगी ने लोकसभा चुनाव में अलग-अलग स्थानों से अलग-अलग पार्टियों के प्रत्याशियों को समर्थन दिया था। उन स्थानों से भाजपा प्रत्याशियों को हारना पड़ा था। शायद यही वजह थी कि भाजपा नियोगी से खार खाये थी।

इन विवादों से दिक्कत तो नियोगी को काफी हुई, लेकिन उनका कद बढ़ता चला गया। मजदूर उनके झंडे तले संगठित होते गये। जून '९१ में अचानक नियोगी एक पेशी में हाजिर न होने के एक मामूली मामले को लेकर गिरफ्तार कर लिये गये। इस गिरफ्तारी को भी एक साजिश बताते हुए मजदूरों ने तीखा विरोध किया।

२० दिन बाद नियोगी छोड़ दिये गये। इसके फौरन बाद १९ जुलाई को नियोगी को जिलाधिकारी दुर्ग ने एक नोटिस भेजा कि क्यों न आपको एक साल के लिए पांच जिलों की सीमाओं से बाहर कर दिया जाये। यह नोटिस कुछ नये-पुराने मामलों को लेकर भेजी गयी थी, जिनके साक्ष्य भी सही ढंग से एकत्र नहीं किये जा सके थे। इस आदेश को चुनौती देते हुए नियोगी ने म० प्र० उच्च न्यायालय में याचिका दायर कर दी। उनका तर्क था कि यह संविधान में वर्णित मानव अधिकार एवं मानव सम्मान के विरुद्ध है। नियोगी ने यह आरोप भी लगाया कि सत्तारूढ़ भाजपा के कहने पर उन्हें नोटिस दी गयी, जबकि विपक्ष में रहते हुए स्वयं श्री पटवा ने उनकी प्रशंसा की थी। नियोगी ने यह भी कहा कि वे सरकार की कार्रवाई के विरोध में मुख्यमंत्री के गृह जिले में आंदोलन करेंगे। नियोगी की याचिका स्वीकार करते हुए उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने जिलाबदर के आदेशों के क्रियान्वयन पर रोक लगा दी। इस तरह एक और दांव खाली गया। नियोगी दोबारा ताल ठोंककर मैदान में आ डटे।

इसके एक महीने बाद ११ सितम्बर को नियोगी दस सांसदों सहित राष्ट्रपति से मिले और उन्हें एक ज्ञापन दिया, जिसमें कहा गया था कि हम कोई सुविधा नहीं, सिर्फ जीने का अधिकार मांग रहे हैं। ज्ञापन में केड़िया डिस्टिलरी, सिम्प्लेक्स ग्रुप, बी० ई० सी० ग्रुप, खेतावत ग्रुप आदि उद्योग समूहों का जिक्र करते हुए कहा गया था कि इन उद्योगपतियों द्वारा मजदूरों का संगठन तोड़ने के लिए उन पर हमले करवाये जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में मजदूरों और नेताओं की जान का खतरा है। ज्ञापन में यह भी बताया गया था कि छत्तीसगढ़ डिस्टिलरीज तथा सिम्प्लेक्स के मालिकों ने मनीराम की हत्या करायी। रवीन्द्र शुक्ला, जगदीश वर्मा, पुरुषोत्तम आदि पर प्राणघातक हमले हुए। इसी तरह उमाशंकर राय, एस० के० सिंह, हलधर तथा सुकलाल पर भी प्राणघातक हमले हुए। लेकिन पुलिस ने अपराधियों को गिरफ्तार न करके उन्हें संरक्षण दिया। अतः उद्योगपतियों की खूनी हरकतों पर रोक लगाकर सभी घटनाओं की सी० बी० आई० जांच करायी जाये।

राष्ट्रपति ने ज्ञापन लेकर आश्वासन दिया कि वे प्रधानमंत्री से बात करेंगे तथा राज्यपाल के माध्यम से आवश्यक कार्रवाई के लिए मुख्यमंत्री तक सूचना भिजवाएंगे। नियोगी वरिष्ठ भाजपा नेता आडवाणी से भी मिले। राजमाता सिन्धिया भी वहां उपस्थित थीं। १७ सितम्बर तक नियोगी वी० पी० सिंह, जार्ज फर्नांडीज, शीबू सोरेन, ए० के० राय और श्रम मंत्रालय के अनेक अधिकारियों से मिले तथा उन्हें संभावित खतरे से अवगत कराया। पत्रकारों से भी उन्होंने हत्या के षड्यंत्र की बात बतायी। दिल्ली से भोपाल आकर २० और २१ सितम्बर को नियोगी ने मुख्यमंत्री से भी मिलने की कोशिश की, पर वे नहीं मिले।

उसी दिन, उन्होंने केड़िया द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में हिस्सा लिया। नियोगी को श्रम मंत्री से मिलकर वापस लौट जाना पड़ा। नियोगी गत एक वर्ष से जो आंदोलन भिलाई में छेड़े हुए थे, उसने उद्योगपतियों की चूलें हिला दी थीं। खासकर, शाह ग्रुप का सिम्प्लेक्स उद्योग समूह चौपट हो गया था। जर्मनी-यूगोस्लाविया के उसके करोड़ों के ठेके निरस्त हो गये थे।

भिलाई में नियोगी के पैर जमने का मतलब था, छत्तीसगढ़ की समूची श्रमिक राजनीति पर उनका एकछत्र अधिकार स्थापित हो जाना, जो उद्योगपतियों के साथ-साथ वहां कार्यरत यूनियनों तथा राजनैतिक दलों के लिए चिन्ता की बात थी। राजहरा क्षेत्र के अनुभवों से सिद्ध था कि नियोगी की इजाजत से ही उस क्षेत्र में राजनेता अपनी राजनीति चला पाते थे। इन सभी भावी खतरों को भांपकर ऐसा लगता है कि एक खतरनाक काकस ने नियोगी को सदा के लिए उखाड़ फेंकने में अपनी भलाई समझी। नियोगी को उखाड़ फेंकने का एक ही तरीका था कि उन्हें सदा के लिए मौन कर दिया जाये। यही अंतिम तरीका अपनाया भी गया। २७ सितम्बर को भोपाल से वापसी के सात दिन बाद गोली मारकर उनकी हत्या कर दी गयी।

२ अक्टूबर को दल्ली राजहरा पुलिस स्टेशन में नियोगी की धर्मपत्नी आशा नियोगी ने भिलाई के पांच बड़े औद्योगिक घरानों के खिलाफ नामजद रिपोर्ट लिखा दी। इसी रिपोर्ट से मिलता-जुलता एक ज्ञापन भी मध्य प्रदेश के राज्यपाल कुंवर महमूद अली खां को सौंपा।

श्रीमती आशा नियोगी ने राज्यपाल को सौंपे विस्तृत ज्ञापन में यह भी कहा कि 'मैं पूर्णतः विश्वस्त हूं कि भिलाई के पांच औद्योगिक घरानों के मालिक कैलाशपति केड़िया, विनय केड़िया (केड़िया डिस्टलरीज), मूलचंद शाह, नवीन शाह, हीरा भाई शाह (सिम्प्लेक्स समूह), बी० आर० जैन, अरविंद जैन (भिलाई इंजीनियरिंग कारपोरेशन) एवं एच० पी० खेतावत (भिलाई वायर्स) मेरे पति की हत्या के लिए जिम्मेदार हैं। इस सम्बन्ध में प्रथम सूचना रिपोर्ट पुलिस में दर्ज कराई जा चुकी है।'

एक ओर उद्योगपतियों का नाम इस मामले को लेकर सुर्खियों में उछल रहे थे, तो दूसरी ओर सम्बन्धित उद्योगपतियों की टोलियां सफाई देती फिर रही थीं। उन्होंने पहले भिलाई, फिर भोपाल में इंडस्ट्रीज एसोसिएशन के बैनर तले पत्रकार वार्ताएं आयोजित कीं और अपना पक्ष रखते हुए कहा कि यदि उद्योगपतियों पर ही शक किया जाता रहा, तो सम्भव है, असली अपराधी बच निकलें। पत्रकार वार्ता में उद्योगपतियों की अगुवाई कर रहे बी० ई० सी० उद्योग समूह के डायरेक्टर बलवंत राय जैन का एसोसिएशन के अध्यक्ष की हैसियत से कहना था कि आशा नियोगी ने रपट लिखायी है, वैसी तो कोई भी लिखा सकता है। उन्होंने अखबारों पर भी उद्योगपतियों के खिलाफ शंका का जाल बुनने का आरोप लगाया और कहा कि प्रेस ने उन्हें कठघरे में खड़ा कर दिया है। पत्रकार वार्ता में उद्योगपति शाह, केड़िया तथा कुलदीप कुमार उपस्थित थे।

उद्योगपति जब यह सफाई दे रहे थे, तब तक शायद काफी देर हो गयी थी। उस समय तक दो ऐसे पत्र प्रकाश में आ गये थे, जिन्हें नियोगी के किसी शुभचिंतक ने चार महीने पहले उनके नाम भेजा था। दोनों पत्र नियोगी द्वारा संचालित छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ की ओर से राजहरा थाने में जमा कराये गये थे। लेकिन उन पर पुलिस ने समय रहते ध्यान देने की जरूरत नहीं समझी थी। इन दो में से पहला पत्र, जो नियोगी को २९ अप्रैल '९१ को मिला था, इस प्रकार था:

"इस पत्र के माध्यम से मैं आपको सावधान कर देना चाहता हूं कि आपकी हत्या करवाने की तैयारी पूरी करके सिम्प्लेक्स ग्रुप का चन्द्रकान्त शाह विदेश यात्रा पर रवाना हो गया है। आपने पूर्व में रायपुर से प्रकाशित दैनिक में अपनी

भेंटवार्ता में ऐसी आशंका जाहिर की थी। इसलिए सिम्प्लेक्स के द्वारा चन्द्रकान्त की विदेश यात्रा का आयोजन किया गया है। चन्द्रकान्त के द्वारा ही सिम्प्लेक्स ने ये काम कुछ लोगों को सौंपा है। कुछ दिनों पूर्व अत्याधुनिक हथियारों की खरीदारी भी नेपाल जाकर की गयी है और उन्हें चन्द्रकान्त की गैरमौजूदगी में आप पर हमला करने के लिए निर्देशित किया गया है। इन आदमियों से लेन-देन का मामला भी चन्द्रकान्त के माध्यम से ही तय हुआ है। इन लोगों में यदि और किसी की तैयारी की जानकारी मिली, तो पत्र द्वारा सूचित करूंगा।" पत्र के अंत में लिखा है—एक शुभचिंतक।

छत्तीसगढ़ श्रमिक संघ के कार्यालय सचिव के० एस० साहू की ओर से राजहरा के थाना प्रभारी के अलावा पत्र की फोटो कापी दुर्ग के पुलिस अधीक्षक को भेजी गयी थी। शिकायत पर तत्काल कार्रवाई का अनुरोध भी किया गया था, पर कुछ हुआ नहीं।

दूसरा पत्र उनकी हत्या से तीन महीने पहले ही मिला था। यह पत्र दो जुलाई को लिखा गया था। उसमें लिखा था—"श्रीमान नियोगी साहब, नमस्कार। मैं फिलहाल अपने परिचय के बारे में कुछ नहीं बताऊंगा। जो बता रहा हूं, वे आपके काम की बातें हैं। आपको इतना तो मालूम होगा कि आपके दुश्मन बहुत हैं और आपसे लीडरशिप छीनना चाहते होंगे। इसी सिलसिले में आपके जीवन का ठेका हो चुका है। रकम के बारे में ठीक-ठीक अनुमान नहीं जानता, फिर भी लगभग डेढ़ लाख तय हुआ है। मैं उस आदमी का नाम जानता हूं, पर मैं यह नहीं बता सकता। हो सकता है कि यह खत आप तक न पहुंचे और अगर यह खत आप तक पहुंच गया, तो आप अपनी सुरक्षा के बारे में अवश्य ध्यान दें और मैं समझूंगा कि सच्चे भारतीय होने के कारण अपना फर्ज अदा कर दिया।

"पत्र प्राप्ति के संकेत के तौर पर नवभारत अखबार में आप एक विज्ञापन और अपना फोटो हस्ताक्षर सहित छपायें। जब मुझे यकीन हो जाएगा कि पत्र आपको मिल गया है, तो मैं उस आदमी का नाम बता दूंगा, जिसने आपकी जिन्दगी का ठेका लिया है, और आप १० जुलाई तक विज्ञापन देंगे। शेष आपकी लम्बी उम्र की शुभकामना के साथ पत्र समाप्त करता हूं। आपका शुभचिन्तक भारतीय नागरिक।"

नियोगी की हत्या के बाद, इन्हीं दोनों पत्रों को प्रेस के लिए जारी करते हुए उनके मित्र राजेन्द्र सायल ने इस बात पर अचरज जताया कि शासन और प्रशासन इतनी सहजता से उनकी जान के खतरे की बात कैसे नकार रहा है। उनका कहना था कि नियोगी की हत्या में न सिर्फ उद्योगपति और माफिया गिरोह शामिल हैं, बल्कि उन्हें संरक्षण देनेवाले राजनीतिज्ञों की भी इस षड्यंत्र में भागीदारी है। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के रवीन्द्र ठाकुर का आरोप तो यह था कि जिस रात नियोगी की हत्या हुई, उस रात एक उद्योगपति का परिवार भिलाई स्थित अपने निवास से नदारद था।

आरोप-प्रत्यारोप काफी मुखर, तीखे और स्पष्ट थे। अज्ञात व्यक्ति के पत्र में एक उद्योगपति चन्द्रकान्त शाह का जिक्र आ ही गया था और यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि नियोगी हत्या की साजिशों का सिलसिला महीनों से जारी था। इसके लिए विदेशी हथियार खरीदे गये थे और भाड़े के हत्यारों को काम सौंपा गया था। पत्रों में वर्णित तथ्यों के अलावा एक और सबूत उद्योगपतियों के विरुद्ध जा रहा था। यह सबूत था कि आडियो-वीडियो कैसेट, जिसमें स्वयं नियोगी ने उन लोगों के नाम गिनाये थे, जो उनका कत्ल कर या करवा सकते थे। यह कैसेट भी छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की ओर से बतौर साक्ष्य पुलिस को तत्काल सौंप दिया गया। लेकिन पुलिस जांच की गति काफी धीमी नजर आयी।

पांच दिनों तक तो इस मामले के जांच अधिकारियों की अदला-बदली ही चलती रही। हंगामा ज्यादा बढ़ता दिखाई दिया, तो तीन अक्टूबर को राज्य सरकार ने केन्द्रीय गृह मंत्रालय से पत्र लिखकर आग्रह किया कि यह मामला सी० बी० आई० को सौंप दिया जाए। इस दौरान पुलिस का मौन बदस्तूर जारी रहा।

नियोगी की हत्या के विरोध में जैसा जन आंदोलन खड़ा हुआ, वैसा पहले कभी नहीं देखा गया। जो राष्ट्रीय दल आजीवन मैदानी राजनीति में नियोगी के विरोधी बने रहे, उन दलों के नेताओं ने इस हत्याकांड को दुखद और सामाजिक आंदोलनों को हिंसात्मक तरीके से कुचलनेवाला बताया। नेताओं के अलावा देश भर के मजदूर संगठनों और समाजसेवियों ने इस घटना के खिलाफ आंदोलन में भागीदारी अदा की। बंधुआ मजदूर मुक्ति मोर्चा के स्वामी अग्निवेश तथा नर्मदा बचाओ आंदोलन की नेत्री मेधा पाटकर ने तो एक तरह से आंदोलन की कमान ही थाम ली। शंकर गुहा नियोगी की पत्नी आशा नियोगी, पुत्री क्रांति, मुक्ति तथा पुत्र जीत भी इस आंदोलन में पीछे नहीं रहे। उन्होंने अपने आंसुओं को पोंछ लिया था। नियोगी की पन्द्रह वर्षीया पुत्री क्रांति का तो जनसभाओं में पुरजोश अंदाज में यही कहना था—"एक नियोगी के शहीद होने से पहले तीन नियोगी पैदा हो गये हैं, जो उनके दिखाये रास्ते पर चलकर आंदोलनों का नेतृत्व करेंगे और उनकी कुर्बानी बेकार नहीं जाने देंगे।"

जहां तक पुलिस जांच का सवाल है, जैसे-जैसे वक्त बीत रहा था, उसके विस्तार का सिलसिला जारी था। पुलिस उन वाहनों में दिलचस्पी ले रही थी, जो हत्या की रात सक्रिय थे। भिलाई सम्भाग के पुलिस महानिरीक्षक ए० एन० सिंह का कहना था कि हमें उन हत्यारे हाथ की तलाश है, जिसने गोली चलायी थी। यदि उस हाथ का पता लग गया, तो साजिश के सूत्रधारों का भी पता लग जायेगा। यही दुर्ग के एस० पी० सुरेन्द्र का भी कहना था। उनके मुताबिक सैकड़ों लोगों से पूछताछ की जा रही थी और सबूत ढूंढे जा रहे थे।

१४ अक्टूबर को पुलिस के विशेष जांच दल ने नियोगी हत्याकांड के षड्यंत्र का पर्दाफाश करते हुए सिम्प्लेक्स उद्योग समूह के भागीदार चन्द्रकान्त शाह, ज्ञानप्रकाश मिश्रा, अभय सिंह, अवधेश राय तथा पल्टन सिंह को जिम्मेदार ठहराते हुए ज्ञानप्रकाश मिश्रा एवं अवधेश राय को धारा ३०२ तथा २०१ भा० दं० वि० के तहत गिरफ्तार कर लिया। इनमें से ज्ञानप्रकाश मिश्रा भाजपा नेता प्रभुनाथ मिश्रा का भाई था। चन्द्रकान्त शाह, अभय सिंह तथा पल्टन सिंह पुलिस द्वारा फरार घोषित किये गये।

पुलिस सूत्रों के मुताबिक, हत्या का षड्यंत्र मुख्य रूप से चन्द्रकान्त शाह और ज्ञानप्रकाश मिश्रा ने रचा था। बाद में इस योजना में अवधेश, पल्टन तथा अभय सिंह को शरीक किया गया था। ये लोग कई दिनों से लगातार नियोगी की गतिविधियों पर नजर रखते हुए थे और मौके की तलाश में थे।

चन्द्रकान्त शाह सिम्प्लेक्स उद्योग समूह के भागीदार होने के अलावा ओसवाल आयरन और ओसवाल स्टील नामक दो उद्योगों का संचालन भी करते थे। वे सिम्प्लेक्स समूह के शाह बंधुओं के सौतेले भाई थे। चन्द्रकान्त गत एक वर्ष से नियोगी द्वारा चलाये जा रहे आंदोलन से बेहद प्रभावित थे। उनकी छावनी चौक स्थित ओसवाल स्टील इंडस्ट्रीज हड़ताल के कारण बंद हो गयी थी तथा ओसवाल आयरन की हालत भी काफी डावांडोल थी।

ज्ञानप्रकाश मिश्रा देवरिया (उत्तर प्रदेश) के एक गांव का रहनेवाला है। यह अजब संयोग है कि केड़िया डिस्टिलरीज के मालिक कैलाशपति केड़िया भी देवरिया जिले के उसी गांव के हैं, जहां का ज्ञानप्रकाश है। इस नाते केड़िया भी ज्ञानप्रकाश से अपरिचित नहीं हैं। वैसे ज्ञानप्रकाश की चन्द्रकान्त शाह से मित्रता चर्चित रही है। पर ज्ञानप्रकाश इस मैत्री के बावजूद चन्द्रकान्त शाह के कारखाने में बतौर कार ड्राइवर काम करता था।

कथित अभियुक्त अभय सिंह भिलाई इस्पात कारखाने के कोक ओवेन में कार्यरत था। वह भूतपूर्व सैनिक था। २६ वर्षीय अवधेश राय भिलाई स्थित मौर्या टाकीज में साइकिल स्टैंड चलाता था। इस व्यक्ति से भी ज्ञानप्रकाश की गहरी दोस्ती थी। पल्टन सिंह भी देवरिया (उत्तर प्रदेश) का रहनेवाला है। वह कुछ वर्षों से भिलाई में था। यहां वह एक औरत के साथ रहता था। उसे

नियोगी का निजी जीवन

बंगाल से आकर शंकर गुहा नियोगी ने दूर-दूर तक फैला हुआ जो नया संसार रचा था, उसके दो पहलू थे—एक पारिवारिक और दूसरा सामाजिक। नियोगी का सामाजिक दायरा बहुत विस्तृत था, किन्तु पारिवारिक जीवन केवल पत्नी आशा, पुत्रियां क्रांति और मुक्ति तथा पुत्र जीत तक सीमित था। आशा से क्रांति, जीत और मुक्ति तक नियोगी के पारिवारिक जीवन का सफरनामा संघर्षों और कठिनाइयों से भरा हुआ था।

धवल वस्त्रों में सिमटी, शोकग्रस्त आशा नियोगी उन पुराने दिनों को याद करके अक्सर फफक उठती हैं, या मूर्च्छित हो जाया करती हैं। उन्हें अच्छी तरह याद हैं वे दिन, जब नियोगी दानी टोला खदान में काम करते हुए उनके करीब आये थे।

आशा कहती हैं, "उन्होंने जीवन का कोई सुख नहीं भोगा। पाई-पाई गिनकर खर्च करते रहे। मेरे लिए तो वे टीवी के समाचार में दिखाई जानेवाली झलकियों की तरह थे। पलभर के लिए आते थे और महीनों के लिए दूर चले जाते थे। पर इसका मुझे कोई दुख नहीं था, क्योंकि वे जो लड़ाई लड़ रहे थे, उसके लिए उनका घर से दूर रहना जरूरी था।

बच्चों के जन्म को याद करते हुए आशा ने बताया, "सभी के नाम उन्होंने खुद रखे थे। क्रांति पैदा हुई थी, तब उनका आंदोलन शुरू हुआ था और वे जेल में थे। इसलिए उसका नाम क्रांति रखा था। फिर जीत पैदा हुआ, तब उन्हें मजदूर आंदोलन में बड़ी सफलता मिली थी। उन्होंने कहा—'क्रांति के बाद हमारी जीत हुई, इसलिए लड़के का नाम जीत रखेंगे।' मुक्ति के जन्म पर उनका कहना था—'यह विजय के बाद मिली मुक्ति की प्रतीक है।'

बच्चों का नामकरण उन्होंने शोषणमुक्त समाज की अवधारणा को लेकर किया था।

आशा ने बताया, "बच्चों के भविष्य और उनके खान-पान को लेकर वे कभी चिंतित नहीं रहे। कहते थे, 'सब अपने आप हो जायेगा। वे बड़े होकर खुद रास्ता ढूंढ़ लेंगे।'

नियोगी घर में अक्सर यूनियन की बातें करने से कतराते थे। घर के लिए तो उनके पास न वक्त था न पैसा। एक बार कहीं से उन्हें पच्चीस हजार मिला, तो उसे यूनियन के खाते में यह कहकर डाल दिया कि इससे बेरोजगारों को कोई रोजगार देंगे। घर के लिए तो आठ सौ का खर्चा तय कर रखा था। उससे ज्यादा रुपये नहीं देते थे। सामान की लिस्ट खुद बनाते थे। बच्चों की फीस और कपड़े उन्हीं रुपयों में बनते थे।

अपनी अंतिम मुलाकात को याद करते हुए श्रीमती आशा ने बताया, "दिल्ली से लौटे, तब मैंने पूछा कि क्या फैसला हुआ? बोले, 'होगा, पर धीरे-धीरे।' फिर भिलाई चले गये, तो वापस नहीं लौटे। उस समय उन्होंने जान के खतरे का आभास भी दिया था। २४ सितम्बर को वे अपने साथ एक बढ़ई ले गये थे कि खिड़की ठीक करवा लेंगे। खिड़की का पल्ला खराब था। खिड़की ठीक होती, इससे पहले ही उन्हें मार डाला गया।"

आशा कहती हैं, "संगठन की लड़ाई खत्म नहीं होगी। यह जारी रहेगी। जो रास्ता उन्होंने दिखाया है, उस पर हम बढ़ते रहेंगे। ●

पुलिस कई बार पकड़ चुकी थी।

जहां तक पुलिस केस का सवाल है, चन्द्रकान्त शाह भी इससे मुक्त नहीं थे। बताया जाता है कि सन् १९८८ में भिलाई के गुरुतेज उर्फ गेरा की हत्या के सिलसिले में चन्द्रकान्त के इशारे पर जिला गोरखपुर ग्राम भजही के जनार्दन शुक्ला तथा थाना गगहा ग्राम भरैया के सत्येन्द्र सिंह को सुपारी देकर भिलाई लाया गया था। दोनों व्यक्ति अपने इलाके के कुख्यात मुजरिम थे। वे भिलाई के अजंता होटल में ठहराये गये थे।

दोनों लोग गुरुतेज उर्फ गेरा की हत्या को अंजाम दे पाते, उससे पूर्व रायपुर से मुन्ना तिवारी नामक मुजरिम की तलाश में आये एक पुलिस दल ने होटल में छापा मारा और संदेह के आधार पर दोनों को उस वक्त धर दबोचा जब उन्होंने पुलिस दस्ते पर हमला कर दिया। दोनों ने पकड़ जाने पर ज्ञानप्रकाश मिश्रा और चन्द्रकान्त शाह का नाम लिया। इस मामले में ज्ञानप्रकाश को पांच महीने जेल में बिताने पड़े थे, जबकि चन्द्रकान्त जमानत कराने में कामयाब रहे थे। चन्द्रकान्त पर पुलिस को राजनांदगांव फार्म हाउस में सन् '८६ में हुए सिम्प्लेक्स समूह के मैनेजर बावला दम्पति की हत्या के अलावा सन् '९० में हुए अनुराधा चौधरी की हत्याकांड में भी शरीक रहने का शक हुआ था।

पुलिस जांच एवं अभियोग के अनुसार घटना-क्रम इस प्रकार था : ज्ञानप्रकाश मिश्रा के कहने पर ही वे सभी लोग षड्यंत्र में शरीक हुए थे। हथियार का सवाल आया, तो चन्द्रकान्त के कहने पर ज्ञानप्रकाश, अवधेश राय और रवि नाइक एक ड्राइवर नेपाल गये। वहां से प्वाइंट ट्रू फाइव बोर का छोटा रिवाल्वर खरीद लाये। इसके बाद पल्टन सिंह को नियोगी की हत्या के लिए तैयार करके मौका ढूंढ़ा जाने लगा। यह वक्त तब आया, जब नियोगी राष्ट्रपति को ज्ञापन सौंपने के बाद वापस आये और उन्होंने २ अक्टूबर से जेल भरो आंदोलन शुरू करने का ऐलान किया।

नियोगी की हत्या के लिए पल्टन सिंह को अठारह हजार पांच सौ रुपये दिया जाना तय हुआ। सुपारी की इस रकम में से १० हजार ५०० रुपये पल्टन को ज्ञानप्रकाश से मिले थे। बाकी आठ हजार रुपये खुद चन्द्रकान्त ने दिये थे। इन रुपयों से पल्टन अपने गांव जाकर खेती-बाड़ी बढ़ाना चाहता था। ज्ञानप्रकाश पल्टन को नियोगी की हत्या के लिए नेपाल से लाया रिवाल्वर देना चाहता था लेकिन वह इसके लिए तैयार नहीं हुआ। उसका कहना था कि यह काम वह अपने देशी कट्टे से ही कर लेगा। तब ज्ञानप्रकाश ने उसे रायपुर से कारतूस खरीद कर दिया।

२८ सितम्बर की रात को ज्ञानप्रकाश और पल्टन सिंह नियोगी की ताक में लगे रहे। इस काम के लिए उन्होंने एक इंडो-सुजुकी मोटर साइकिल का इस्तेमाल किया था। नियोगी के निवास के सामने बने मैदान में मोटर साइकिल खड़ी की गयी। नियोगी घर पर सोये हुए थे। ज्ञानप्रकाश के संकेत पर पल्टन ने नियोगी पर गोली चलायी। फिर वे घटनास्थल से निकल भागे। इसी मोटर साइकिल से पल्टन देवरिया चला गया और वहां से अन्यत्र भाग निकलने में भी कामयाब रहा।

इस रहस्य से पर्दा उस वक्त उठा, जब अवधेश राय पुलिस की पकड़ में आया। अवधेश के बाद ज्ञानप्रकाश भी पकड़ा गया। लेकिन चन्द्रकान्त शाह, अभय सिंह और पल्टन पकड़ में नहीं आ सके। चन्द्रकान्त शाह ने तो, कहते हैं कि योजना को अंतिम रूप देकर ही अपनी पत्नी को उनके मायके माठापारा, जिला रायपुर भेजकर खुद भी भिलाई से किसी अज्ञात स्थान के लिए रवानगी डाल ली थी। चर्चा हुई कि वह योजनाबद्ध तरीके से जर्मनी चले गये। लेकिन पुलिस का खयाल है कि वह विदेश भाग नहीं पाये, क्योंकि पुलिस ने पहले ही अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डों पर चौकसी कड़ी कर दी थी।

जो भी हो, पुलिस के तमाम प्रयासों के बावजूद चन्द्रकान्त शाह को पकड़ा नहीं जा सका। अलबत्ता नेपाल से खरीदी गयी रिवाल्वर पुलिस ने दुर्ग के देवेन्द्र पाटनी नामक एक व्यक्ति के मकान से

बरामद कर लिया। यह रिवाल्वर उसे अपना बताकर ज्ञानप्रकाश मिश्रा ने कुछ दिनों तक संभालकर रखने के लिए सौंपा था। इतनी कार्रवाइयों के बाद गिरफ्तार किये गये ज्ञानप्रकाश तथा अवधेश राय को प्रथम श्रेणी न्यायिक दंडाधिकारी अनिल गायकवाड़ की अदालत में प्रस्तुत करके २४ अक्टूबर तक के रिमांड पर लिया गया। फिर रिमांड की अवधि खत्म होने पर जेल भेज दिया गया।

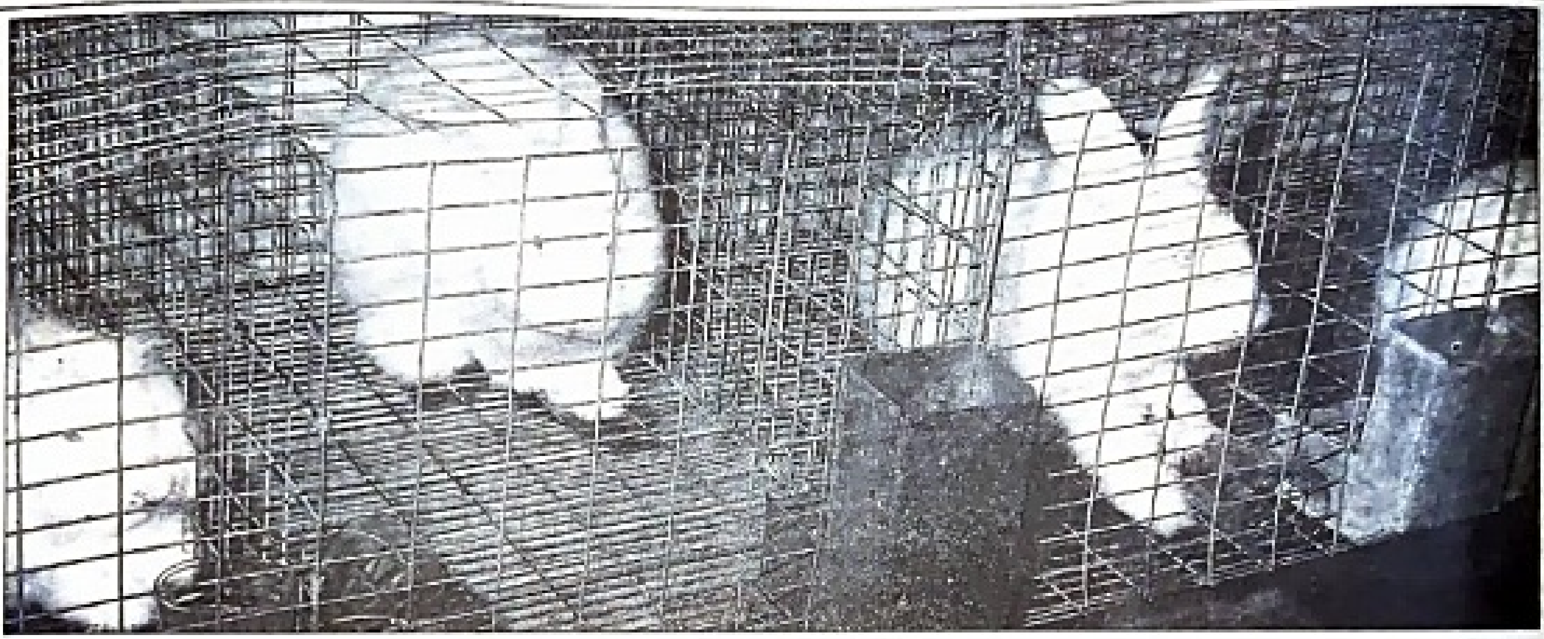
इस बीच जांच का काम सी० बी० आई० ने अपने हाथों में ले लिया।

यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण संयोग है कि नियोगी ने जिस भिलाई से अपने संघर्षपूर्ण जीवन की शुरुआत की थी, वहीं उनके जीवन को विराम लगा और उसी दल्ली राजहरा की खाक में वे समरस हो गये, वहां सन् '७७ में उन्होंने अपने ग्यारह साथियों को पुलिस की गोलियों से धराशायी होते देखा था। उन ग्यारह साथियों की स्मृति में बने शहीद स्थल पर ही नियोगी की पार्थिव देह का भी दाह-संस्कार हुआ। यहीं उनकी समाधि बनेगी, जो आनेवाली पीढ़ियों को याद दिलाती रहेगी कि हक और उसूलों के लिए लड़नेवालों को किस तरह गोलियों का शिकार होना पड़ता है।

शंकर गुहा नियोगी इधर अक्सर कहा करते थे, "बहुत-सी बड़ी-बड़ी कानूनी लड़ाइयां मैं जीत चुका हूं और आगे भी जीतता रहूंगा। लेकिन यदि कोई गोलियों से लड़ना चाहे, तो शायद मुझे हारना पड़े।"

मृत्यु से दो दिन पूर्व भी उन्होंने दुर्ग के पूर्व सांसद भाजपा नेता मोहन भइया से यही बात कही थी। दुर्भाग्यवश उनका कहा सच हुआ।

नियोगी वही आदमी था, जिसकी दहाड़ से पूंजीपति शिविर दहला करते थे। जो चंद लोगों के लिए मुसलसल सिरदर्द होने के बावजूद व्यक्ति नहीं, विचार मान लिया गया था। यह आदमी पिछले दो दशकों से निरंतर छत्तीसगढ़ के शोषित-दमित मजदूरों, किसानों के कंठों से समवेत स्वरों में मुखरित हो रहा था। नियोगी का व्यक्तित्व उनकी धमनियों में रुधिर की तरह प्रभावित था और उनकी भुजाओं में फड़का करता था। जाने क्यों अब भी सहसा यकीन नहीं होता कि यह जीवंत आदमी अब दुनिया में नहीं रहा। शायद ऐसा इसलिए हो, क्योंकि नियोगी जैसे लोग मरकर भी अमर हो जाया करते हैं। ●



अंगोरा खरगोश

पहाड़ी क्षेत्रों में सर्दियों में शरीर ठिठुरता रहता है और बाहर कदम रखते ही ठण्ड से दांत किटकिट करने लगते हैं। लेकिन यदि आप अंगोरा ऊन का बना स्वेटर पहन लें, तो पसीना आने लगता है। भारत में अंगोरा ऊन का प्रचलन अभी शैशव अवस्था में है। परन्तु अंगोरा खरगोश पालन सन् १८५०-६० के बीच ब्रिटेन से शुरू हुआ था। वहां के चर्च पादरियों ने जंगली खरगोश शौकिया तौर पर पालने शुरू किये तथा उनसे प्रजनन करवाया। वहीं से अंगोरा खरगोश की नस्ल तैयार हुई।

बाद में फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि देशों में इन खरगोशों का पालन शुरू हुआ। जर्मनी में अंगोरा पर अनुसंधान कार्य भी वर्षों तक होता रहा, जिसके फलस्वरूप अंगोरा खरगोश की उन्नत नस्ल तैयार हुई, जिसके शरीर पर बर्फ-सी सफेद ऊन उगती रहती है।

देखने में भी नन्हा-सा, कोमल, सफेद ऊन से ढंका खरगोश बड़ा प्यारा लगता है। अंगोरा खरगोश की ऊन भेड़ों की ऊन से कहीं अधिक गर्म और नर्म होती है। अंगोरा खरगोश एक वर्ष में एक किलोग्राम ऊन देता है। जब ऊन की लम्बाई ४-६ सेंटीमीटर हो जाती है, तब इसकी ऊन काट ली जाती है।

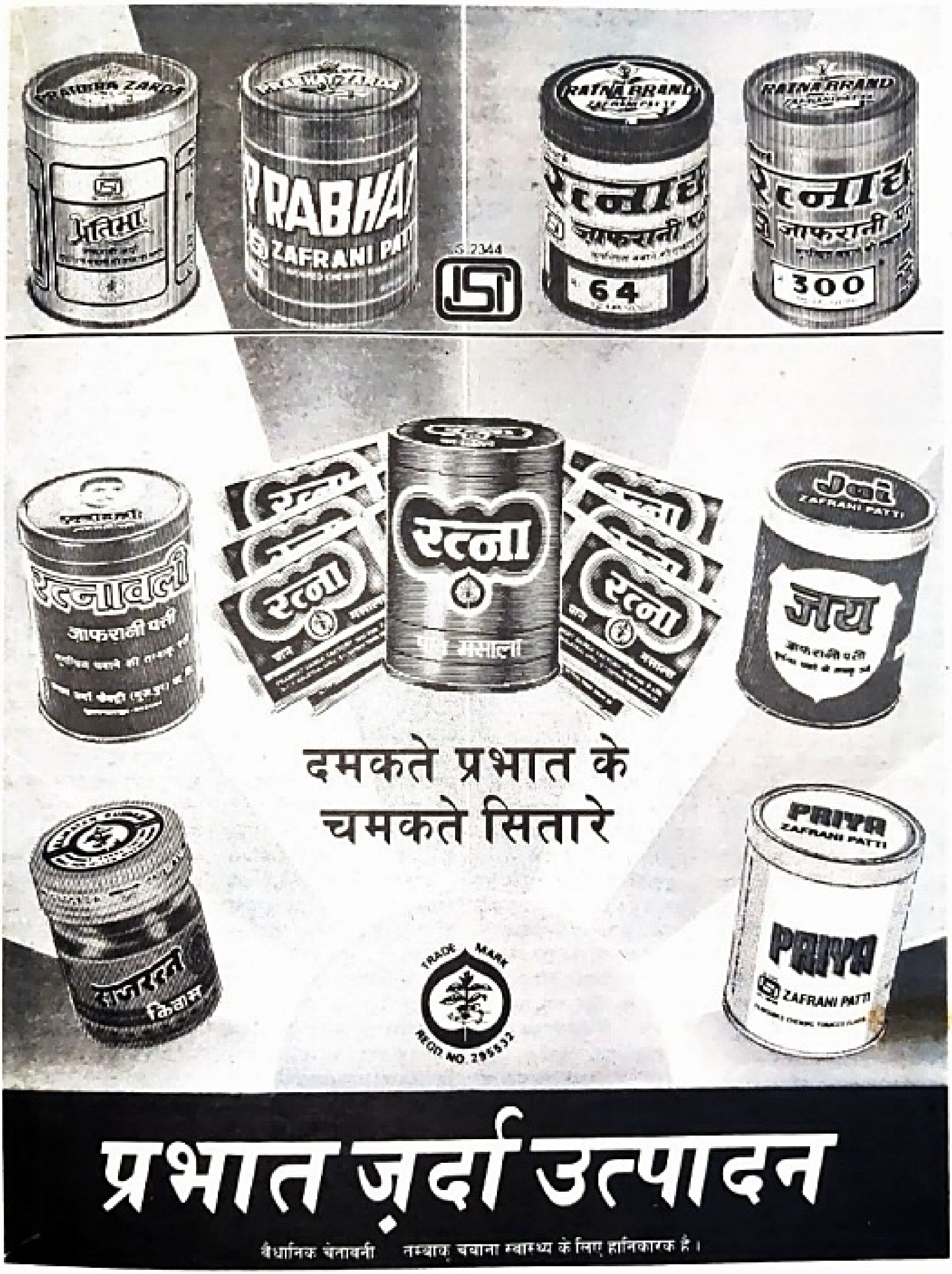
एक मादा खरगोश से साल भर में चार बार प्रजनन हो सकता है। एक बार में एक मादा खरगोश सात-आठ बच्चे पैदा करते हैं। जिनमें पांच के लगभग बच पाते हैं। साल भर में एक मादा खरगोश से इस तरह २० बच्चे प्राप्त किया जा सकते हैं, जिनका बाजार भाव २०,००० रुपये तक है। खुराक के रूप में अंगोरा खरगोश को मक्की, सोयाबीन और चावल का छिलका आदि दिया जाता है।

कुछ खरगोश अपनी ऊन खा जाते हैं, जिसके कारण उन्हें 'हेयर बाल' की बीमारी हो जाती है। सांस में कठिनाई और पांव के फोड़े की बीमारियां भी होती हैं।

खरगोश का जीवनकाल छह से आठ वर्ष के बीच होता है। जीवित रहते यह ऊन देता है। वध किये जाने पर यह मांस देता है और स्वाभाविक मृत्यु हो जाने पर इसकी खाल टोपियां जैकेट और कोट आदि बनाने के काम आती है।

मनुष्य की तरह खरगोशों में भी वंश-वृक्ष होते हैं। यदि वंश-वृक्ष का रिकार्ड न रखा जाये, तो अंत: प्रजनन से नस्ल बिगड़ जाती है तथा ऊन उत्पादन की क्षमता भी कम हो जाती है।

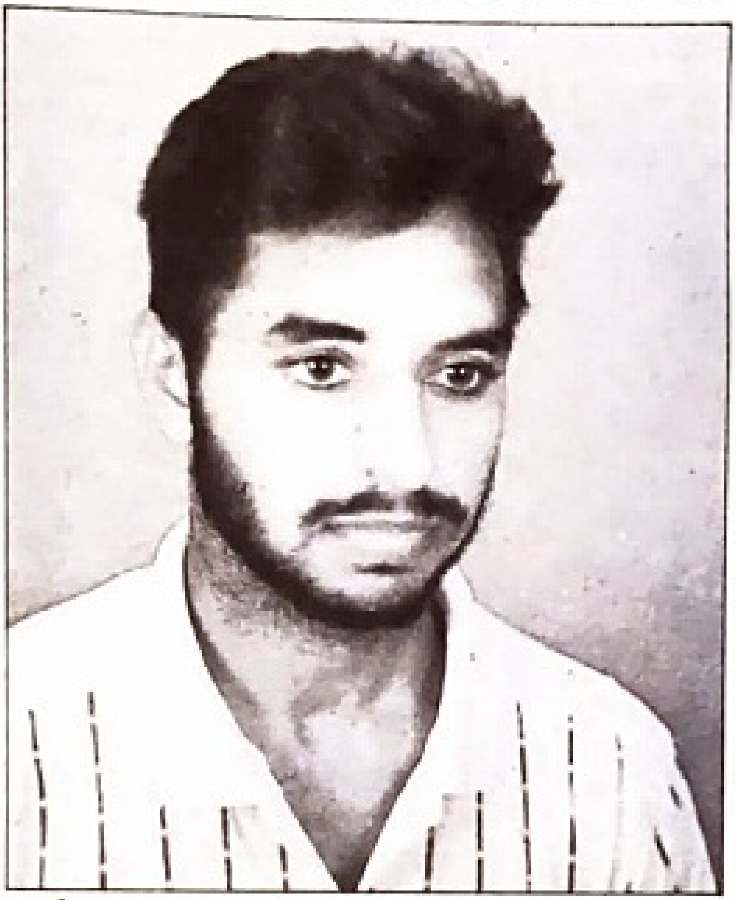
भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में इस खरगोश का पाल सफल रहा है। ●


प्रतिमा
RABHA
ZAFRANI PA
IS 2344
RATNA BRAND
जाफरानी
64
300
रत्नावली
जाफरानी पत्ती
रत्ना
Jai
ZAFRANI PATTI
जय
दमकते प्रभात के
चमकते सितारे
PRIYA
ZAFRANI PATTI
TRADE MARK
REGD NO. 295532
किमाम
प्रभात ज़र्दा उत्पादन
वैधानिक चेतावनी तम्बाकू चबाना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

अर्जुन पुरस्कार विजेता राजबीर कौर के होनहार भाई

जगबीर को मौत का बुलावा

—मनोहर शुक्ला



जगबीर : दुखद अंत



सुमनजीत

कोठी संख्या ८०४/१४ के सामने पहुंचकर जगबीर ने मोटर साइकिल रोक दी। मोटर साइकिल पार्क करने के बाद वह गुरप्रीत के साथ कोठी के मुख्य द्वार की ओर बढ़ गया। लोहे का गेट बंद था। भीतर से सिटकनी चढ़ाई नहीं गयी थी। जगबीर ने गेट को थोड़ा धकेला, तो खुल गया। दो कदम ही आगे बढ़ाये थे कि उसे भीतर से सुमनजीत आती दिखाई दी। गुरप्रीत भी सुमनजीत को पहचानता था।

सुमनजीत ने आगे बढ़कर जगबीर से हाथ मिलाया। फिर बोली, "जान-बूझकर इंतजार करवाने की आदत हो गयी है तुम्हारी।"

"नहीं, वो घर में पार्टी...।" जगबीर कहने लगा।

उसकी बात बीच ही में काटते हुए सुमनजीत बोली, "जाने दो। अब कहानी गढ़ने के लिए फिर से दिमाग पर जोर डालोगे। हां, तो फोन पर क्या कह रहे थे कि मेरी चिट्ठी नहीं मिली? झूठों के तो सरताज बनते जा रहे हो तुम।"

"मैं सही कह रहा हूं सुमन, मुझे तुम्हारी कोई चिट्ठी नहीं मिली।"

"कोई बात नहीं। आओ, ऊपर चलते हैं।"

सुमनजीत ने अभी तक गुरप्रीत से कोई बात नहीं की थी। लगता था, जैसे उसे जगबीर के अलावा अन्य किसी की उपस्थिति का अहसास ही नहीं था।

बातें करते हुए सुमनजीत और जगबीर सीढ़ियां चढ़ने लगे। गुरप्रीत भी उनके पीछे हो लिया। ऊपर हलकी रोशनी थी। गुरप्रीत ने देखा कि दोनों बातें करते हुए सामने के कमरे में प्रवेश कर गये। अब उनकी बातचीत में तल्खी आ गयी थी।

गुरप्रीत कमरे के दरवाजे पर ठिठक गया। बिना जगबीर अथवा सुमनजीत के कहे उसे कमरे के भीतर जाना उचित नहीं लग रहा था। वह दुविधा में पड़ गया कि वहीं रुका रहे, या कमरे के भीतर जाये, या नीचे लौट जाये। तभी वहां पर एक सर्वथा अप्रत्याशित बात हो गयी।

कमरे के भीतर पहुंचते ही सुमनजीत ने जगबीर को अपनी बांहों में भरकर अपने से सटा लिया। ठीक उसी समय वहां पर एक अन्य युवक किसी तिलिस्म की तरह प्रकट हुआ। गुरप्रीत उस युवक को अच्छी तरह पहचानता था। वह था सरबजीत सिंह पुत्र तरसेम सिंह, निवासी लाडवा रोड, प्रीतनगर, जालन्धर। एक पार्टी में सरबजीत की उससे मुलाकात हुई थी। इसके बाद उनकी कुछेक जगह 'हलो-हलो' हुई थी।

सरबजीत के हाथ में गातरा (छोटे आकार का तलवारनुमा हथियार) था। जैसे ही सुमनजीत ने जगबीर को अपनी बांहों में भरा, सरबजीत ने गातरा जगबीर की पीठ में घुसेड़ दी।

गुरप्रीत यह भयानक दृश्य देखकर सन्न रह गया। जगबीर की जाने किस नस पर वार हुआ था कि उसके मुंह से चीख तक न निकली।

तालू से चिपक गयी गुरप्रीत की जीभ। फटी आंखों से गुरप्रीत आगे केवल यही देख पाया कि सरबजीत जगबीर की पीठ पर लगातार वार किये जा रहा था और सुमनजीत कहे जा रही थी कि इस बेवफा को आज छोड़ना नहीं, वादा करके भी इसने शादी करने से इनकार किया था।

कुछ क्षणों बाद गुरप्रीत अपने आपे में लौटा, तो उसके सामने सिवाय भाग जाने के दूसरा कोई विकल्प नहीं था। पल भर पहले अच्छे-भले आदमी को मौत के घाट उतार देने को अमादा उन लोगों का निहत्थे मुकाबला करने का साहस गुरप्रीत में नहीं था।

वह तत्काल वहां से भाग लिया। शोर मचाकर अड़ोसी-पड़ोसी इकट्ठे कर लेने की बात उसे सूझी ही नहीं। उसे एक भय यह भी हो गया था कि शायद सुमनजीत के कमरे में सरबजीत के अलावा और भी कुछ लोग न हों। बदहवासी में किसी तरह उसने मोटर साइकिल स्टार्ट की और खुसरोपुर, गुरमेल सिंह के घर की ओर रुख कर दिया।

उपर्युक्त विवरण गुरप्रीत के बयान के अनुसार है।

हाकी ओलम्पियन गुरमेल सिंह भारतीय हाकी टीम की कप्तान और अर्जुन पुरस्कार विजेता राजबीर कौर के पति हैं। इस अन्तरराष्ट्रीय खिलाड़ी दम्पति की एक तीन वर्षीया पुत्री है अमोलक। अमोलक का जन्मदिवस १३ नवम्बर को पड़ता है। राजबीर की बड़ी बहन सर्वजीत कौर के पति राजबीर सिंह अमेरिका में रहते हैं। २ नवम्बर को वह हिन्दुस्तान आये थे।

चण्डीगढ़ में १४ नवम्बर से नेहरू गांधी अन्तरराष्ट्रीय गोल्ड कप टूर्नामेंट सम्पन्न हो रहा था। अपनी

छावनी में राजबीर कौर भारतीय महिला हाकी टीम को अभ्यास करवाने में व्यस्त थीं। ५ नवम्बर को दीपावली की वजह से वह केवल एक रोज के लिए अपने गांव खुसरोपुर, जालन्धर आयी थीं।

तय किया गया कि राजबीर सिंह के स्वदेश लौटने, अमोलक के जन्मदिन की खुशी और दीवाली एक ही रोज एक साथ जमकर मनायी जाये। अगली सुबह राजबीर को अपनी टीम के पास वापस पटियाला लौट जाना था। लिहाजा ५ नवम्बर की दीपावली की रात राजबीर-गुरमेल के घर पर खूब रौनक थी। इस रौनक में परिवार के सदस्यों के अलावा कुछ रिश्तेदार एवं मित्र भी शामिल थे। इनमें राजबीर की बुआ सुरेन्द्रजीत कौर का लड़का गुरप्रीत सिंह भी था।

दस बजते-बजते पार्टी में अनोखी रंगत छाने लगी थी। जगबीर ने ऐसा जमकर भंगड़ा डाला था कि सभी के पांव खुद-ब-खुद थिरकने को मजबूर होने लगे थे।

लगभग ग्यारह बजे सभी पुरुष खाने की मेज पर जम गये। महिलाएं रसोई संभाले थीं। खाना परोसा ही जानेवाला था कि फोन की घंटी घनघना उठी। गुरमेल सिंह ने आगे बढ़कर रिसीवर कान से लगाया। 'हलो' कहते ही उधर से एक लड़की की आवाज आयी, "हलो, गुरमेल भाजी, मैं सुमन बोल रही हूं। जग्गी इधर है क्या?"

"हां, है तो।"

"तो प्लीज फोन उसे देना जरा।"

गुरमेल सिंह ने रिसीवर मेज पर रखा और जगबीर को आवाज लगाते हुए कहा, "तुम्हारे लिए सुमनजीत का फोन है जग्गी।"

जगबीर फोन पर कितनी देर तक और किस तरह की बातें सुमनजीत से करता रहा, इसकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। फिर फोन पर वार्तालाप खत्म होने के बाद भी उसने किसी से ऐसा कुछ नहीं कहा था, जिससे कोई परेशानीवाली बात झलकती। वह बड़े इत्मीनान से खाना खाने के बाद अपने कुछ दोस्तों के साथ टहलने चला गया।

साढ़े ग्यारह बजे वह वापस लौटा। गुरप्रीत कपड़े बदलकर सोने की तैयारी कर रहा था। जगबीर ने उसके पास आकर धीरे से कहा, "मुझे भी किसी जरूरी काम से जालन्धर जाना है। तुम भी मेरे साथ चलो।"

"ठीक है, अभी चलता हूं। पर जाना कहां है और ऐसा कौन-सा जरूरी काम आ पड़ा, जिसके लिए आधी रात में जाना होगा?" गुरप्रीत ने मजाकिया लहजे में बोला और फिर से कपड़े बदलने लगा।

"रास्ते में बता दूंगा। बस, अब देर मत करो। वापस भी लौटना है।" जगबीर ने कहा।



राजबीर कौर



गुरप्रीत कौर

राजबीर कौर ने गुरप्रीत और जगबीर को अर्धरात्रि में इस तरह कहीं जाते देखा, तो उनका माथा ठनका। उनकी हीरो होंडा मोटरसाइकिल रोकते हुए राजबीर ने जगबीर से पूछा, "क्यों, इस समय कहां जा रहा है?"

"ऐसे ही थोड़ा काम है। अभी कुछ देर में वापस आ जाएंगे।" जगबीर ने कहा और मोटरसाइकिल भगा ले गया।

राजबीर उसे रोकते ही रह गयी थीं। जाने क्यों, उन्हें जगबीर का इस तरह जाना कुछ संदेहास्पद लग रहा था। एक अजीब तरह की बेचैनी होने लगी। पति से बात की, तो गुरमेल सिंह बोले, "मुंडा गबरू जवान है। फिर है भी पुलिस में। क्यों चिंता करती हो? अभी लौट आएगा थोड़ी देर में।"

राजबीर की समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर वह इस तरह परेशान क्यों हो रही थीं। उनके मन में एक बार भी यह बात नहीं आयी कि जगबीर सुमनजीत से मिलने चला गया होगा। जब सुमनजीत का फोन जगबीर के नाम आया था, वह रसोई में थीं। अब गुरमेल सिंह ने हंसते हुए उन्हें बताया, "सुमनजीत का फोन भी आया था, जग्गी के लिए। कहीं पट्ठा उसी से मिलने तो नहीं चला गया।"

"उससे मिलने वह क्यों जाएगा? उसका सुमन से क्या वास्ता? सुमनजीत का फोन जब आया था, तो आपने मुझे क्यों नहीं बुलाया था?"

"भई जब फोन था ही जग्गी के लिए, तो भला तुम्हें कैसे बुलाता?"

अभी यह बातचीत हो ही रही थी कि घर के बाहर मोटरसाइकिल रुकने की आवाज आयी। राजबीर लपककर बाहर निकलीं। गुरप्रीत अकेला आया था। बहुत घबराया हुआ था वह। उसने राजबीर से कोई बात नहीं की। मोटरसाइकिल स्टैंड पर लगाने के बाद वह तेज कदमों से भीतर चला गया।

इससे पहले कि राजबीर उस तक पहुंच पातीं, गुरप्रीत गुरमेल सिंह के पास चला गया था। गुरमेल के कान में उसने जो कहा, वह राजबीर सुन नहीं पायीं। वह कुछ पूछ पातीं, इससे पहले ही गुरमेल सिंह गुरप्रीत के साथ मोटरसाइकिल पर बैठ कर चल दिये। राजबीर पीछे चीखती-दौड़ती ही रह गयीं।

राजबीर की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। वह भीतर जाकर कई जगह फोन मिलाने के प्रयास करने लगीं।

जालन्धर शहर का गुरु तेग बहादुर नगर शहर के धनाढ्य-शालीन क्षेत्रों में आता है। यहां की कोठी संख्या ८०५/१४ में सुमनजीत बाजवा अपनी नानी के साथ अकेली रहती थी। उसके परिवार के अन्य सदस्य चण्डीगढ़ में रहते थे।

गुरप्रीत और गुरमेल ने इस कोठी पर पहुंचकर देखा—कोठी के बाहर लोगों की भीड़ जमा थी। पुलिस की एक गाड़ी और एक जीप भी खड़ी थी।

दोनों ऊपर गये तो पता चला, जगबीर दम तोड़ चुका था। सुमनजीत और सरबजीत वहीं मौजूद थे। उपस्थित पुलिस अधिकारियों ने कुछ देर तक दोनों के अलावा गुरमेल और गुरप्रीत से भी बातचीत की। फिर वे लाश के पास दो सिपाहियों को छोड़कर सुमनजीत, सरबजीत, गुरमेल और गुरप्रीत को साथ लेकर थाने लौट पड़े।

चलने से पहले सुमनजीत के घर से ही गुरप्रीत ने राजबीर कौर को फोन करके बताया, "जग्गी हमें हमेशा के लिए छोड़ गया है।"

कुछ ही देर बाद राजबीर कौर अपनी बड़ी बहन सर्वजीत कौर के साथ जालन्धर के लिए घर से निकलने लगीं। तभी जालन्धर के पुलिस स्टेशन डिवीजन ६ के पुलिस उपाधीक्षक का फोन आया। डी० एस०पी० महोदय ने जगबीर की हत्या का दुखद समाचार देते हुए राजबीर को थाने पहुंचने को कहा था।

राजबीर कौर के अनुसार, जब वह अपनी बड़ी बहन और बहनोई के साथ थाने पहुंची थीं, तब सरबजीत सिंह के साथ सुमनजीत भी थाने में जमीन पर बैठी थी। गुरप्रीत सिंह के बयान पर सुमनजीत और सरबजीत के खिलाफ भा० दं० वि० की धाराओं ३०२/३४ के तहत मुकदमा दर्ज किया गया।

पंजाब पुलिस में एक सब-इंसपेक्टर हुआ करते थे सरदार गुरनाम सिंह। १५ नवम्बर '७६ को हुए किसी मामूली झगड़े में उन्हीं के एक साथी सब-इंसपेक्टर ने उन्हें गोली से उड़ा दिया था। इस हत्याकांड का चश्मदीद गवाह एक सिपाही था। उस सिपाही की भी संदेहजनक परिस्थितियों में मौत हो गयी थी। उन्हीं सब-इंसपेक्टर गुरनाम सिंह के दो लड़कियां सर्वजीत कौर और

राजबीर कौर हैं। जगबीर गुरनाम सिंह का इकलौता बेटा था।

गुरनाम सिंह अपने समय के जाने-माने खिलाड़ी थे। हाकी खेलने में उनका कोई सानी नहीं था। इस तरह के वातावरण में पल-बढ़कर उनकी तीनों औलादें भी हाकी के खेल में विशेष रुचि लेकर खेल-जगत में अपना नाम चमकाने लगी थीं। राजबीर कौर तो अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुकी थीं। सर्वजीत और जगबीर भी राष्ट्रीय स्तर पर कितनी ही खेल-प्रतियोगिताएं जीत चुके थे। राजबीर कौर को जब १९८४ में अर्जुन पुरस्कार मिला था, तो इस परिवार का नाम विशेष सम्मान के साथ लिया जाने लगा था।

जगबीर ने कपूरथला के सैनिक स्कूल से प्रथम श्रेणी में मैट्रिक किया था। १९८७ में उसने अच्छे नम्बरों से बी० ए० पास किया। अपनी पढ़ाई के दौरान ही वह हाकी का अच्छा खिलाड़ी हो गया था। पंजाब सरकार ने उसे पुलिस में कांस्टेबिल के रूप में भर्ती कर लिया। तीन महीने बाद उसे हवलदार बना दिया गया। अब जल्दी ही सब-इंसपेक्टर के पद पर उसकी तरक्की होनेवाली थी। पंजाब पुलिस के प्रथम पंक्ति के खिलाड़ियों में उसका नाम आता था।



गुरमेल सिंह



जगबीर अपनी टीम के साथ

जगबीर ने कपूरथला के सैनिक स्कूल से प्रथम श्रेणी में मैट्रिक किया था। १९८७ में उसने अच्छे नंबरों से बी०ए० पास किया था। अपनी पढ़ाई के दौरान ही वह हाकी का अच्छा खिलाड़ी हो गया था। पंजाब पुलिस के प्रथम पंक्ति के खिलाड़ियों में उसका नाम आता था।

जालन्धर के नेहरू गार्डन स्कूल में जब राजबीर सातवीं कक्षा में थी, तो सुमनजीत कौर ने भी उसी क्लास में दाखिला लिया था। तब से बी०ए० तक सुमन राजबीर की सहपाठिनी रही थी। सुमनजीत भी हाकी खेलती थी। अरसे तक एक साथ पढ़ने-खेलने की वजह से सुमनजीत राजबीर के परिवार में सभी से घुल-मिल गयी थी। १९८४ में राजबीर की शादी हो गयी, तो वह जालन्धर का घर छोड़कर अपनी ससुराल खुसरोपुर चली गयी।

उन्हीं दिनों सुमनजीत को अनुबन्ध के आधार पर एयर इंडिया में नौकरी मिल गयी। वह जालन्धर छोड़कर दिल्ली चली गयी। जब एयर इंडिया से अनुबन्ध समाप्त हुआ, तो सुमनजीत जालन्धर लौट आयी। अब उसका हुलिया पूरी तरह बदल गया था। वह एकदम आधुनिक बन गयी थी।

राजबीर कौर के अनुसार, वह उसकी ससुराल भी आने लगी थी। मगर अब नयी सुमनजीत उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं आयी थी।

जालन्धर लौटकर सुमनजीत ने एकाध पंजाबी अखबार में स्ट्रिंगर के रूप में कार्य किया। कई समाचारपत्रों में उसके लिखे सामयिक लेख भी प्रकाशित हुए।

राजबीर भले ही सुमनजीत को नापसंद करने लगी थी, पर सुमन ने कभी इस बात का बुरा नहीं माना था। वह येन-केन प्रकारेण राजबीर के गांव पहुंचने का जुगाड़ बना लेती। वहां से उठती, तो जालन्धर की नई बारादरी वाले निवास पर चली जाती। राजबीर की मां से खूब घुल-मिलकर बातें करती। जगबीर घर पर मिल जाता, तो उससे खूब गप्पें लड़ाती।

६ नवम्बर की सुबह जब घर में करुण क्रन्दन चल रहा था, जगबीर के नाम डाक से एक चिट्ठी आयी। चिट्ठी पर लिखा पता देखते ही राजबीर ने सुमनजीत की लिखावट पहचान ली। पत्र लिखनेवाली ने अपना वास्तविक नाम नहीं लिखा था, पर राजबीर निश्चित रूप से जान गयी थी कि वह पत्र सुमनजीत का था। पंजाबी में लिखे इस पत्र पर दायीं ओर ऊपर की दिशा में अंग्रेजी में '८०४/१४, गुरु तेगबहादुर नगर,' लिखा था। 'बहुत ही अजीज, बहुत सारा प्यार' से शुरू होनेवाला यह पत्र कुछ इस प्रकार था:

"मैंने सोचा था कि मैं पत्र नहीं लिखूंगी। आखिर पता नहीं क्या सोचकर चिट्ठी लिखने बैठ गयी हूं। पता नहीं मैंने कितनी चिट्ठियां लिखकर फाड़ डालीं। जब तुम मेरी चिट्ठी का जवाब नहीं देते, तो मुझे बहुत दुख होता है। इतने प्यार से चिट्ठी लिखी जाए और जवाब में कोरा कागज भी न आए, तो खुद सोचो, मन पर क्या बीतती है। पर तुम्हें क्या पता। तुम्हारे साथ कभी ऐसा हुआ हो, तो मालूम पड़े। मैं आज तक समझ नहीं पायी कि तू मुझसे प्यार भी करता है कि मुझे यूं ही बना रहा है। मैंने सोचा था कि मैं कभी तेरे नजदीक नहीं जाऊंगी। तू तो नहीं, पर मैं तुझे दिल से चाहती हूं। इसलिए मैं तुमसे दूर भी नहीं हो सकती। कई बार मैं सोचती हूं कि अन्य लड़कों की तरह तुम्हारा प्यार भी जिस्मानी चाहत है। 'कीप इन ए बैली, कार्वड इन ए रॉक, आर थ्री लिटिल वर्ड्स, फॉरगेट मी नाट।'

"मैं सोचा करती थी कि तुम औरों से हटकर हो। पर मैं यह नहीं जानती थी कि आखिर तुम भी तो एक लड़के ही हो। मैंने तुम्हें पहले बताया भी था कि मुझे लड़कों से नफरत है। पर पता नहीं तेरे साथ किस तरह हो गया। पर तूने कभी मुझे समझने की कोशिश नहीं की। टच करने से प्यार ज्यादा नहीं बढ़ता। पर पता नहीं, लड़के क्या सोचते हैं।

मैंने हमेशा तुझे चाहा है। मुझसे अकेले मिलने आना। सिर्फ बहुत सारी बातें करने के लिए, पर तू...। मेरी यह चिट्ठी तुम्हें सोमवार को मिलेगी यानी कि कल। अगर डैडी रहे तो तूने नहीं आना। अगर चले गये, तो सोमवार ११ बजे आ जाना। अगर मेरे बरामदे की लाइट जलती हो, तो न आना। बंद हुई तो आ जाना। पर मैं इंतजार करूंगी। मेरी ओर से तुम्हें प्यार। 'लव रिमेन्स एंड नेवर कैन एंड।' मैंने बहुत जरूरी बातें करनी हैं, अगर आ सको तो आ जाना।"

"जगबीर और सुमनजीत के बीच प्रेम-सम्बन्ध होंगे, इसके बारे में तो हम लोग सोच भी नहीं सकते थे। फिर जगबीर सुमन से ३-४ साल छोटा था। सुमन उसे शुरू से छोटे भाई की तरह मानती आयी थी। चलो मान भी लिया कि सुमनजीत के मन में जगबीर के लिए चाहत पैदा हो गयी थी, तो क्या प्यार न करनेवाले को मौत के घाट उतार दिया जाए?" राजबीर ने लेखक से कहा था।

राजबीर के पति गुरमेल सिंह ने इस सम्बन्ध में जो कुछ लेखक को बताया, वह इस प्रकार है:

"तीन-चार महीने पहले सुमनजीत खुसरोपुर आयी थी। उसने मुझसे कहा था कि वह जगबीर से शादी करना चाहती है, मैं उसकी मदद करूं। तब मैंने उसे समझाया था कि संयुक्त-परिवार की वजह से मेरी बात को उधर के कई लोग उचित नहीं ठहराएंगे। फिर मेरा उस परिवार से कुछ ऐसा रिश्ता है कि इस तरह के मामलों में मेरा दखल देना शोभा नहीं देता। तिस पर सुमन ने कहा कि उसकी शादी जगबीर से न हुई, तो अंजाम बहुत बुरा भी हो सकता है। पर मैंने इस बात को ज्यादा गंभीरता से नहीं लिया था।

"सुमनजीत से इस तरह पिंड छुड़ाने के पीछे एक मुख्य कारण था।

यह यह कि राजबीर उसे कतई पसंद नहीं करती थी। इसी लिए मैंने यह बात राजबीर से नहीं बतायी। पर अगले रोज जगबीर से जरूर बातचीत की। तब जगबीर ने मुझे बताया कि उसके और सुमनजीत के बीच ऐसा-वैसा कुछ नहीं था। बस वही उसके पीछे पड़ गयी थी और शादी करने को मजबूर कर रही थी। जगबीर ने मुझसे यह भी कहा था कि वह जल्दी ही सुमनजीत को अच्छी तरह समझा-बुझाकर सारा मामला सुलझा देगा।"

बहरहाल, ६ नवम्बर को जगबीर की लाश का पोस्टमार्टम हुआ। डाक्टरों ने छाती, पेट और पीठ पर तेज धारवाले हथियार के ११ घावों का विवरण देते हुए अपनी रिपोर्ट में जगबीर की मौत का कारण अत्यधिक रक्तस्राव, सदमा और सांस का घुट जाना बताया। पोस्टमार्टम रिपोर्ट से एक बात और उभर कर आयी। वह यह कि जगबीर के जिस्म पर आनेवाले घाव दो भिन्न तेज धारवाले हथियारों के थे। तो क्या सुमनजीत के पास भी हथियार था और क्या उसने भी जगबीर पर जानलेवा हमला किया था? अब इसकी जानकारी तो स्वयं सुमनजीत ही दे सकती है, या फिर बता सकता है सरबजीत सिंह, जिसका बयान पुलिस अभी सामने नहीं लाना चाह रही थी।

अगले दिन अपने कुछ सम्बन्धियों के साथ राजबीर पुलिस स्टेशन पहुंची, तो पता चला कि सुमनजीत को तो उसी रोज छोड़ दिया गया था। बस सरबजीत सिंह की विधिवत गिरफ्तारी दिखाकर उसका पुलिस रिमांड प्राप्त कर लिया गया था।

"पुलिस का काम करने का अपना तरीका होता है। अभी हम आपको कुछ नहीं बता सकते।" पुलिस अधिकारियों ने राजबीर को समझाने का प्रयास किया।

१५ नवम्बर को जगबीर की रस्म किरया का भोग पड़ना था। उस दिन राजबीर अपने देश की आन बचाने के लिए भारतीय महिला हाकी टीम की कैप्टन के रूप में रूस के विरुद्ध खेल के मैदान में थीं। अपने इकलौते भाई की अंतिम रस्म में भाग लेने तक के लिए उन्हें छुट्टी नहीं मिली थी। जिस भरे मन से राजबीर ने यह मैच खेला, उसका अनुमान सहज ही नहीं लगाया जा सकता।

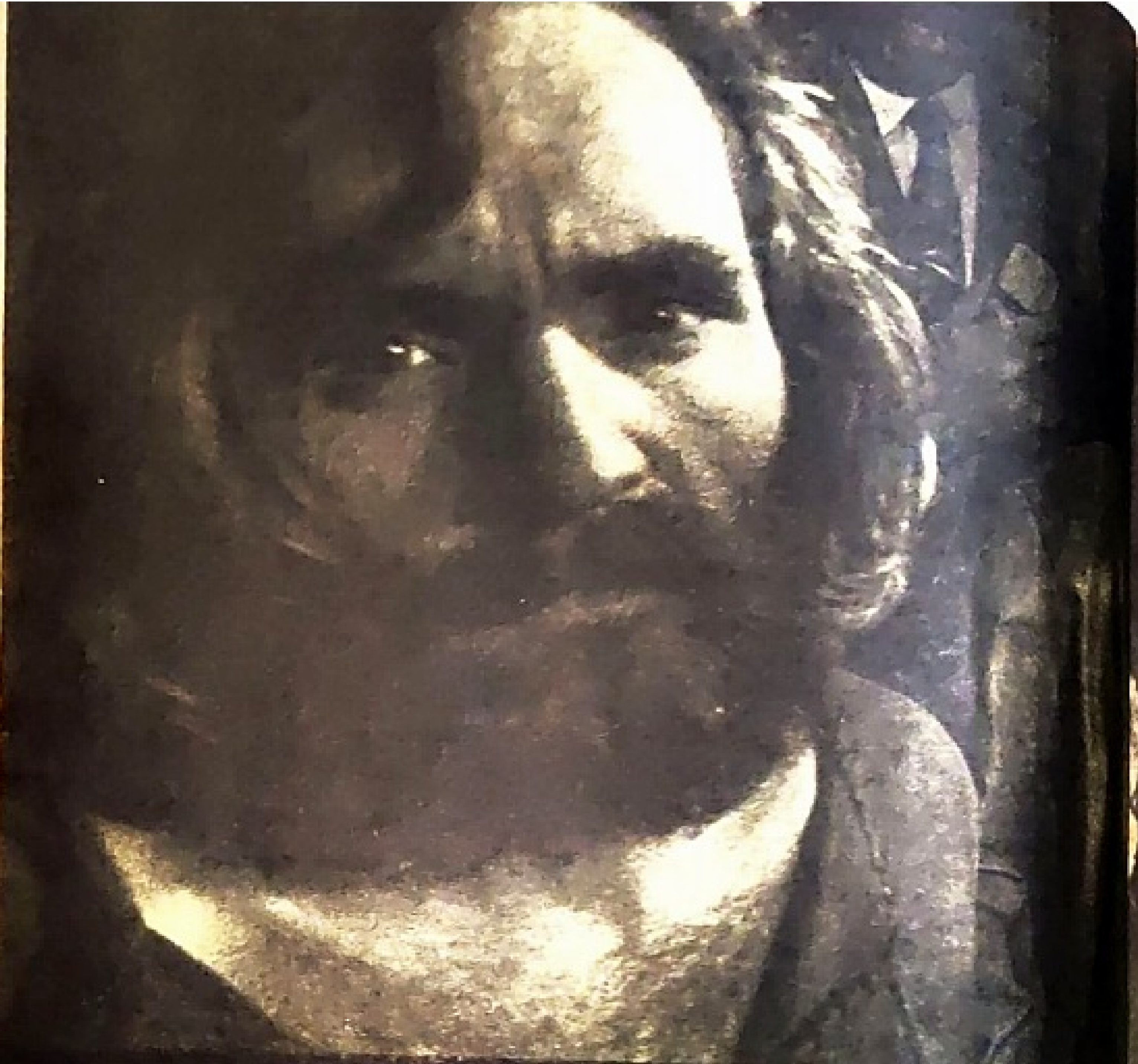
मैच समाप्त होते ही राजबीर पंजाब के राज्यपाल श्री सुरेन्द्र नाथ से मिलने गयीं।

"मेरे भाई की हत्यारिन केवल इसलिए खुली घूम रही है कि वह अकाली पत्रिका अखबार के प्रसिद्ध प्रेस रिपोर्टर एस० एस० बाजवा की बेटी है।" राजबीर ने राज्यपाल महोदय से कहा और अपनी एक लिखित शिकायत उन्हें दी। साथ ही चेतावनीनुमा बात भी कही कि उन्हें समय रहते न्याय न मिला, तो वह अपने सभी पुरस्कार भारत सरकार को वापस लौटा देंगी।

राजबीर कौर के अनुसार, राज्यपाल महोदय ने उनकी बात ध्यानपूर्वक सुनी, साथ ही उन्हें न्याय दिलाने का पक्का भरोसा दिलवाया। पर व्यावहारिक रूप से कुछ नहीं हुआ। जगबीर की हत्या हुए एक माह बीत जाने पर भी पुलिस का यही कहना था कि सुमनजीत कौर उनकी गिरफ्त में नहीं आ पायी थी।

पुलिस पक्ष की जानकारी लेने और कुछ प्रश्नों के उत्तर में एस० एस० पी० सुरेश अरोड़ा से बात हुई। उन्होंने लेखक से कहा, "जब तक सुमनजीत गिरफ्तार नहीं हो जाती, उसका बयान सामने नहीं आ जाता, कहानी अधूरी रहेगी। पुलिस की आलोचना करना आज सबसे सरल कार्य है। हमारे बारे में कोई कुछ भी कहता रहे, पर सच्चाई यह है कि पुलिस सुमनजीत की तलाश में जमकर भाग-दौड़ कर रही है। कानून की निगाह में सभी समान हैं। सुमनजीत किसी की भी बेटी हो, हम जल्दी उसे गिरफ्तार करने में सफल होंगे। अभी मैं आपके किसी प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ हूं।"

सुमनजीत कब गिरफ्तार होगी, अदालत से कब और क्या फैसला होगा, ये बाद की बातें हैं। जालन्धर पुलिस के अनेक कर्मचारियों ने भरे मन से इस लेखक से एक बात कही कि आगे ऐसे खिलाड़ी की कमी पूरी करने में पंजाब पुलिस को कई बरस लग जाएंगे। ●



चार्ल्स मैन्सन मुकदमे की सुनवाई के दौरान पुलिस हिरासत में

मैन्सन और उसकी शिष्याओं का मुकदमा

विशेष प्रतिनिधि



लिण्डा कैसाबियां : दुख और पछतावा





सूसन आटकिन्स, पैट्रीशिया क्रेन्विन्केल और लेस्ली वान हाटेन (बायें से खड़ी हुई), वाटसन और लिण्डा (नीचे बायें)

का

आठ अगस्त सन् १९६९ की बात है। दक्षिणी कैलीफोर्निया में उस रात नमी ज्यादा थी। कोहरा उतरा आ रहा था। ऐसे में पांच लोगों के प्राण हर लिये गये। घटनास्थल हालीवुड हिल्स नामक भवन था। इस भवन में फिल्म अभिनेत्री शेरन टेट अपने पति के साथ रहती थी। उसके पति प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक रोमन पोलांस्की थे। टेट सिर्फ सत्ताईस बरस की थी। मृत्यु के समय बेचारी साढ़े आठ महीने के गर्भ से थी।

अन्य मृतकों में कहवा व्यापार की एक उत्तराधिकारिणी २६ वर्षीया एबिगाइल फोल्जर, ३७ वर्षीय उसका प्रेमी फ्राइकोव्स्की, केश सज्जाकार सेब्रिंग (३७ वर्ष) और १८ साल का नौजवान स्टीवेन पैरेंट थे। पैरेंट बेचारा उस भवन के केयर टेकर का दोस्त था।

सभी हिंसा के कुत्सित उत्सव में

मारे गये थे। टेट को छुरे के सोलह वार लगे थे। फोल्जर और फ्राइकोव्स्की पर दर्जनों वार हुए थे। सेब्रिंग को छुरा भोंकने के साथ ही गोली भी मारी गयी थी। पैरेंट को भवन के बाहर सड़क पर गोली मारी गयी थी। हत्यारों ने अभिनेत्री टेट के रक्त से सामने के दरवाजे पर लिखा था—पिग यानी सुअरी।

सूचना मिली। पुलिस आयी। जांच करनेवाले अभी घटनास्थल पर सूत्र समेटने में उलझे हुए थे कि अगली रात फिर हादसा हो गया। कुछ ही मीलों की दूरी पर ४४ वर्षीय लीनो लाबिआंका और उसकी ३८ वर्षीया पत्नी रोजमेरी को मौत के घाट उतार दिया गया। यहां भी लोगों के खून से दीवारों पर लिखा था—सुअरियों को मौत।

फिर हत्यारों ने उसी घर में बाथरूम में झरना-स्नान किया था और इत्मीनान से ढूंढ़-ढांढ़कर कुछ खाया-पिया भी था।

इस बीच शहर भर में इन अपराधों की चर्चा जोर-शोर से होने लगी थी। अटकलों का बाजार भी गरम होता जा रहा था। लेकिन जासूसों को तीन महीने से ज्यादा वक्त लग गया, इन अपराधों को ३५ वर्षीय चार्ल्स मैन्सन से जोड़ने में। मैन्सन के साथ-साथ उसके नौजवान चेले-चेलियों का एक दल भी अभियोगों के घेरे में आ गया। वे सबके सब दोनों घटनास्थलों से कुछ मील दूर पशुओं के खंडहर हुए एक बाड़े में रह रहे थे।

फिर सारी दुनिया के संवाददाता उस प्रेस सम्मेलन में आ उपस्थित हुए, जिसे लास एन्जेलेस पुलिस विभाग ने सन् १९६९ की पहली दिसम्बर को बुलाया था। प्रेस के सामने तीन गिरफ्तारी वारंट की घोषणा की गयी इस केस में।

इसके एक सप्ताह बाद एक विशिष्ट जूरी (अभिनिर्णायक) ने मैन्सन, २१ वर्षीया सूसन आटकिन्स, पैट्रीशिया क्रेन्विन्केल (२२), लेस्ली वान हटिन (२०), लिण्डा कैसाबियां (२०) और २४ वर्षीय चार्ल्स वाटसन को मुकदमे में अभियुक्त बनाया।

९ दिसम्बर को लास एन्जेलेस से २०० मील उत्तर-पूर्व इंडिपेण्डेन्स



शैरन टेट सेब्रिंग फोल्जर फ्राइकोव्स्की पैरेण्ट

नामक छोटे-से कस्बे में मैन्सन को गिरफ्तार कर लिया गया। अगले दिन आटकिन्स, वान हटिन और कैसाबियां को भी अदालत पर पेश किया गया। फिर तो शीघ्र ही अलबामा से क्रेन्विन्केल को प्रत्यर्पित करके लाया गया। वाटसन टेक्सास से अपने प्रत्यर्पण को रुकवाने में सफल रहा। उस पर अलग से मुकदमा चलाया गया।

मैन्सन की गिरफ्तारी यूं ही नहीं हुई थी। आटकिन्स एक संगीतज्ञ गैरी हिनमैन की हत्या और लूटपाट के अभियोग में पहले से ही जेल में थी। उसने एक साथी कैदी को नवम्बर १९६९ में टेट तथा लाबिआंका हत्याकांडों के बारे में बता दिया था। उसने यह सूचना इसलिए जारी कर दी थी कि इससे शायद उसे छूट मिल जाए। उसने बताया था कि खुद उसने, वान हटिन, क्रेन्विन्केल, वाटसन और कैसाबियां के निर्देशन में टेट हत्याकांड किया था। फिर मैन्सन ने खुद ही लाबिआंका दम्पति को बांधा था और वाटसन, क्रेन्विन्केल और वान हटिन को उनकी हत्या करने के लिए भेजा था। बाद में आटकिन्स अपने इस कथन से मुकर गयी। उसने स्वयं को निर्दोष बताया और मुकदमे का सामना करने को तैयार हो गयी।

१५ जून १९७० से लास एन्जेलेस काउंटी हाल आफ जस्टिस की आठवीं मंजिल पर स्थित, ऊंची छतवाले कोर्टरूम में इस बहुचर्चित मुकदमे की सुनवाई शुरू हुई। जूरी के १२ नियमित और ६ वैकल्पिक चुने गये सदस्यों को साढ़े नौ महीने तक सुरक्षा के अन्तर्गत एक होटल में रहना पड़ा।

अपने प्रारम्भिक बयान में मुख्य अभियोजक ने इन हत्याकांडों को अपराध के इतिहास में सर्वाधिक बर्बर, क्रूर और लोमहर्षक बताया। उन्होंने इन हत्याओं का जो उद्देश्य प्रस्तुत किया, वह भी अपने ढंग का अकेला था। उन्होंने कहा कि मैन्सन को इस नरसंहार से उम्मीद थी कि काले और गोरों के बीच जातीय युद्ध छिड़ जाएगा।

मुख्य अभियोजक ने मैन्सन के बारे में बताया—मैन्सन १७ वर्षों तक सुधार जेलों में रहा था। वह वाहन चोरी, जालसाजी और अन्य कई जुर्मों का मुजरिम था। वह निराश गिटार वादक रहा था। वह छद्म दार्शनिक और महत्वाकांक्षा के उन्माद से ग्रस्त था। वह बड़प्पन के भ्रम और सत्ता की प्यास को हिंसात्मक मृत्यु से जोड़ता था। उसकी योजना इन हत्याकांडों के लिए अश्वेतों को दोषी ठहराने की थी। जातीय युद्ध के दौरान अपने साथियों के साथ वह 'डेथ वैली' भाग जाता। फिर जब काले लोग विजयी होते और उन्हें अनुभवी नेतृत्व की जरूरत महसूस होती, तब शासन करने के लिए मैन्सन लौट आता।

अभियोजन पक्ष के कई गवाहों और मैन्सन की फेमिली के कुछ अभियोगरहित सदस्यों ने भी मैन्सन की इस 'फिलासफी' के बारे में बताया। उन्होंने इस सम्बन्ध में उससे बातचीत की थी। जातीय युद्ध छिड़ने के बारे में मैन्सन का विश्वास 'हेल्टर स्केल्टर' नामक बीटल्स गीत की अपनी निराली व्याख्या पर आधारित था। मैन्सन अपनी 'फेमिली' को शिक्षा देता था कि सभी मनुष्य ईश्वर, ईसा मसीह और शैतान के मिश्रण हैं। उचित-अनुचित या अच्छे-बुरे के बीच कोई भेद नहीं होता। इसलिए उसके फैसले के अनुसार काम करने में कोई बाधा नहीं होनी चाहिए।

एक गवाह लिनेट फ्रोम्मे भी थी, जिसे प्रेसिडेंट जेराल्ड फोर्ड को गोली मारने के प्रयास के जुर्म में १९७५ में सजा हुई थी। उसने मैन्सन 'फेमिली' की जिंदगी और रहन-सहन को जादुई तथा रहस्यमय बताया, जहां पापबोध से मुक्त यौन जीवन था। लेकिन अन्य लोगों के अनुसार 'फेमिली' के सदस्य सुपर मार्केट की कचरा पेटियों में इकट्ठे की गयी भोजन सामग्री पर आश्रित थे। मैन्सन तो उन्हें सिर्फ एलएसडी, संगीतमय सामूहिक सेक्स प्रदान करता था। वह उन्हें चोरी करने के लिए भी भेजता था और अपनी 'लड़कियों' को पुरुष सदस्यों को सिखाने-पढ़ाने में इस्तेमाल करता था।

पूरी सुनवाई के दौरान अपने लिये नियुक्त अधिवक्ता को हटाने के लिए बार-बार आग्रह करता रहा। वह खुद ही अपनी और अपने साथियों की पैरवी करना चाहता था। उसकी यह इच्छा मानी नहीं गयी, तो वह उद्दण्ड हो उठा था। शुरू में ही एक बात पर वह वकीलों की मेज पर उछला और कोर्ट जज चार्ल्स एच॰ ओल्डर पर पेंसिल से हमला करना चाहा था। जूरी के सदस्य और आश्चर्य में पड़े दर्शक स्तब्ध रह गये। तभी अदालत के लम्बे-तगड़े कारिन्दे ने मैन्सन को दबोचकर फर्श पर गिरा दिया। पुलिस अधिकारी अब उसे बाहों से पकड़कर कोर्टरूम से बाहर

इसके पहले कि आपका शिशु पहला डगमगाता क़दम उठाए...

आप ऐसा क़दम उठाएं ताकि वो बड़ा होकर लखपति बन जाए.

इससे पहले कि आपका बच्चा इस विशाल दुनिया का स्वयं सामना करे, आप ऐसी योजना बनाइए जो उसे अपने भविष्य को एक नए मुकाम से शुरू करने में सहायक हो. ~ यूनिट ट्रस्ट की बाल उपहार वृद्धि निधि योजना में निवेश कीजिए. ~ आपकी थोड़ी-थोड़ी बचत से भी आपका बच्चा बड़ा होकर लखपति बन सकता है. ~ आप चाहें तो एकमुश्त रकम का निवेश कीजिए या हर वर्ष थोड़ी-थोड़ी रकम जोड़ते जाइए. आपके बच्चे के विकास के साथ ही आपका उपहार भी बढ़ता जाता है ताकि जब वह 21 वर्ष का हो तो उपहार भी परिपक्व हो जाए और जो उसकी किसी भी ज़रूरत के लिए उपलब्ध हो. ~ **अब एक और सुविधा** आपका बच्चा 18 वर्ष की **आयु के बाद साल में दो बार रकम निकाल सकता है.**



ताकि जब किसी भी कार्य के लिए पैसे की ज़रूरत हो तो वह उपलब्ध हो. बकाया रक़म बच्चे की 21 वर्ष की आयु होने तक निरंतर बढ़ती जाती है. ~ मुफ़्त जानकारी पुस्तिका के लिए भारतीय यूनिट ट्रस्ट के किसी भी कार्यालय या प्रमुख प्रतिनिधि या एजेंट से संपर्क कीजिए.

अब डिवीडेंड बढ़कर 13% हो गया है. याद रखिए, हर 5 वर्ष बाद बोनस डिवीडेंड* भी दिए जाते हैं.

* 1986-91 के लिए 5% बोनस डिवीडेंड घोषित हुआ है.

भारतीय यूनिट ट्रस्ट

एक करोड़ यूनिटधारकों की सेवा में समर्पित.

यूनिट ट्रस्ट की बाल उपहार वृद्धि निधि में निवेश कीजिए.

सभी सिक्योरिटी निवेश के साथ बाज़ार का जोखिम होता है. किसी भी निवेश से पहले अपने निवेश सलाहकार या एजेंट से सलाह अवश्य लें.

Sista's-UTI-246/91 HIN A



शैरन टेट के पति रोमन पोलांस्की : दुखी एवं विक्षुब्ध

ले जाने लगे, तो वह चिल्लाया, "ईसाई इन्साफ के नाम पर, किसी को तुम्हारा सर काट देना चाहिए।"

इस घटना के कुछ दिनों बाद ही राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने एक संवाददाता से कहा कि मैन्सन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दोषी है। यह बात अखबारों में छप जाने पर कोर्ट जज ओल्डर ने जूरी के सदस्यों को अखबारों से दूर रखने के प्रयास किये। लेकिन अगले ही दिन मैन्सन ने वकीलों की मेज पर से लास एन्जेलेस टाइम्स अखबार को झपट लिया और उसकी बैनर हेड लाइन को जूरी बाक्स की ओर लहराया—'मैन्सन दोषी है, निक्सन की घोषणा'।

तब जूरी के सदस्यों से मंत्रणा करके ओल्डर ने निर्णय दिया कि इस तरह के अपविचार घोषित न किये जायें। इतना ही नहीं, उन्होंने अदालत में अखबार लानेवाले डिफेंस अटार्नी को अदालत की अवमानना के लिए तलब भी किया।

अभियोग से मुक्ति पाने के एवज में लिण्डा कैसाबियां अभियोग पक्ष की मुख्य गवाह बन गयी। उसका कहना था कि वह टेट हत्याकांड के समय वहां मौजूद जरूर थी, पर उसने अपराध में भाग नहीं लिया था।

१६ दिनों तक इस इकबालिया गवाह ने हत्याओं का रोंगटे खड़े कर देनेवाला ब्यौरा विस्तार से बताया।

बड़ा ही भावुकतापूर्ण दृश्य उपस्थित हो गया था, जब आटकिन्स की पूर्व जेल-साथी वर्जीनिया ग्राहम कास्त्रों ने अपने सामने किये गये उसके बयान के बारे में बताया—लिण्डा ने शैरन टेट के हाथ उसकी पीठ की तरफ करके पकड़ रखा था। शैरन टेट ने उसकी ओर बड़े दयनीय भाव से देखा था। वह रो-रोकर उससे विनती कर रही थी, "प्लीज, प्लीज मुझे न मारो, मैं मरना नहीं चाहती मैं...मैं सिर्फ अपना बच्चा पैदा करना चाहती हूं।' लेकिन लिण्डा को जरा-सी दया नहीं आयी। उसने टेट की आंखों में देखते हुए कहा था, 'देख चुड़ैल, तुझे इसी वक्त मरना होगा। तू मरने जा रही है और मैं कुछ नहीं महसूस कर रही हूं।'

यह गवाही कितनी भी दर्दनाक क्यों न रही हो, अभियुक्त पर इसका कोई असर नहीं पड़ा था। मैन्सन आपस में फुसफुसाकर बतियाती और खीस निकालकर खीखी करती अभियुक्ता लड़कियों को आंख मार रहा था, बड़ी बेशर्मी से। जब मैन्सन ने अदालत को अपने माथे पर अंकित गुने का निशान '×' दिखाया, तब उसके सह-अभियुक्तों ने भी उसका अनुकरण किया। इससे मैन्सन यह जताना चाहता था कि उसने अदालत की कार्रवाई से खुद को क्रास कर लिया है। जब मैन्सन गाने लगता या जज को मुंह बिचकाता, तो वे सब भी उसका साथ देते। अन्ततः अदालत ने कारिन्दे को उन्हें कोर्टरूम से बाहर करना पड़ता।

१४ सप्ताहों के साक्ष्य के दौरान अभियोजन ने ८० से अधिक गवाहों को पेश किया और ३०० से अधिक प्रदर्श (घटनाओं से सम्बन्धित वस्तुएं) प्रस्तुत किये, जिनमें हत्यारों के खूनलगे कपड़े और हत्याओं में प्रयुक्त हथियार भी थे। हालांकि बचाव पक्ष के चार वकीलों से उम्मीद थी कि वे संयुक्त बचाव में ४० गवाहों को पेश करेंगे, मगर सुनवाई के ७३वें दिन एक भी गवाह पेश न करके अदालत को चौंका दिया।

अदालत से बाहर उन्होंने ओल्डर को बताया कि तीन अभियुक्ताएं उनकी सलाह के विरुद्ध गवाहों के कठघरे में खड़ी होकर मैन्सन को बचाने के लिए जुर्म अपने ऊपर लेना चाहती हैं। अगर वे ऐसा करती हैं, तो बचाव के अधिवक्तागण उनसे प्रश्न नहीं पूछेंगे। ऐसी दशा में उन पर स्वयमेव अभियोग सिद्ध हो जाएगा।

प्रतिवादी या बचाव पक्ष के अधिकारों की रक्षा एवं पालन को ध्यान में रखते हुए जज ओल्डर ने न्यायिक संकट दूर करते हुए यह व्यवस्था दी—प्रतिवादियों को पहले जूरी की अनुपस्थिति में अपने बयान देने होंगे, जिससे यह तय किया जा सके कि उनके कथन सुनवाई में शामिल करने लायक हैं या नहीं। तब आटकिन्स के बाद वान हुटिन और क्रेन्विन्केल ने जज की शर्तों को मानने से इनकार कर दिया। मगर मैन्सन ने शर्तें मंजूर करके अदालत को आश्चर्य में डाल दिया।

गवाहों के कठघरे में आकर मैन्सन ने नैतिकता, वियतनाम, प्रेसिडेंट निक्सन, एलएसडी, अभियोजन के गवाहों और कुछ वस्तुगत प्रमाणों के बारे में अनाप-शनाप बकना शुरू किया, जो एक घंटे से ज्यादा देर तक चला।

"ये बच्चे, जो आपके पास छुरे लेकर आये हैं, वे आपके बच्चे हैं," उसने कहा, "आपने उन्हें यह सब सिखाया, मैंने नहीं। मैंने तो उन्हें सिर्फ खड़े रहना सिखाया। बाड़े में रहनेवाले अधिकांश लोग, जिन्हें आप 'फेमिली' कहते हैं, ऐसे लोग थे, जिन्हें आप नहीं चाहते, सड़क पर के लोग, माता पिता से ठुकराये हुए लोग, या जो किशोर सुधार गृह में नहीं जाना चाहते। इसलिए मैं जो सबसे अच्छा कर सकता था, किया। मैं उन्हें अपने कचरा-घर में ले गया। मैंने उन्हें यह बताया कि प्रेम में कुछ गलत नहीं होता है।

"मैंने किसी की हत्या नहीं की और न किसी की हत्या का आदेश दिया है। शायद मैंने ईसा मसीह बनने की कोशिश की थी, लेकिन मैं अभी तक यह तय नहीं कर पाया हूं कि मैं क्या हूं, और कौन हूं। जैसे हमारे पास टीन के डिब्बे हैं और सड़क किनारे का कचरा है, उसी तरह आपके पास लोग हैं और मैं आपके कूड़ा-कचरा लोगों में से एक हूं।"

यह सब कहने के बाद मैन्सन ने जूरी की उपस्थिति में किसी भी प्रश्न का उत्तर देने से इनकार कर दिया। जब वह अपने सह-अभियुक्तों के पास से गुजरने लगा, तो उन्हें भी मना कर दिया।

कोई भी अभियुक्ता कठघरे में नहीं आयी।

अन्ततः २५ जनवरी १९७१ को चारों अभियुक्तों को प्रथम श्रेणी हत्या का दोषी पाया गया। लेकिन जब सजा की बात सामने आयी, तो आटकिन्स, वान हुटिन और क्रेन्विन्केल ने हत्याएं करना स्वेच्छा से स्वीकार कर लिया। हरेक ने मैन्सन के निर्दोष होने पर जोर दिया। उन्होंने इकबालिया गवाह लिण्डा पर हत्याओं का सारा आरोप लगाया कि वे तो सिर्फ उसके मददगार थे। उन्होंने कहा कि लिण्डा का उद्देश्य संगीतज्ञ हिनमैन की हत्या की नकल करना था, जिससे उस हत्या के अभियोग में गिरफ्तार मैन्सन के एक दूसरे सदस्य पर संदेह किया जाए।

आटकिन्स के बचाव वकील ने उससे पूछा, "क्या मृतकों के प्रति तुम्हारे मन में कोई संवेदना है?"

"मैं उन्हें नहीं जानती।" आटकिन्स ने जवाब दिया, "बिना उन्हें जाने मैं कैसे उनके लिए कुछ महसूस कर सकती हूं? मैं उन्हें सिर्फ प्यार करती थी। मुझे उनसे नफरत नहीं थी। कोई द्वेष भी नहीं था। मैं



भारत-भर के प्रमुख शहरों में उपलब्ध

अपने प्यार के शिखर पर थी।"

तब वकील ने उससे पूछा कि क्या वह पछतावा महसूस करती है।

"पछतावा?" आटकिन्स ने उत्तर दिया, "वह करने के लिए, जो मेरे लिए उचित था?"

लगभग दस घंटे तक विचार-विमर्श करने के बाद जूरी के न्यायाधीशों ने मैन्सन और उसकी तीनों सह-अभियुक्ताओं को मृत्यु दण्ड दिया।

बाद में इस मृत्युदण्ड को आजीवन कारावास में तब बदल दिया गया, जब कैलीफोर्निया सुप्रीम कोर्ट ने सन् १९७२ में मृत्युदण्ड को असंवैधानिक करार दिया। सन् १९७८ में मृत्युदण्ड को पुनः विधिसम्मत माने जाने पर इससे मैन्सन आदि की सजा को प्रभावित नहीं माना गया।

अपनी सजा भुगतने के दौरान मैन्सन, आटकिन्स, वान हूटिन, क्रेन्विन्केल और टेक्स वाटसन (अलग मुकदमे में दण्डित) ने कई बार पैरोल पर छूटने के प्रयास किये, पर उन्हें सफलता नहीं मिली। कम से कम मैन्सन को तो इसकी चिंता भी नहीं है। वह अपने व्यवहार में कोई सुधार नहीं करना चाहता। वह अपने चरित्र के अंधकारमय पक्ष का मजा लेता है।

अभियोजन की मुख्य गवाह लिण्डा कैसाबियां अब चार बच्चों की मां है और एक नये नाम के साथ शांत जीवन जी रही है। सन् १९८८ में एक टीवी प्रोग्राम 'ए करेण्ट अफेयर' में प्रस्तुत लिण्डा ने हत्याओं के कुछ समय बाद ही अपने इस निष्कर्ष पर पहुंचने को याद किया, "चार्ली (मैन्सन) निश्चित रूप से शैतान था। वह तो विलक्षण मनुष्य नहीं था, जिसका विश्वास किया था मैंने।"

उससे पूछा गया कि आज वह शैरन टेट के मित्रों और रिश्तेदारों के बारे में क्या सोचती है, तो उसने कहा, "बस यही कि मैं सचमुच बहुत दुखी हूं।"

शैरन की मां डोरिस टेट ने अपनी बेटी के हत्यारों को पैरोल पर छूटने से रोकने में अपने को समर्पित कर दिया था। वह इस तथ्य से दुखी हो जाती थी कि आटकिन्स और वाटसन को जेल में शादी करने दिया गया और उन्हें अपने पति या पत्नी से दाम्पत्य सम्बन्ध स्थापित रखने मिला। वाटसन दो बच्चों का पिता भी बना। टीवी प्रोग्राम 'ए करेण्ट अफेयर' में डोरिस टेट ने कहा, "वे हमारे वृद्ध लोगों से भी बेहतर ढंग से रहकर जिंदगी बिता रहे हैं।"

मनुष्य की चेतना में स्थायी स्थान बना लेनेवाले इस कांड के पीछे क्या आदर्श सामाजिक बन्धनों की शिथिलता थी, जिसे वेश-भूषा और मादक पदार्थों से लेकर बेतुके यौन सम्बन्धों और अपराधों में अभिव्यक्ति मिली? निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है।

सामाजिक समस्याओं और दिशाहीन लोगों के समूह के दुर्भाग्यपूर्ण मिलन से ही यह कांड हुआ था। कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि यह सब वक्त का तकाजा था, जिसे कुछ लोगों को भुगतना ही था। ●

बहरी अभिनेत्री का 'हियरिंग डाग'



ब्रिटेन में एक ऐसी अभिनेत्री है, जो बधिर होते हुए भी आत्मविश्वास के साथ एक दिन फिल्म-जगत की तारिका होने का सपना देख रही है। वह आज अपने जीवन में जो कुछ भी है, उस कुत्ते की बदौलत है, जो न केवल उसके लिए उसका कान है, बल्कि उसकी दिनचर्या को व्यवस्थित करनेवाला अभिन्न मित्र भी है।

इस अभिनेत्री का नाम चार्लोटे मोल्टन थामस है। उसके कुत्ते का नाम ओजो है। यह कुत्ता उसकी जीवन-धारा की संचालन शक्ति बन गया है। अभिनय हेतु बुलावे के लिए जब वह फोन की प्रतीक्षा करती है, तब ओजो फोन की घंटी बजते ही उसकी आस्तीन को पकड़ कर खींचने लगता है। चार्लोटे तुरंत समझ जाती है कि बुलावा आ गया है। वह फोन पर जाकर अपने आने की सूचना दे देती है।

जिस टेलीफोन पर वह बात करती है, वह विशेष प्रकार का है। उसके साथ एक कंप्यूटर स्क्रीन भी है। इसी पर वह लोगों से मिलने का समय तय करती है। इसी पर वह अपने अभिनय के धंधे के बारे में भी बातचीत करती है।

चार्लोटे २४ वर्ष की है और आकर्षक है। उसका कुत्ता ओजो काले और सफेद रंग का तिब्बती नस्ल का टेरियर कुत्ता है। यह कुत्ता उसे आडिशन के लिए नियमित रूप से सबेरे उठा देता है। जब अलार्म बजता है, तब वह उसके चेहरे को चाटने लगता है। चार्लोटे जग जाती है और तुरंत समझ जाती है कि उसके जगने के लिए अलार्म बज रहा है। 'ओजो' उसका निष्ठावान साथी है। जब कोई दरवाजे पर होता है, तब वह जोर से भूंकने लगता है और अपना दुम हिलाने-डुलाने लगता है। चार्लोटे तुरंत समझ जाती है कि कोई उससे मिलने आया है।

चार्लोटे अपने जीवन में ओजो के महत्व और उपयोगिता को भली-भांति समझती है। वह बहुधा कहती है, "ओजो ने हमारा जीवन बदल दिया है। उसने मुझे वह अतिरिक्त विश्वास दिया है, जिसकी मुझे सुरक्षापूर्वक रहने और अभिनय के पेशे को जारी रखने के लिए आवश्यकता थी।"

ओजो रंगमंच का बेहद शौकीन हो गया है। अभिनय के समय व्यवधान डालने से रोकने के लिए उसे चार्लोटे के साथ मंच पर चढ़ने नहीं दिया जाता। एक बार वह रंगमंच के पार्श्व से अभिनय के समय चार्लोटे को देख रहा था। अचानक उसने जोर-जोर से भूंकना शुरू किया। इससे चार्लोटे के अभिनय में व्यवधान पड़ा और उसे परेशानी हुई। स्टेज मैनेजर को मंच पर दौड़ने से रोकने के लिए ओजो का कालर पकड़ना पड़ा। इस घटना के बाद से उसे एक पिंजड़े में तब तक बंद रखा जाता है, जब तक कि चार्लोटे अपना अभिनय समाप्त नहीं कर लेती।

चार्लोटे जहां कहीं भी जाती है, वहां इसे अपने साथ ले जाती है। ओजो उस विशिष्ट ढंग का कुत्ता है, जिसे 'हियरिंग डाग' कहा जाता है। चार्लोटे ने उत्तरी लंदन स्थित अपने आवास में ओजो के अलावा दो बिल्लियां भी पाल रखी हैं। वह ओजो को एक 'डाग शो' से ले आयी थी। 'डाग शो' में उसे यह बताया गया था कि ओजो को बधिर केन्द्र में 'हियरिंग डाग' का चार मास तक प्रशिक्षण दिया गया है।

घर लाने के बाद चार्लोटे ओजो का पूरा ध्यान रखने लगी। ओजो भी शीघ्र समझ गया कि उसे क्या करना है। अब वह फोन, डोर बेल तथा अलार्म से चार्लोटे को सजग कर देता है। ●









DYNASTY • NUOVO LOOK • TREND SETTER • MATCH MAKER SATINS • HI FASHIONS SUITINGS

everest/89/SOM/556

dinesh

THE CHOICE OF LEADING FASHION HOUSES. INTERNATIONALLY.

AUTHORISED DEALERS: **GUWAHATI:** SHILPA CUTPIECE CENTRE • JAIN CLOTH HOUSE • TERENE AGENCY HOUSE • MARUTI • **SHILLONG:** HANUMANBUX UMADUTT • HANUMANBUX MOTILAL • MOHINI STORES • ARORA BROS. • ROOPKALA • LEAD'S • RADHA'S • MAMCHAND GHANSHYAMDAS • **TINSUKIA:** KALAMANDIR •

(MK/91/20)



शनि की भांति पृथ्वी के चारों ओर भी वलय

शनिग्रह के वलय मोहक भी हैं और आकर्षक भी। उनका सौन्दर्य स्थिर और शांत है। यदि छोटी-सी दूरबीन से उसे देखने का किसी को सौभाग्य मिले, तो वह उसकी सराहना किये बिना नहीं रहेगा।

डेनमार्क के ओडेंस विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कारे रासमुसन का यह मत है कि कभी पृथ्वी ग्रह में भी शनि ग्रह जैसे वलय रहे होंगे। ये वलय शनि के वलय की तुलना में कहीं अधिक फीके रहे होंगे। विगत २८०० वर्षों के दौरान १६ भिन्न-भिन्न समय पर तो ये अवश्य उभरे होंगे।

रासमुसन की कल्पना है कि यदि शनिग्रह से किसी भी खगोलवेत्ता को दूरबीन से पृथ्वी ग्रह को देखने का अवसर मिले, तो उसे भी वैसा ही दृश्य देखने को मिलेगा, जैसा दृश्य पृथ्वी से शनिग्रह को देखनेवाले को दिखायी पड़ता है।

प्रोफेसर रासमुसन ने उल्कापातों, अग्निपिण्डों और उल्काश्म के अवतरणों से सम्बन्धित घटनाओं की ऐतिहासिक रिपोर्टों का अवलोकन किया। ये सारी घटनाएं ८०० ई०पू० से लेकर १७५० ई० के बीच घटी थीं। उन्हें कम से कम गहन उल्का पिण्डीय सक्रियता के १६ परिक्रमण कालों का पता चला। ये सभी विशिष्ट प्रतिरूप को प्रदर्शित करते हैं।

किसी परिक्रमण काल में आरम्भिक प्रस्फोट हुआ, तो सक्रियता कुछ महीनों से लेकर कुछ वर्षों तक बनी रही। उसके बाद कुछ दशकों तक यह सक्रियता हल्की रही। तत्पश्चात इसमें अनुवर्ती तीव्रता भी आयी।

इस व्यवस्था को और अधिक सुस्पष्ट करने के लिए वह कहते हैं कि यदि पृथ्वी किसी गुजरते हुए पुच्छल तारे अथवा क्षुद्र ग्रह का परिग्रहण कर ले और उसके बाद वह पुच्छल तारा या क्षुद्र ग्रह टूट जाये, तो उसके कुछ टुकड़े पृथ्वी पर गिर पड़ेंगे और ये पहली गहन सक्रियता की स्थिति का सूत्रपात करेंगे। ग्रह पथ में विखण्डन के बाद पृथ्वी पर गिरने से जो टुकड़े बच जाएंगे, वे पृथ्वी के वलय का रूप ले लेंगे। गुरुत्वाकर्षण तब वलय के अणुओं को उर्ध्वतर वायुमंडल में खींचेगा। उस स्थिति में वे अणु या तो भस्मीभूत हो जाएंगे या धरती पर गिर जाएंगे। यदि वे धरती पर गिरेंगे, तो वे गहन सक्रियता का दूसरा दौर आरम्भ कर देंगे।

रासमुसन इस बात को तत्परता से स्वीकार करते हैं कि उनका अपना विचार मात्र अनुमान पर आधारित है। जिन व्यवस्थाओं का उन्होंने उल्लेख किया है, वह भिन्न-भिन्न समय पर विचित्र आकारवाली उल्काओं के पतन के प्रतिफल भी हो सकते हैं। इसके साथ ही वह विश्वास के साथ यह भी कहते है कि यदि उनकी परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है, तो यह मानना पड़ेगा कि पृथ्वी बोधगम्य रूप में एक दूसरी वलय व्यवस्था को फिर प्रस्फुटित कर सकती है। यह भी संभव है कि यह प्रस्फुटन हमारे जीवन में ही हो जाए। ●

भागीरथी शिखर अभियान

डा० सुदेश ब्याला



गोमुख से पूर्व भागीरथी श्रृंखला और बायीं ओर भागीरथी-२ शिखर



अभियान दल, पृष्ठभूमि में भागीरथी-१

लेखक दून स्कूल में हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं। उनके नेतृत्व में सम्पन्न दून स्कूल के एक पर्वतारोहण अभियान की कथा उन्हीं की कलम से

गढ़वाल अपने ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व तथा प्राकृतिक सौन्दर्य में अद्भुत है। उत्तर में तिब्बत, दक्षिण में देहरादून, पूर्व में कुमाऊं तथा पश्चिम में हिमाचल प्रदेश से घिरा यह पर्वतीय क्षेत्र अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यहां गगनचुम्बी हिम-मण्डित पर्वत शिखर हैं, दूर-दूर तक फैले हरे-भरे बुग्याल (चरागाह) हैं, देवदार, चीड़ तथा बांज के जंगल हैं, बुरांस से महकते पर्वतीय मार्ग हैं, लहलहाते सीढ़ीनुमा खेत हैं, झरने एवं गर्म पानी के सोते हैं। हिमनदों में दर्पण जैसे विशाल कुण्ड हैं।

इस बार दून स्कूल के अभियान दल का लक्ष्य था समुद्र तल से २०,००० फुट ऊंचा कालिन्दी शिखर। कालिन्दी यमुना के लिए प्रयुक्त एक नाम है। ऐसे लगा, जैसे यमुना के उद्गम के आस-पास होगा हमारा यह लक्ष्य, परन्तु आश्चर्य क्योंकि इसके विपरीत यानी यमुना के मूल स्रोत सप्तऋषि कुण्ड से पूर्व की ओर न जाने कितनी मील दूर था यह शिखर।

(शेष पृष्ठ ४५ पर)

विशालकाय सुनहरे बाज

विशालकाय सुनहरा बाज शानदार शिकारी पक्षी है। शताब्दियों से मानव इसे भयभीत दृष्टि से देखता आया है। मध्य-कालीन यूरोप में यह सुनहरा बाज राजा की सम्पत्ति माना जाता था। राजकीय मनोरंजन के साधन के रूप में बाज विद्या का कौतुक दिखाने के लिए इसका उपयोग होता था। उत्तरी अमेरिका के इंडियन इस विशालकाय पक्षी को 'थंडर बर्ड' कहते थे। वे इसे देवताओं का संदेशवाहक अथवा स्वयं एक दैवी तेज भी मानते थे।

सुनहरे बाज का वजन लगभग दस पौण्ड होता है। इसके पंखों का फैलाव मनुष्य की ऊंचाई से भी अधिक होता है। मादा बाज नर बाज से थोड़ा अधिक विशाल होती है। यह विशेष प्रकार का शिकारी पक्षी है। इसकी चोंच शक्तिशाली और कांटेदार होती है। इसके पंजे भी मजबूत होते हैं। अपने पंजों और चोंचों की मदद से खरगोश के आकार के पशुओं और पक्षियों को पकड़ता है, मार डालता है और खा जाता है।

सुनहरे बाज की उड़ान भी प्रबल होती है। आकाश के वे श्रेष्ठ स्वामी हैं। इसके पंख गहरे भूरे रंग के होते हैं। उसका सिर और उसके कंधे सुनहरे रंग के होते हैं। किशोर बाज का पिछला हिस्सा धारीदार और सफेद होता है। उसके सफेद पंखों पर भी धारी होती है। ये पंख बराबर झड़ते जाते हैं और तब तक झड़ते रहते हैं जब तक कि वह चार साल में वयस्कता को नहीं प्राप्त हो जाता।

जिस प्रकार निरभ्र आकाश से वज्रपात होता है, उसी प्रकार सुनहरा बाज आकाश में २००० फुट की ऊंचाई से सीधा धरती की ओर आता है। इस सीधे अवतरण के दौरान जब वह बल खाता है, तब सूर्य के प्रकाश में उसका सुनहरा सिर और सुनहरे कंधे दमक उठते हैं। अंतिम क्षण में उसके फैलाये गये पंख और सिरा उसको गिरने से रोक लेते हैं और वह अपने शक्तिशाली पंजों में तीतर जाति के पहाड़ी पक्षी को पकड़े हुए सहजता से अपने घोंसले में उतर जाता है।











सुनहरे विशालकाय बाज उत्तरी गोलार्द्ध में स्काटलैंड और उत्तरी अफ्रीका से लेकर साइबेरिया और उत्तरी अमेरिका तक व्यापक रूप से पाये जाते हैं। बहुत पहले प्राचीन काल में ब्रिटेन भर में सुनहरे बाज प्रचुर संख्या में पाये जाते थे। देहातों के फार्मों और शहरों के परिवर्तन हो जाने के कारण इनका इतना उत्पीड़न हुआ कि इनकी संख्या अब घटकर बहुत कम हो गयी है। इतने पर भी नवीन गणना के अनुसार, ब्रिटेन में सुनहरे बाजों के ४०० से भी अधिक युग्म हैं।

मादा बाजों के पंख दांतेदार होते हैं। ये सबसे प्राचीन घोंसला बनाने-वाली बाज मानी जाती है। स्काटलैं... के अन्य प्रत्येक युग्म बाजों की भांति ये भी अपने पर्वतीय क्षेत्र, सक... घाटियों तथा झाड़ वाले क्षेत्रों ... रहती है। ये किसी भी वयस्क बा... को अन्य क्षेत्रों से आने नहीं देती ... इसी विशिष्ट क्षेत्र में उनके अपने ... अपने घोंसले होते हैं। ये घोंसले ... से लेकर बारह विकल्प स्थानों त... होते हैं। इन्हीं क्षेत्रों में उनके बसे... और शिकारगाह भी होते हैं। ... क्षेत्र १२ हजार एकड़ क्षेत्र परिवृ... करता है। ये क्षेत्र समान आकारवा... अन्य बाज क्षेत्रों या प्रदेशों से भि... होते हैं।

सुनहरे बाज बसन्त ऋतु की ब... उत्सुकता से प्रतीक्षा करते हैं। इ... ऋतु में मादा बाज अपने घोंसले ... मरम्मत करके नया रूप देती है... घोंसलों का ढांचा आर-पार कदाचि... ६ फुट का हो सकता है। कभी-क... ये ६ फुट गहरे भी होते हैं। प्राची... काल में भी परम्परागत घोंसले ... फुट गहरे होते थे।

मादा बाज मार्च में और कभ... कभी अप्रैल के आरम्भ में अंडे दे... है। सामान्य रूप में झोल में दो अ... होते हैं। शायद ही कभी झोल में ए... या तीन अंडे मिलते हैं। अंडे सेने ... कार्य पहले अंडे से आरम्भ होता ... और छह सप्ताह तक चलता ... बाजों के अंडे पीत-श्वेत रंग के हो... हैं। कभी-कभी उन पर गहरी भूरे ... की सुन्दर धारियां होती हैं।

दुख की बात है कि अंडों ... संग्राहक गैरकानूनी ढंग से अंडों ... चोरी करते हैं। हालांकि यह विध... है कि अंडों की चोरी करनेवाले ... २००० पौण्ड जुर्माना होगा। ... विधान के बावजूद बाज के अंडों ... व्यापक चोरी होती है।

बाज खरगोश, तीतर, लोमड़ी ... बच्चे और लाल गिलहरी खाना ब... अधिक पसंद करते हैं। वे मेंढक त... मरे हुए पशुओं को भी खाते हैं।

बाजों के बच्चे जब ग्यारह सप्... के हो जाते हैं, तब वे उड़ना शुरू क... हैं। किशोर बाज उड़ान के स... अपने मां-बाप के निकट ही रहते ... नित्य उड़ान की अभ्यास से उनके ... मजबूत होते हैं। शिकार की ... सीखने में उन्हें कुछ समय अ... लगता है। ●

नेशनल से निर्माण का अब यही समय है!



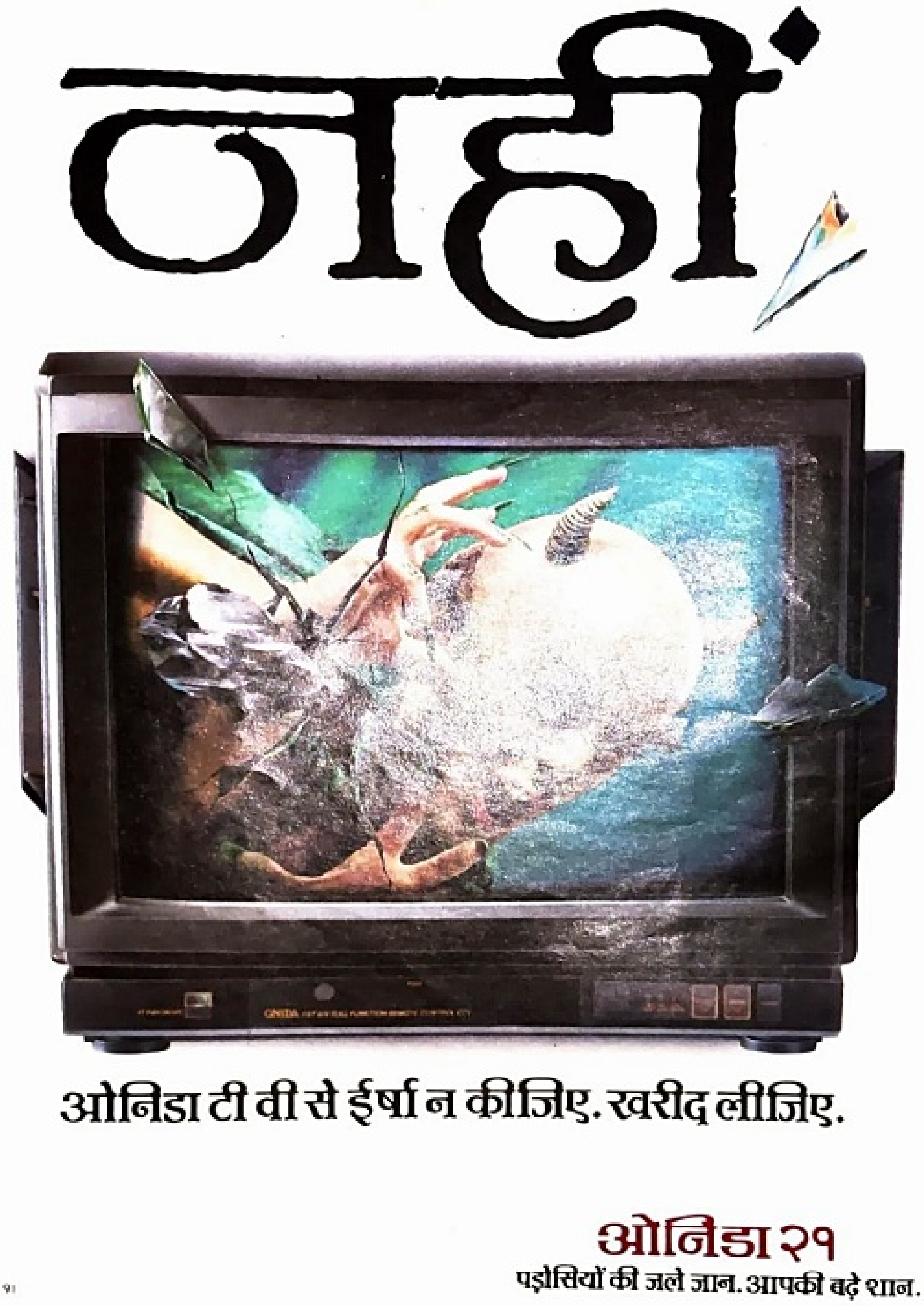
नेशनल फेनॉल–बॉन्डेड प्लाईउड और ब्लॉकबोर्ड
सावधानीपूर्वक चुने गये हार्डउड से बना फेनॉल फॉरमलडिहाइड रेजिन सहित प्रेशर बॉन्डेड, शत् प्रतिशत ब्वॉयलिंग वाटरप्रुफ एवं दीमक रोधक है। और यह उत्पादन है नेशनल का–विश्वसनीय प्लाईउड की देन ही जिसका पक्का वादा है।

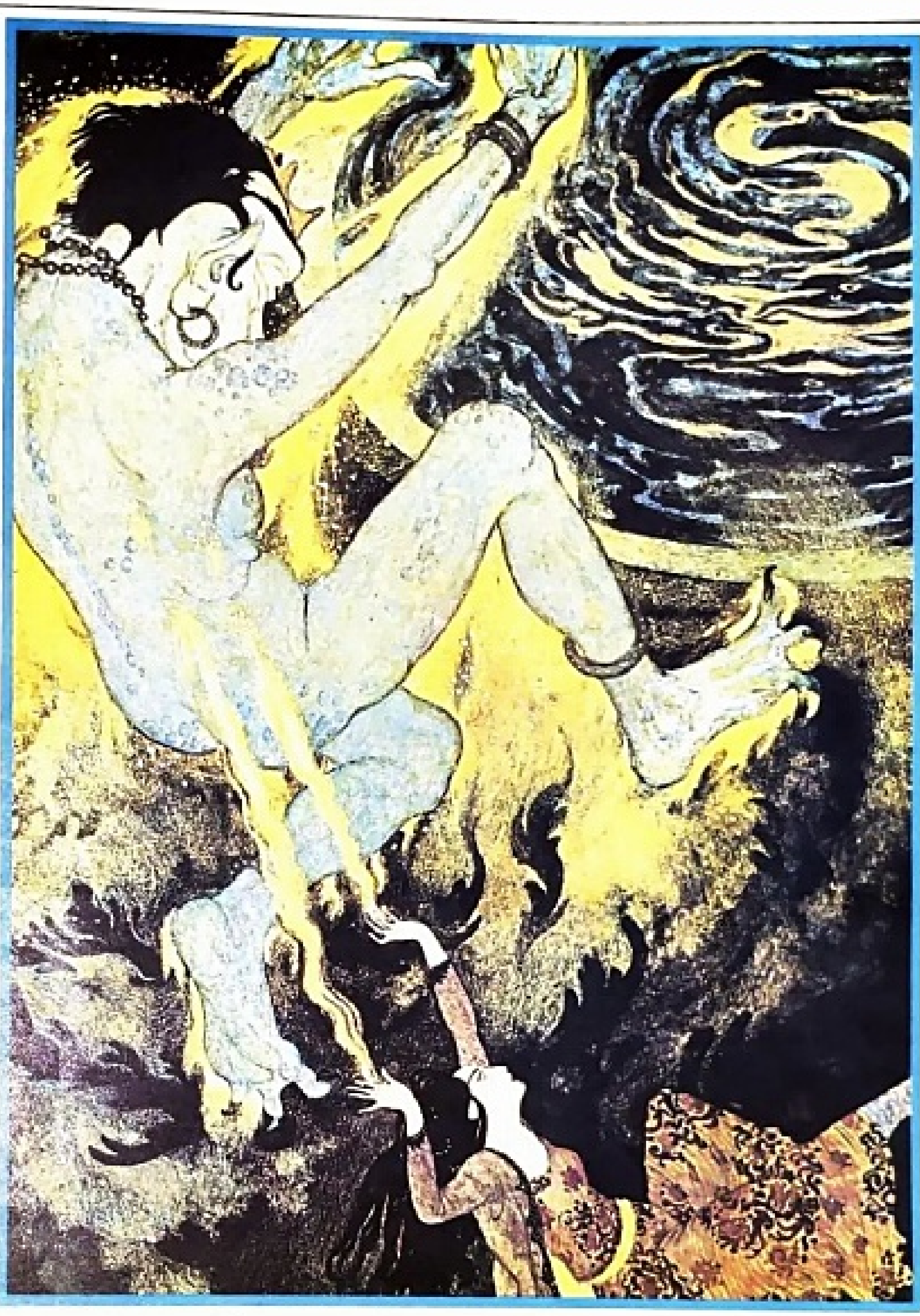
नेशनल नाम पर ही भरोसा रखिये!

नेशनल प्लाईउड इन्डसट्रीज़ लिमिटेड

प्रधान कार्यालय : 5 फैन्सी लेन, कलकत्ता 700 001, फोन : 280116, 280117, फैक्स : 281246

शाखाएं : कलकत्ता : 265224 ● भुवनेश्वर : 407217 ● गुवाहाटी : 62557 ● पटना : 234080 ● दिल्ली : 517105, 730059 ● जयपुर : 66401, 78716 ● बंबई : 343891, 6126606 ● अहमदाबाद : 53801 ● रायपुर : 28457 ● बंगलोर : 262597/8 ● हैदराबाद : 41234 ● मद्रास : 584995, 566545 ● काठमांडु : 272889


नहीं
ओनिडा टी वी से ईर्षा न कीजिए. खरीद लीजिए.
ओनिडा २१
पड़ोसियों की जले जान. आपकी बढ़े शान.



उसकी आग

मंजर इमाम

क्या जिंदगी वाकई
किसी न किसी आग
में जलते रहने के अलावा
और कुछ नहीं है,
या जिंदगी की अपनी अलग
आग होती है ?

वह मामूली नौजवान था। लेकिन उसकी आंखें मामूली नहीं थीं। बड़ी-बड़ी और ललाई लिये हुई आंखें, जिनसे चिनगारियां निकलती हुई महसूस होतीं। उसके जिस्म पर हमेशा एक ही लिबास होता। दाढ़ी बढ़ी और उलझी हुई। वह गलियों और सड़कों पर बेवजह घूमता-फिरता नजर आता। उससे जब भी बात करने की कोशिश की जाती, वह सिर्फ एक ही जुमला कहता, "देखते नहीं, मेरे बदन में आग लगी हुई है ?"

मेरा फन उस वक्त तक तिजारती नहीं हुआ था। अफसाने लिखा करता और शायरी करता। मेरे दोस्तों में सभी लेखक और शायर थे। आये दिन

आपकी पसंद...
लोग कहते हैं अनोखी है.
यहाँ तक कि शर्ट में भी हो
आपका अपना स्टाइल. आप जैसा.
यह ज़रूरत तो सिर्फ़
टेलर ही पूरी कर सकता है.
तभी तो पसंद करते हैं आप
विमल.
टेलर को देते हैं.
और फिर शर्ट तैयार.
एकदम सही.
अनोखेपन में है...
प रि पू र्ण ता.







VIMAL

प्री मि य म
श र्टिं ग्स

मुशायरे हुआ करते, बैठकें होतीं और जिंदगी बड़े सुकून के साथ अपने सफर पर जारी रहती।

हां तो, उस नौजवान का नाम मुझे मालूम नहीं था। दूसरे तो खैर उसमें कोई दिलचस्पी नहीं रखते थे, या उसका मजाक उड़ाते थे, लेकिन वह शख्स मुझे हमेशा बहुत ही अजीबोगरीब लगता था। बस अड्डे पर एक छोटा-सा होटल था। वह आम तौर पर उस होटल के बाहर बने हुए सीमेंट के एक चबूतरे पर बैठा रहता। उसकी आंखें फिजा को घूरती रहतीं। कभी-कभी वह लोगों की तरफ देखकर मुस्करा दिया करता। उसकी मुस्कराहट में अजीब तरह की उपेक्षा हुआ करती, व्यंग्य हुआ करता, जैसे वह सबकी बिसात से वाकिफ हो।

अक्सर मेरी उससे मुठभेड़ हो जाया करती। उसे देखकर मैं अपने आपको समेट कर एक तरफ निकल जाने की कोशिश करता था, क्योंकि उसकी आंखों से मुझे डर लगता था। लगता था, जैसे वे दिल के अंदर उतरकर मेरी असलियत को टटोल रही हों।

यह वह जमाना था, जब मेरी जिंदगी को एक नया अर्थ मिला था। पहले-पहले मैंने यह जाना था कि पूरे वजूद में मस्ती उसी समय पैदा होती है, जब किसी से इश्क हो जाये। मेरे पांव जमीन पर नहीं पड़ते थे। अपनी तुलना में मैं दूसरों को बहुत तुच्छ समझने लगा था। मेरा दिल चाहता था कि मैं जोर-शोर से अपने इश्क का ऐलान करूं और सबको यह बता दूं कि मैं उनसे बड़ा हूं। मैं श्रेष्ठ हूं, क्योंकि मैं इश्क करता हूं और उस मोहल्ले की, उस इलाके की, उस शहर की सबसे खूबसूरत लड़की मेरी महबूबा है।

जब कोई सचमुच इश्क करता है, तो हालत यही होती है। वही लड़की सबसे खूबसूरत नजर आने लगती है। उसकी हर अदा अन्य लड़कियों से अलग और दिलकश हो जाती है। पहला इश्क बहुत संजीदा, बहुत तूफानी, बहुत जज्बाती और बहुत मीठा हुआ करता है।

मुझे याद है, एक बार मेरे एक दोस्त ने मेरा हाथ देखकर कहा था, "मंजूर, तुम एक इश्क करोगे, ऐसा जज्बाती और तूफानी इश्क, जो तुम्हें बदनाम करके रख देगा।" उस समय मैंने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया था। मेरे जैसे लड़के से कौन लड़की इश्क करती, जिसके पास सलीके का लिबास भी नहीं। लेकिन बहुत जल्दी वह लड़की मेरी जिंदगी को सूरज की पहली किरन की तरह रोशन करने लगी और मैं उसी का होकर रह गया।

एक दिन शाम के वक्त उसने मुझसे कहा कि मैं लाइब्रेरी से उसके लिए एक किताब लेकर आऊं। उस जमाने में वहां सन्नाटा हुआ करता था। आबादी ने इतने हाथ-पांव नहीं फैलाये थे। रोशनी का इंतजाम भी कम था। इसके बावजूद मैं महबूबा के हुक्म की तामील करने के लिए चल पड़ा। बस अड्डे से आगे बढ़ा ही था कि अचानक एक साया सामने आकर खड़ा हो गया। एक लम्हे के लिए मेरी जान निकल गयी थी। यह वही शख्स था, वही गुमनाम और मामूली-सा नौजवान। यह पहला मौका था कि वह इस तरह मेरा रास्ता रोककर खड़ा हुआ था। मैंने उससे कतरा कर निकल जाने की कोशिश की, लेकिन उसने अचानक मेरा हाथ पकड़ लिया और जोर-जोर से झटके देने लगा।

"सुन, मेरी बात सुन। क्या तू जलना चाहता है ?"

पहली बार उसने मुझे मुखातिब किया था। फिर एक अजीब बात हुई। मैं, जो अब तक उससे डरता था, अचानक बेखौफ हो गया। अब मुझे उससे कोई खौफ महसूस नहीं हो रहा था, बल्कि एक तरह का इत्मीनान-सा हो रहा था, जैसे मेरा रास्ता रोकनेवाला मेरा दोस्त हो।

"देख, तू जिस रास्ते पर जा रहा है, उस रास्ते पर आग लगी हुई है। जिस मंजिल पर जायेगा, वहां आग लगी होगी।"

यह कहकर उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और 'आग...आग' कहता हुआ अंधेरे में गुम हो गया। मैं अपनी जगह निश्चल खड़ा रह गया था। उसकी बात मेरी समझ में नहीं आ सकी थी। पहली बार उसने मुझसे बातें की थीं और वह भी इतनी खौफनाक कि मैं सोचता ही रह गया था। बहरहाल, कुछ देर बाद मैं अपने जेहन से उसका खयाल झटक कर तेज कदमों से लाइब्रेरी के रास्ते पर चल पड़ा।

"देख, तू जिस रास्ते पर जा रहा है, उस रास्ते पर आग लगी हुई है। जिस मंजिल पर जायेगा, वहां आग लगी होगी।" यह कहकर उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और 'आग...आग' कहता हुआ अंधेरे में गुम हो गया। मैं अपनी जगह निश्चल खड़ा रह गया था। उसकी बात मेरी समझ में नहीं आ सकती थी। पहली बार उसने मुझसे बातें की थीं और वह भी इतनी खौफनाक कि मैं सोचता ही रह गया था।

रात के आठ बजे थे। लाइब्रेरी उस वक्त तक खुली हुई थी। मुझे पढ़ने-लिखने का चूंकि हमेशा से शौक रहा है, इसलिए उस लाइब्रेरी से मैं किताबें किराये पर लिया करता था। मैंने लाइब्रेरीवाले से किताब मांगी। वह किताब तलाश करने लगा। इसी दौरान एक आदमी वहां एक किताब वापस करने आया। उसने किताब काउंटर पर रखी। जेब से सिगरेट निकाली और माचिस जलायी, लेकिन माचिस की जलती हुई तीली टूट कर कागजों के ढेर पर जा गिरी।

बहुत मामूली-सी बात थी। लेकिन बात मामूली नहीं रही। जरा-सी देर में उस दुकान में आग लग गयी। जलते हुए कागजात ने किताबें जलाना शुरू कर दिया। बेचारा लाइब्रेरीवाला अपनी जान बचाकर दुकान से बाहर आ गया। एक हंगामा मच गया। इधर-उधर से लोग दौड़-दौड़ कर आने लगे।

मैं उस दुकान से दूर खड़ा हुआ उस शख्स की बातों पर गौर कर रहा था, जिसने यह कहा था कि तू जिस मंजिल पर जायेगा, वहां आग लगी होगी।

मैं उस लड़की के लिए कोई किताब तो न ले सका, लेकिन मैंने उस गुमनाम और मामूली-से शख्स की सूरत में शायद एक फकीर तलाश कर लिया था। ऐसा फकीर, जिसकी बातें पत्थर पर लकीर की तरह हो सकती थीं। उस दिन के बाद से मैं उसके पीछे पड़ गया।

मैं उसकी खोज में रहने लगा। और मैं यह दावा कर सकता हूं कि उस इलाके में शायद मैं ही वह शख्स था, जिससे उसकी दोस्ती हो गयी। दोस्ती क्या, बस जान-पहचान हो गयी थी। वह मुझसे बात कर लिया करता था। मैं अक्सर उसे लेकर होटल के किसी शांत कोने में बैठ जाता और उसे कुरेदने लगता। एक दिन उसने मुझे अपने बारे में थोड़ी-सी बातें बतायी थीं। मैंने कुछ और मालूम करने की कोशिश की, लेकिन वह 'आग...आग' की रट लगाता हुआ चला गया था।

उस दिन मुझे मालूम हुआ कि उसका नाम यूसुफ था। उसके कहने के मुताबिक उसके बदन में हमेशा एक आग-सी लगी रहती थी और वह उस आग की तपिश से परेशान होकर इधर-उधर घूमता रहता था। बस इससे ज्यादा उसने और कुछ नहीं बताया था। फिर भी मैंने उसके हालात जानने के लिए उसके घर का पता मालूम कर लिया।

एक दिन मैं अपने अजीज दोस्त मुबीन के साथ उस पागल-से नौजवान के घर जा पहुंचा। वहां यूसुफ के छोटे भाई सलीम से मुलाकात हुई। फिर तो दो-चार मुलाकातों के बाद हमने सलीम से यूसुफ के सारे हालात मालूम कर लिये।

"भाई जान शुरू में बिलकुल ठीक-ठाक थे," सलीम ने बताया, "कालेज में पढ़ा करते थे, उनमें एक खास बात उस जमाने में भी थी कि उनकी कही हुई बातें बहुत कम गलत होती थीं। दिल के बहुत साफ थे। बच्चों से प्यार करनेवाले, हर एक के हमदर्द। उनके होंठों पर हमेशा मुस्कराहट रहती। उनमें

वे सारी खूबियां थीं, जो अल्लाह के किसी नेक बंदे में हुआ करती हैं।

"फिर हुआ यह कि उन्हें लड़की कौसर की ट्यूशन मिल गयी। वह एक खूबसूरत और तरहदार लड़की थी। भाई जान ने उसे पढ़ाना शुरू किया और आहिस्ता-आहिस्ता उसकी मोहब्बत में गिरफ्तार होते चले गये। उस जमाने में उन्हें खूबसूरत और नफीस लिबास पहनने का शौक हो गया था। वह उसे ट्यूशन पढ़ाने के लिए नहा-धोकर, लिबास बदलकर, खुशबू लगा कर जाया करते। उस जमाने में उनकी सज-धज ही अजीब थी।

"दूसरी तरफ कौसर का भी यही हाल था। मैं तो यह कहता हूं कि उसकी मोहब्बत भाई जान से ज्यादा शदीद थी। हमारे घरवालों को जब यह बात मालूम हुई, तो उन्हें भी कोई एतराज नहीं हुआ। भाई जान के कहने पर वे शादी की बातचीत करने भी गये। इरादा यह था कि अगर बातचीत कामयाब हो गयी, तो फिलहाल मंगनी कर दी जाये। शादी भाई जान की तालीम पूरी होने और मुलाजमत के बाद होगी। कौसर के घरवालों ने भी यह रिश्ता पसंद कर लिया और मंगनी हो गयी।

"भाईजान की खुशियों का कोई ठिकाना नहीं था। उन्होंने इश्क की बाजी जीत ली थी और यह बहुत बड़ी बात थी।

"लेकिन शादी से कुछ दिनों पहले यह खबर आयी कि कौसर स्टोव फटने से जल गयी है और उसे अस्पताल ले जाया गया है। हम सब अस्पताल पहुंचे। भाई जान की हालत कुछ मत पूछें। मैंने भी कौसर को देखा। वह बुरी तरह जल गयी थी। उसे शायद भाई जान का ही इंतजार था। उसने उनको देखकर अपनी आंखों से इशारा किया कि वह उसके जले हुए हाथ को थाम लें। भाई जान ने कौसर का हाथ थाम लिया और उसने हमेशा के लिए आंखें मूंद लीं। बस तभी से भाई जान की यह हालत हो गयी है।"

तो यूसुफ के साथ भी ऐसा ही था। लेकिन इश्क में नाकामी के बाद रूहानी ताकत तो हासिल नहीं होती। उसका भेद कुछ और था। इस दौरान यूसुफ की एक और बात सच्ची हो गयी। इस बार मैंने यह अंदाजा लगा लिया कि उसकी हर वह बात दुरुस्त होती है, जिसका ताल्लुक इश्क के मामलों से हो। पहले भी ऐसा ही हुआ था। मैं एक लड़की के लिए किताब लाने गया और लाइब्रेरी में आग लग गयी। मेरे एक दोस्त के साथ भी ऐसा ही हुआ।

यूसुफ से मेरी बातचीत होने लगी थी। शायद मैं वह पहला आदमी था, जिससे वह गुफ्तगू किया करता और जिसकी पेश की गयी चाय पी लिया करता। मेरा एक दोस्त था अख्तर। वह भी मेरी तरह एक लड़की से मोहब्बत करता था। लड़की उसके पड़ोस में रहती थी। उस लड़की के घरवाले बहुत सख्त मिजाज के थे। उसका बाप यह गवारा ही नहीं कर सकता था कि उसकी बेटी किसी से इश्क करे। वह हर वक्त अपनी बेटी को शक की निगाहों से देखा करता। उसने खुद अपनी औलाद की जिंदगी तल्ख करके रख दी थी।

मैंने यूसुफ से एक दिन बस यूं ही अपने दोस्त अख्तर और उस लड़की का जिक्र किया, तो वह भड़क उठा, "बकवास! झूठ! सब के बदन से शोले निकल रहे हैं। जल रहे हैं सब के सब। जलते-जलते राख हो जाएंगे।"

मालूम नहीं, वह क्या-क्या बकता रहा, लेकिन मैं डर गया था। न जाने क्यों मुझे यह अहसास हो रहा था कि शायद अब अख्तर की खैर नहीं है। कुछ दिनों के बाद ऐसा ही हुआ।

यह और बात है कि कहीं आग नहीं लगी, शोले नहीं उठे। लेकिन एक आग बदन के अंदर भी हुआ करती है। उस लड़की के बाप ने उसकी शादी कहीं और कर दी। जिस लड़के से उसकी शादी हुई, वह पैसेवाला था। अख्तर का यह दावा था कि अगर उस लड़की की कहीं और शादी हुई, तो वह अपनी जान दे देगी, क्योंकि वह अख्तर से बेहद मोहब्बत करती थी। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उसकी शादी हुई और वह उस लड़के के साथ हंसी-खुशी से जिंदगी गुजारने लगी। एक-दो बार अख्तर उसके रास्ते में आया भी, तो उसने अख्तर को बुरी तरह नजरअंदाज कर दिया।

इस तरह यूसुफ की बात का पहला हिस्सा सच साबित हो गया था, यानी सब झूठ, सब बकवास। दूसरा हिस्सा इस तरह सच्चा हुआ कि अख्तर इस सदमे को बर्दाश्त नहीं कर सका। वह तेज बुखार में तपने लगा। घरवालों ने उसे अस्पताल में दाखिल कर दिया था। मैं एक बार उससे मिलने अस्पताल भी गया था। मैंने उसके बदन को जब हाथ लगाया, तो ऐसा महसूस हुआ, जैसे गर्म तंदूर को छू लिया हो। उसी बुखार की हालत में अख्तर की मौत हो गयी।

उस हादसे के बाद मैं बुरी तरह डर गया। कहां तो मैं यूसुफ से मिलने के लिए बेचैन रहा करता था और अब कहां उससे कतराने लगा। उसने मुझे दहशतजदा कर दिया था। वह अगर सामने आ जाता, तो मैं अपनी राह बदल लेता। उसकी जुबान बहुत खतरनाक थी। मैंने यह जान लिया था कि वह जो कुछ भी कहेगा, वह सच हो जायेगा, और सच भी ऐसा, जो भयानक और बदसूरत होगा।

यूसुफ भी अजीब आदमी था। उसने शायद यह महसूस ही नहीं किया कि मैं उससे कतराने लगा हूं, या शायद उसे इस बात की परवाह ही नहीं थी। वह अपनी धुन में मगन रहनेवाला इंसान था।

जवानी के इश्क का आलम ही कुछ और होता है। हम यह जानते हैं कि कुछ दिनों के बाद एक-दूसरे से बिछुड़ जाना है। इसके बावजूद सुहाने सपने बुनते रहते हैं, अपने आपको धोखा देते रहते हैं। एक-दूसरे के साथ जिंदगी भर रहने की कसमें खायी जाती हैं, हालांकि जुदाई की घड़ियां नंगी तलवार की तरह सिर पर होती हैं। मैं भी जानता था कि मैं जो कुछ भी कर रहा हूं, वह फिजूल है। वह मेरी जिंदगी की साथी नहीं बन सकती। इसके बावजूद मुझमें इतनी हिम्मत नहीं थी कि मैं यूसुफ से मिलकर अपने बारे में उससे कुछ पूछ सकूं। मैं जानता था कि अगर मैंने उससे बात की, तो वह यकीनन बुरी खबर सुनायेगा। और मैं था कि अपने आपको धोखा देना चाहता था, इसी लिए यूसुफ से कतरा रहा था।

इस दौरान हमारा इश्क जारी रहा। हम दोनों कभी-कभी एक-दूसरे से मिल भी लिया करते थे, वरना आम तौर पर एक-दूसरे को खत भेज कर इतमीनान कर लेते।

एक दिन यूसुफ अचानक मेरे सामने आ गया। बहुत दिनों के बाद उससे मुलाकात हुई थी। उसके होंठों पर उस वक्त भी वही मुस्कराहट थी, दिल में हंगामे मचा देनेवाली व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट। मैंने उससे बच निकलने की कोशिश की, लेकिन उसने झपटकर मेरी कलाई थाम ली।

"क्या जलने से डरते हो?" उसने मेरा हाथ झुलाते हुए पूछा। फिर खुद ही जल्दी-जल्दी बोलने लगा, "सब डरते हैं, मगर किसी को नहीं मालूम कि एक आग हमेशा इंसान का पीछा करती रहती है। तुम्हारे डरने से कुछ नहीं होगा। जिस इंसान की किस्मत में जलना लिखा है, उसे हर हाल में जलना है। तुम आग की कहानी सुनोगे, ऐसी कहानी, जो तुम्हें बेचैन करके रख देगी। बस मैं और कुछ नहीं कहूंगा, कुछ नहीं।"

फिर वह पता नहीं क्या-क्या बोलता एक तरफ चला गया। मैं हैरान खड़ा उसकी तरफ देखता रह गया।

उस हादसे के बाद मैं बुरी तरह डर गया। कहां तो मैं यूसुफ से मिलने के लिए बेचैन रहा करता था और अब कहां उससे कतराने लगा। उसने मुझे दहशतजदा कर दिया था। वह अगर सामने आ जाता, तो मैं अपनी राह बदल लेता। उसकी जुबान बहुत खतरनाक थी। मैंने यह जान लिया था कि वह जो कुछ भी कहेगा, वह सच हो जायेगा, और सच भी ऐसा, जो भयानक और बदसूरत होगा।

उन दिनों मेरी जिंदगी का सफर कई दिशाओं में जारी था। एक तरफ अदीब और मेरे दोस्त थे, जिनके बीच बैठकर शायरी और अदब से लेकर फलसफे तक की चर्चा और बहस होती थी। दूसरी तरफ मैं अपने उन दोस्तों के साथ होता, जो अदीब और शायर नहीं थे। फिर एक दिशा अपने इश्क की थी।

हुआ यह कि एक दिन हम सब दोस्त एक साथ बैठे थे। बातचीत के दौरान अहमद जावेद ने एक कहानी सुनायी। वह कुछ यों थी :

एक बुजुर्ग हुक्का पी रहे थे कि चिलम की आग ठंडी हो गयी। उन्होंने अपने नौकर से कहा कि जा, अंदर से आग ले आ। नौकर कुछ देर बाद खाली हाथ वापस आ गया। उसने बताया कि घर में आग नहीं है। उन बुजुर्ग ने कहा कि जा, मोहल्ले से ले आ। नौकर कुछ देर बाद फिर खाली हाथ वापस आ गया। उसके कहने के मुताबिक मोहल्ले में भी आग नहीं थी। अब उन बुजुर्ग ने गुस्से में हुक्म दिया कि जा, जहन्नुम से आग ले आ। कुछ देर बाद नौकर फिर वापस आ गया और बताया कि जहन्नुम में भी आग नहीं है।

"क्या कहा ?" उन बुजुर्ग ने हैरानी से पूछा, "क्या जहन्नुम में भी आग नहीं है ?"

"हां सरकार," नौकर ने जवाब दिया, "वहां भी आग नहीं है।"

"तूने किसी से मालूम नहीं किया ?"

"मालूम किया था सरकार।"

"तो फिर क्या जवाब मिला ?"

"जवाब यह मिला कि आग जहन्नुम में नहीं होती है। वहां तो हर शख्स अपने-अपने हिस्से की आग खुद लेकर आता है।"

मेरे दोस्त इस कहानी की तारीफ करने लगे। लेकिन मेरा तो यह हाल हो गया था, जैसे किसी ने मेरे जेहन को डाइनामाइट से उड़ा दिया हो। मुझे यूसुफ की बातें याद आ रही थीं। उसने कहा था कि तुम आग की कहानी सुनोगे, ऐसी कहानी, जो तुम्हें बेचैन करके रख देगी। मेरे चेहरे का रंग बदल गया। किसी अनजाने खौफ से मैं पत्ते की तरह थरथर कांपने लगा था। एक तो वह कहानी ही ऐसी थी, और उस पर यूसुफ की कही हुई बातें। पता नहीं, उस शख्स में ऐसी कौन-सी ताकत थी और यह भी कैसा इत्तफाक था कि उसकी हर बात में आग जरूर शामिल होती थी।

क्या जिंदगी वाकई किसी न किसी आग में जलते रहने के अलावा और कुछ नहीं है, या जिंदगी की अपनी अलग आग होती है ?

उस दिन के बाद से मैं और भी सचेत हो गया। मैंने अपना रास्ता बदल लिया था। मैंने उस होटल की तरफ जाना छोड़ दिया, जहां यूसुफ से मिलना मुमकिन हो सकता था। मुझमें अब उसकी भयानक बातों को बर्दाश्त करने की हिम्मत नहीं थी। लेकिन मैंने अपने इश्क के मामले जारी रखे...और इश्क भी तो जलते रहने का ही नाम है। उसमें भी तो एक आग-सी लगी रहती है। एक आग-सी थी सीने के अंदर लगी हुई।

इस आग ने जब शिद्दत अख्तियार की, तो मैंने उस लड़की के घरवालों को अपनी शादी का पैगाम भिजवा दिया। उन्होंने साफ इनकार कर दिया। मैं ऐसा हीरो भी नहीं था कि उस फैसले के खिलाफ सिर उठा सकता। मैं खामोश आंसू बहाता रह गया। अब उस लड़की से मेरे ताल्लुकात भी खतम हो चुके थे।

मेरा खयाल था कि मुझसे जमाने के दस्तूर के मुताबिक उस लड़की की भी कहीं न कहीं शादी हो जाएगी। कुछ दिनों के बाद रो-धोकर वह चुप हो जाएगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। उस लड़की ने रस्मे-वफा निभा दी। उसने पहली बार अपने मां-बाप के सामने जुबान खोली थी। उसने कहा था, "मैं आप लोगों को धोखा देने या आपके खिलाफ कदम उठाने की बात सोच भी नहीं सकती, क्योंकि आप मेरे मां-बाप हैं और मां-बाप से वफा का तरीका यह है कि मैं उस शख्स से फिर कभी न मिलूं। उसे भुला दूं। मैं ऐसा ही करूंगी, लेकिन मैंने उससे मोहब्बत की है और उस मोहब्बत का तकाजा है कि मैं अब कभी शादी नहीं करूंगी, किसी से भी नहीं। इसके लिए आप मुझे मजबूर नहीं करेंगे।"

उस दिन के बाद से मैं और भी सचेत हो गया। मैंने अपना रास्ता बदल लिया था। मैंने उस होटल की तरफ जाना छोड़ दिया, जहां यूसुफ से मिलना मुमकिन हो सकता था। मुझमें अब उसकी भयानक बातों को बर्दाश्त करने की हिम्मत नहीं थी। लेकिन मैंने अपने इश्क के मामले जारी रखे...और इश्क भी तो जलते रहने का ही नाम है। उसमें भी तो एक आग-सी लगी रहती है। एक आग-सी थी सीने के अंदर लगी हुई।

उस लड़की के इस फैसले में आग कहीं दिखाई नहीं देती, और न ही उसकी तपिश ही महसूस होती है, लेकिन है यह आग ही, ऐसी आग जिससे बदन सलामत रहता है, लेकिन वह राख हो जाती है। उसके साथ ऐसा ही हुआ। उसने सचमुच शादी नहीं की। उसने अपने अरमानों में आग लगा दी। उसने अपने वजूद को खाक कर लिया।

आज भी वह लड़की उसी आग में जल रही है, जबकि मैं उसकी तरह बहादुर साबित नहीं हो सका। मैंने शादी भी की और घर भी आबाद कर लिया। लेकिन उस लड़की की तरफ से उठनेवाली आग की तपिश अभी तक महसूस हुआ करती है।

इस वाकये के बाद मैं यूसुफ को तलाश करता रहा। उससे मिलकर इस बात की मुबारकबाद देना चाहता था कि उसकी लगायी हुई आग कितनी तेजी से फैल जाती है। उसकी जुबान में कितना असर है कि हंसते हुए लोग आंसुओं की लकीर बनकर रह जाते हैं। बहुत दिनों के बाद वह जब मिला, तो इस बार उससे कतराने के बजाय मैं खुद ही उसके सामने आ गया और मैंने अपने दिल की भड़ास निकाल ली।

'अब तो तुम्हें खुश होना चाहिए कि तुम आग पैदा करते हो और सिर्फ आग लगाना जानते हो। तुम्हें इंसान के अहसासों और जज्बात से क्या दिलचस्पी हो सकती है ? तुम तो सिर्फ आग की बातें करो और आग लगाते चले जाओ।"

मैं और भी न जाने क्या-क्या बोलता रहा, लेकिन वह बिलकुल खामोश रहा। अलबत्ता उसने उठते हुए सिर्फ एक जुमला कहा था, "यह सब मुझसे क्यों कह रहे हो ? मैं तो खुद आग होनेवाला हूं। हां, मैं आग होनेवाला हूं समझे ?"

उसके होंठों पर भेदभरी मुस्कराहट प्रकट हुई और वह चला गया। मुझे बाद में इस पर अफसोस भी हुआ था। उसने वाकयात को जानने-समझने की कोशिश की थी। इसके अलावा उसका और कोई कसूर नहीं था।

फिर एक दिन सवेरे-सवेरे हंगामा बरपा हो गया। मेरी गली में भी शोर होने लगा था। मैं जल्दी से अपने घर से बाहर आ गया। बहुत से लोग दौड़ते हुए एक तरफ चले जा रहे थे। पता चला कि यूसुफ ने बिजली के इंतहाई ताकतवर ट्रांसफार्मर पर चढ़कर खुदकुशी कर ली थी। आस-पास के लोगों का बयान था कि यूसुफ 'आग...आग' चिल्लाता हुआ उस खम्भे के पास आया और देखते ही देखते खम्भे पर चढ़ गया। इससे पहले कि लोग उसे उतारने की कोशिश करते, उसने पता नहीं क्या किया कि एक शोला-सा लपका, धमाका हुआ और यूसुफ जल उठा। यह हैरतअंगेज मौत थी।

मैं उसे भूल नहीं सकता। उसकी शख्सियत का असर आज भी मेरे दिमाग में मौजूद है। वह इश्क की आग से खेलते-खेलते खुद आग हो गया, लेकिन क्या हम सब आग से नहीं खेलते ? क्या हमें आग प्रिय नहीं है ? ऐसा कौन है, जिसकी जिंदगी में कोई आग न हो ? ●

(चित्रांकन चित्रकार की कल्पना से)



भारतीय जीवन बीमा निगम की नयी पॉलिसी कहे- "मुझे तुमसे प्यार है!"

जीवन सरिता

यानी थ्री-इन-वन योजना

"मैं और मेरी पत्नी... एक दूसरे की खुशी और सुरक्षा के लिए क्या कुछ नहीं करते? और तभी तो हमने ली है विशेष रुप से तैयार की गई भारतीय जीवन बीमा निगम की जीवन सरिता पॉलिसी, जो हम जैसे हर पति-पत्नी के लिए खास तौर से एक आदर्श पॉलिसी है. इसमें संयुक्त जीवन बीमा सुरक्षा के साथ ही हम दोनों को मिलेगा आजीवन पेंशन का लाभ भी! इतना ही नहीं, इस पॉलिसी के ज़रिए हम अपने बच्चों के लिए एक अच्छी खासी रकम का भी इंतज़ाम कर सकते हैं।

भारतीय जीवन बीमा निगम की जीवन सरिता एक ऐसी जीवन बीमा पॉलिसी जो कहे - "मुझे तुमसे प्यार है!"

जीवन सरिता *संबंधी अधिक जानकारी के लिए अपने नज़दीकी भारतीय जीवन बीमा निगम कार्यालय, विकास अधिकारी या एजेंट से मिलिए.*

भारतीय जीवन बीमा निगम

daCunha LIC 15 90 HN

भागीरथी शिखर अभियान—

(पृष्ठ ३५ का शेष)

संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रंथ अमरकोश के पहले अध्याय के दसवें खण्ड में कहा गया है—गंगा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा, भागीरथी त्रिपथगा त्रिस्रोता भीष्मसूरपि।

अर्थात गंगा विष्णुपदी जह्नुतनया (जाह्नवी) सुरनिम्नगा, भागीरथी, त्रिपथगा, त्रिस्रोता तथा भीष्मसू :—गंगा नदी के ये आठ पर्यायवाची हैं। यदि हम इस क्षेत्र के हिमनदों की भौगोलिक स्थिति और अमरकोश में प्रयुक्त त्रिपथगा अथवा त्रिस्रोता नामों की ओर ध्यान दें, तो यह सिद्ध हो जाता है कि भागीरथी के मुख्य स्रोत तीन ग्लेशियर हैं—रक्त वर्ण, चतुरंगी तथा गंगोत्री हिमनद। यदि हम गंगा के पौराणिक इतिहास की ओर ध्यान दें, तो पायेंगे कि भगवान शिव ने प्रसन्न होकर भगीरथ को गंगा की मुख्य धारा सतोपथ शिखर पर प्रदान की थी।

दून स्कूल अभियान दल भगीरथ की इसी साधना की ओर चलने के लिए तैयार था। सभी तैयारियां पूरी हो गयी थीं। कैम्प के लिए बोझे तैयार हो गये थे तथा उन पर संकेत आदि भी लिख दिये गये थे, ताकि अस्त-व्यस्त किये बिना उन्हें निश्चित लक्ष्य तक सीधे पहुंचा दिया जाए। इस बार दल बहुत सीमित था—अनुज मांगलिक, शारिक सईद, शुचि, शाहीन तथा मैं। विद्यालय के इन सदस्यों के अतिरिक्त ऊंचाई में पथप्रदर्शक, खाना बनानेवाला तथा सामान ले जानेवालों में मुख्य थे—वासुदेव, राजू थापा, बलवंत, वीरेन्द्र, मनपति तथा राजेन्द्र सिंह रावत आदि।

३१ मई की सुबह सारा सामान ट्रक में रखा था और हम सातों सदस्य चलने के लिए तैयार। इस बार यह परिवर्तन इसलिए था कि परिवहन की बस द्वारा उत्तरकाशी जाने के लिए पहले चालक तथा परिचालक से तरह-तरह की बातें सुननी पड़ती थीं। माना कि अभियान दल के साथ सामान अधिक होता है, पर मुफ्त तो नहीं ले जाते। टोयटा से जाने में कुछ पैसे ही तो अधिक देने पड़े थे, गिड़गिड़ाना तो नहीं पड़ा था।

अपराजेय भावना के साथ ऋषिकेश, नरेन्द्र नगर तथा आगराखाल पार करके हम नागिनी की ओर उतर रहे थे कि ट्रक का एक टायर पंचर हो गया। नागिनी में ही पंचर बनने की व्यवस्था होने के कारण अधिक परेशानी नहीं हुई।

चम्बा में खूबानी कहीं-कहीं बिक रही थी। खटमिट्ठी खूबानी खाते-खाते टिहरी से उत्तरकाशी की ओर मुड़ गये। यहां से उत्तरकाशी तक की लगभग ७५ किलोमीटर की समतल यात्रा शुरू हो जाती है। हम गंगा के बायीं ओर चल रहे थे। सड़क काफी चौड़ी थी। शाम पीछे छूट गया था तथा धरासू आनेवाला था। धरासू में जलपान के लिए कुछेक दुकानों ने आकर्षित किया। शायद



अनुज मांगलिक और शुचि के साथ सुदेश व्यास

इसी आकर्षण को देखते हुए अधिकतर गाड़ियां यहां विश्राम करके उत्तरकाशी की शेष दूरी ३० किलोमीटर बिना रुके पार कर लेती हैं। धरासू एक और दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। मनेरी-भाली बांध परियोजना का द्वितीय चरण यहां सम्पन्न होता है और यमुनोत्री जाने के लिए बड़कोट तथा हनुमान चट्टी के लिए सड़क मार्ग यहीं से कटता है। यमुनोत्री के लिए हनुमान चट्टी ही अंतिम पड़ाव है, जहां से पैदल यात्रा शुरू होती है।

धरासू से उत्तरकाशी की यात्रा मात्र एक घण्टे की थी। हम शीघ्रातिशीघ्र उत्तरकाशी पहुंच जाना चाहते थे, क्योंकि गर्मी बहुत अधिक बढ़ गयी थी। अभियान दल की आवश्यक औपचारिकताओं को भी उत्तरकाशी में ही पूरा किया जाना था। उत्तरकाशी पौराणिक नगर होने के साथ-साथ जिला मुख्यालय होने के कारण महत्वपूर्ण है। अभियान दलों के लिए उत्तरकाशी का महत्व नेहरू पर्वतारोहण संस्थान के कारण माना जाता है, क्योंकि पर्वतारोहियों के लिए विश्वप्रसिद्ध यह संस्थान मार्गदर्शक है और तकनीकी सामान उपलब्ध कराने का एकमात्र मुख्य स्रोत भी। उत्तरकाशी ही एक ऐसा स्थल है, जहां से अभियान दलों को अभियान मार्गदर्शक, आधार शिविर तथा उसके ऊपर सामान ले जानेवाले बोझियों की व्यवस्था सम्भव हो पाती है। अभियान दल के लिए मार्गदर्शकों और ऊंचाई में साथ चल रहे उन साथियों का विशेष महत्व माना जाता है, क्योंकि अभियान की सफलता में इन्हीं साथियों का मुख्य हिस्सा रहता है। इसलिए उनका चुनाव यदि उपयुक्त हो गया, तो समझिए, आपने आधी विजय प्राप्त कर ली।

सभी औपचारिकताएं पूरी करने के बाद पहली जून की सुबह सात बजे ही हम गंगोत्री की ओर रवाना हो गये। बस भागीरथी के बायीं ओर चल रही थी। भटवाड़ी निकल जाने के बाद गंगनानी का पराशर आश्रम तथा गर्म पानी का सोता आनेवाला था। बस को भागीरथी की दाहिनी ओर आना पड़ा। अब डबरानी तक का रास्ता बहुत ही संकरा और जोखिम भरा था। बस कभी सीधे ऊपर की ओर जाती, कभी नीचे की ओर, कभी अंधे मोड़ तो कभी घुमावदार रास्ते और बायीं ओर सुदूर नीचे बहती भागीरथी की धारा।

गंगनानी से तीन किलोमीटर ऊपर सभी का ध्यान भागीरथी के दूसरे पार गया। दूर से कटा एक पहाड़, जिसका मलबा नदी के इस कोने तक पहुंच आया था। एक तरह से यह स्थान भी ऐतिहासिक बन गया था, क्योंकि १९७८ में इस पहाड़ ने गंगा की विशाल जलधारा को बांध दिया था। एक अप्राकृतिक झील बननी शुरू हो गयी थी। दुनिया भर के पत्रकार, लेखक एवं राहतकर्ता इकट्ठे हो रहे थे, यह जानने के लिए कि अब क्या होगा। इसी अवरुद्ध जलधारा की कल्पना करते-करते ही आगे बढ़ चले। डबरानी पहुंचने से पहले ही पुन: गाड़ी बायीं ओर आ गयी थी। दूर ऊंचाई में बसा सुक्खी गांव और वहां तक पहुंचती सर्पाकार सड़क आकर्षित कर रही थी। एक प्रकार से सुक्खी गांव इस क्षेत्र में सबसे अधिक ऊंचाई पर बसा गांव है। यहीं से एक पैदल मार्ग 'बकरिया खागी पास' होकर हनुमान चट्टी पहुंचता है। सम्भवत: पुराने जमाने में गंगोत्री-यमुनोत्री को मिलानेवाला यही पैदल मार्ग रहा होगा। सुक्खी गांव के बाद गाड़ी लुढ़कती-लुढ़कती झाला तक आ गयी थी। झाला के पास ही भागीरथी का विशाल पाट है, जिसके दाहिनी ओर सड़क मार्ग हरसिल होता हुआ गंगोत्री की ओर बढ़ता है। हरसिल की दूरी मात्र ६ किलोमीटर की है। देवदार और चीड़ के घने जंगलों से होता हुआ व्यक्ति भूल जाता है—शहरी जीवन को, क्योंकि शीतल, मंद समीर सहज ही व्यक्ति के जीवन में प्रवेश कर लेता है। इस घाटी में क्योंकि हवा बहुत तेज चलती है, इसलिए ऊनी वस्त्र निकालने जरूरी हो जाते हैं।

हरसिल मुख्य रूप से गंगा के बायीं ओर बसा स्थान है, जो कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यहां सैनिक छावनी में आवश्यकता पड़ने पर चिकित्सीय सुविधाएं उपलब्ध हो जाती हैं। यहीं पर लकड़ी के शहतीरों की एक विशाल हट है, जिसका नाम है—विल्सन हट। यही नहीं, यहां सेबों के बाग भी हैं। हरसिल के पास ही बगौरी नामक गांव है, जहां भोटिया लोगों द्वारा ऊनी वस्त्रों का काम दिन भर चलता रहता है। बर्फ

साठ साल के बूढ़े या साठ साल के जवान?



देखा आपने? ६० साल की उम्र में भी कितनी शक्ति, कितनी स्फूर्ति! जबकि आप अभी ३० ही के हैं फिर भी थकान महसूस करते हैं, क्यों?

इसका जवाब है - केसरी जीवन.

हर दिन, दिन में दो बार दो चम्मच.

ज़ाफ़रान (केसर) - अनमोल तत्व!

केसरी जीवन की बोतल खोलिए... दुनिया की सबसे महँगी जड़ी-बूटी असली ज़ाफ़रान की खुश्बू आपका स्वागत करेगी... कश्मीर की वादियों से चुना गया ज़ाफ़रान.

केसरी जीवन में ज़ाफ़रान के आरोग्यकर और सौन्दर्यवर्धक गुणों के साथ ताज़ा आंवला व अन्य अनेक जड़ी-बूटियों भी तो हैं जो शरीरगठन मज़बूत बनाएं, शरीर के टिशूज़ को वृद्धावस्था में भी चुस्त रखें, तेज़ रफ़्तार ज़िंदगी के तनावों से मुक्त रखने में सहायक हों और बीमारियों से मुकाबला करने की शक्ति दें.

ज़िंदगीभर सेहत का अनमोल रत्न आप भी पाइए. जीभर कर जीने की तरो-ताज़गी महसूस कीजिए.

झंडु केसरी जीवन



रग रग में जान - ज़िन्दगी की शान

ZP/21/294 HIN

पड़ने से पहले ही यानी सर्दियों के मौसम में ये लोग उत्तरकाशी के पास डुंडा नामक गांव में चले आते हैं, जहां इनका स्थायी एवं अस्थायी रूप से पैतृक ऊनी काम चलता रहता है। ऐसी भी मान्यता है कि १९६२ से पहले भारत-तिब्बत व्यापार का मुख्य माध्यम यही क्षेत्र रहा है। हरसिल में ही लमखागा दर्रे से उतरती पहाड़ी नदी जालंधरी भागीरथी में मिलती है। जालंधरी के साथ-साथ चलता व्यक्ति लमखागा दर्रे तक पहुंच जाता है, जिसका पूर्वी कोना उत्तर प्रदेश में और उत्तरी कोना हिमाचल प्रदेश के किन्नौर क्षेत्र में है। विल्सन महाशय के बारे में यह विख्यात है कि उसे तत्कालीन गढ़वाल नरेश ने संरक्षण दिया था तथा गढ़वाल को विकसित करने का संकेत भी। जगह-जगह बनायी गयी चट्टियां (विश्राम स्थल) उन्हीं विल्सन महाशय का पुरुषार्थ है। उन्होंने गढ़वाली महिला से शादी भी की थी।

हरसिल से इस क्षेत्र का अंतिम गांव धराली बहुत दूर नहीं है। ६-७ किलोमीटर दूरी पर यह गांव भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि सर्दियों में जब गंगोत्री क्षेत्र पूरी तरह बर्फ से ढंक जाता है और गंगोत्री मंदिर के द्वार बंद हो जाते हैं, तब मुख्य प्रतिमा को धराली नामक गांव में लाया जाता है और गंगोत्री के द्वार खुलने तक यहीं मुख्य प्रतिमा की पूजा-अर्चना की जाती है। यहां के रावल ब्राह्मण मुख्य रूप से स्वयं को इस पूजा-अर्चना का हकदार मानते हैं। गाड़ी जलपान के लिए यहां रुकी थी, इसलिए नजर वहां फैले प्राकृतिक सौन्दर्य से अछूती न रह सकी।

उत्तर पश्चिम की ओर गंगा का पाट है। पूर्व की ओर हिममंडित शिखर है। बस स्टैण्ड के बिल्कुल पास एक ऐसे मंदिर के ऊपरी भाग के दर्शन होते हैं, जो चार-पांच वर्ष पहले ही खुदाई में हमारे सामने आया है। दूर से देखने पर मंदिर का केवल ऊपरी हिस्सा ही दिखाई देता है, परंतु पास पहुंचकर और सीढ़ियों द्वारा नीचे उतरने पर पता चलता है कि इस मंदिर की नींव कितनी गहरी है। मंदिर के बारे में सूचना पट्ट पर लिखा गया है—कल्पकेदार (शिव मंदिर) यह प्राचीन मंदिर शिलाखण्डों को तराश कर बनाया गया है, जिसका कहीं कोई मुख्य अथवा अन्य द्वार नहीं है। मंदिर के निचले हिस्से से लगभग ५-६ फुट ऊपर शिव की दो वर्ग फुट चौड़ी प्रतिमा है, जिसमें शिव की मूंछें स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। मंदिर के थोड़ा आगे एक हौली भी है, जिसमें पानी भरा हुआ कहा जा सकता है कि यह एक बहुत ही आकर्षक मंदिर है। इस क्षेत्र में और भी कितने ही मंदिर होंगे, जिनकी अब भी इस क्षेत्र के लोगों को तलाश है।

धराली से लांगला तक यात्रा पुनः भागीरथी के दाहिनी ओर से आगे बढ़ती है। थोड़ा और ऊपर जाने पर लंका के बाद भैरो घाटी को मिलाता हुआ जाड़ गंगा के ऊपर बना विशाल पुल है। पुल पर खड़े होकर यदि आप नीचे झांकना चाहें, तो दृष्टि



कैम्प-१ से शिखर की ओर

थक-सी जाती है। यह पुल नदी तल से लगभग २०० फुट ऊपर तथा लगभग तीन सौ फुट लम्बा है। जाड़ गंगा का पानी दर्पण-सा स्वच्छ है। भैरो घाटी से गंगोत्री मात्र दस-ग्यारह किलोमीटर दूर रह जाती है। नदी के दोनों ओर विशाल वृक्ष हैं, विशाल-चट्टानें हैं और उनमें से पतली-सी धारा के रूप में भागीरथी का तीव्र प्रवाह है।

गंगोत्री पहुंचने पर अथाह शान्ति मिलती है, क्योंकि बस-यात्री लम्बी यात्रा से उकता-सा जाता है। तीखे मोड़ों से गुजरती बस में कितने ही लोगों को बेहोशी आने लगती है। कुछ लोगों को उल्टी की भी शिकायत होने लगती है। गंगोत्री दिव्य स्थल है। यहां पूर्व की ओर से उतरती भागीरथी दक्षिण से उतरती केदार गंगा से मिलकर गौरी कुण्ड के विशाल प्रपात के माध्यम से यह विशाल जलधारा फुहारों की वर्षा करती है। यहां मनुष्य को प्रकृति के अलौकिक रूप के दर्शन होते हैं और चेतना में रच बस जाती हैं दिव्य अनुभूतियां। पूर्व में भागीरथी की पृष्ठभूमि में सुदर्शन पर्वत, चतुर्भुज आदि शिखर दिव्य लोक के सौन्दर्य का परिचय भी देते हैं। उन शिखरों पर सूर्यास्त की किरणें निश्चित तौर पर ऐसा ही दृश्य उपस्थित करती हैं।

गंगोत्री का भ्रमण व्यक्ति में एक निश्चित संकल्प को सहज ही जागृत कर देता है, जो भगीरथ की याद करके श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है। उस महापुरुष को शत-शत प्रणाम, जिसने गंगा के अमृतमय स्रोत को इस धरा पर घर-घर तक पहुंचाया है।

गंगोत्री में गंगा के मंदिर के अतिरिक्त भगीरथ की दिव्य शिला भी है। स्थानीय पंडित यात्रियों को इतना ही बता देते हैं कि यहीं पर राजा भगीरथ ने कठोर तपस्या की थी, जबकि पौराणिक तथ्यों के अनुसार श्रीमुख (श्रीकंठ) सुमेरु (सतोपंथ) आदि शिखरों पर उग्र तपस्या के बाद भगीरथ गंगा के जल को इहलोक में लाने में सफल हुए थे। समुद्र तल से १००२० फुट ऊंचाई पर स्थित गंगोत्री में आजकल बस सीधे पहुंचती है, जबकि गोमुख तक की यात्रा जारी रखने के लिए व्यक्ति को गंगोत्री से साढ़े सत्रह किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है।

गोमुख तक का यह मार्ग अंतिम एक किलोमीटर को छोड़कर, दुर्गम नहीं रह गया है। सम्पूर्ण मार्ग में लगभग छः फुट चौड़ा रास्ता तैयार है, जिस पर चीड़बासा, भोजबासा आदि महत्वपूर्ण पड़ावों के अतिरिक्त स्थान-स्थान पर जलपान के लिए बनी दुकानें भी हैं। गंगोत्री से चीड़बासा तक व्यक्ति घने जंगल में से गुजरता है। पहले छह-सात किलोमीटर की सामान्य-चढ़ाई चढ़ता हुआ वह पानी के विभिन्न प्राकृतिक स्रोतों का आनन्द लेता हुआ चलता चला जाता है। उसे किसी तरह की कोई कठिनाई महसूस नहीं होती, क्योंकि इन छोटे-छोटे झरनों का जल थकान मिटाकर तरोताजा करनेवाला है।

यदि यात्री ने अपनी यात्रा का आरम्भ प्रातः ही कर लिया है, तो सूर्य की प्रथम किरणों के आलिंगन से पहले ही वह चीड़बासा के आस-पास पहुंच जाता है। चीड़बासा से पहले ही भोज-पत्रों के हरे-भरे वृक्ष आकर्षित करना शुरू कर देते हैं। यहां प्रायः यात्री इन वृक्षों की छाल उतारने में व्यस्त देखे जाते हैं, अथवा वे उसे अपने सामान में लपेटकर ऐसा अनुभव करते हैं, जैसे उन्होंने किसी अमूल्य निधि को पा लिया हो। चीड़बासा तक के पैदल मार्ग की विशेषता यह है कि दिन में भी आपको बहुत कम धूप का सामना करना पड़ता है। अन्य आकर्षण यह है कि भागीरथी के उस पार


चुनने से पहले
'वूलमार्क' का निशान देखें !
और फिर निश्चिन्त हो कर खरीदें


OCM
इर्वीइस
बेहतरीन फैब्रिक
बी एस एल इंडिया लि. का उत्पाद।
और अन्य प्रमुख
स्टोर्स में उपलब्ध।

दाहिनी ओर विभिन्न अनाम पर्वत दिखाई देते हैं। कुछ लोग चीड़वासा में ही अपना पड़ाव डाल लेते हैं। गंगोत्री से नौ किलोमीटर दूर चीड़वासा एक विश्रामगृह है, जिसके पास ही समतल मैदान भी है। यहां तम्बू आदि लगाये जा सकते हैं।

चीड़वासा से भोजवासा तक की पांच किलोमीटर की यात्रा बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं है, क्योंकि मार्ग के साथ-साथ पेड़ों की उपस्थिति नगण्य है। पीने का पानी जरूर एकाध जगह मिल जाता है, परंतु जगह-जगह चट्टानों के टूटने से धूल उड़ती रहती है और नीरसता का आभास होता है। परंतु सुखद आश्चर्य है कि भोजवासा के मोड़ पर दूर तक फैली हुई विशाल घाटी के भव्य दर्शन होते हैं। इस मोड़ के ठीक नीचे 'लालबिहारी बाबा' का आश्रम है। उसी के साथ सटा हुआ गढ़वाल मण्डल विकास निगम का यात्री आवास गृह है और उसी के साथ बनी हुई कुछ बैरेक हैं, जिन पर लिखा है 'पुलिस स्टेशन भोजवासा'। आश्चर्य की बात तो यह है कि मैंने कभी यहां पुलिस को नहीं देखा। हां, इस बार अवश्य एक नया परिवर्तन दिखाई दिया। वहां चाक से लिखा है—'होटल तथा रहने की सुविधा भी उपलब्ध है।'

अभियान से लौटते समय इस होटल के कर्मचारी हमारे इर्द-गिर्द मंडराते रहे, क्योंकि गढ़वाल मण्डल के यात्री आवास गृह के बिल्कुल सामने हैं ये कमरे। गढ़वाल मण्डलवाले प्रति बिस्तर ४० रुपये लेते हैं और पुलिस स्टेशन के संरक्षक प्रति बिस्तर २५ रुपये।

पहली बार १० जून को पुलिस के कुछ सिपाहियों को भी देखा था। गोमुख में घटी दुखद घटना के कारण पुलिस और सेना के जवान फावड़ों और बेलचों के साथ यहां पधारे थे और आधे घण्टे के बाद ही लौट गये थे। यह मानव द्वारा फैलाया गया मलबा थोड़े ही था कि फावड़ों और बेलचों से उठाया जाता। यह तो प्रकृति का कोप था, जिसके लिए कम से कम बुलडोजर की जरूरत तो थी ही।

भोजवासा से गोमुख की दूरी लगभग चार किलोमीटर है। परंतु इस दूरी को तय करने के लिए सवा घण्टा तो लग ही जाता है। हमने अपना तम्बू गोमुख से लगभग एक किलोमीटर समतल स्थान पर लगाया। यहां चारों ओर स्थिर शिखरों के बहुत समीप थे हम लोग।

३ जून की सुबह हमने जल्दी ही अपने कैम्प से चल देना उचित समझा, क्योंकि हम नन्दनवन शीघ्र पहुंचना चाहते थे। गोमुख तक के मार्ग में कोई बाधा नहीं थी। सारी बाधाएं तो गोमुख के बाद ही शुरू होती हैं। ७ बजे से पहले ही हम गोमुख से प्रकट होती भागीरथी के बहुत समीप थे। आश्चर्य हुआ जब हमने कुछ साधु-महात्माओं तथा श्रद्धालुओं को प्रातःकाल के समय ही नंगे बदन मालिश करते हुए और फिर गोमुख के इस पुण्य प्रवाह में स्नान करते देखा। मन तो बहुत हुआ कि हम भी गोमुख में स्नान के माध्यम से पापमुक्त हो जायें, पर हम तो किसी और लक्ष्य को लेकर निकले थे।

दस-पन्द्रह मिनट के गोमुख विश्राम के बाद पुनः चलना पड़ा। गोमुख से पहले ही इधर-उधर बिखरे छोटे-बड़े पत्थर और नीचे कठोर बर्फ शुरू हो जाती है। ऐसा मार्ग समतल नहीं रह पाता। सभी सदस्य कभी ऊपर, तो कभी नीचे, उन अस्थिर पत्थरों के ऊपर चल रहे थे। वस्तुतः हो यह रहा था कि हिमनद के भयंकर जबड़े खुले हुए थे, उनमें जैसे ही कोई छोटा पत्थर गिरता, एक भयंकर गूंज उठती और चारों ओर फैल जाती। हमें इन पत्थरों का बार-बार निरीक्षण एवं परीक्षण करना पड़ता।

हम आश्चर्यचकित थे, क्योंकि दो वर्ष पहले आने पर ऐसा रास्ता नहीं था। पहले रास्ता बायीं ओर के पहाड़ के साथ-साथ काफी ऊंचाई पर था, जो रक्तवर्ण हिमनद के मुख्य द्वार तक चढ़ता जाता था, जबकि आज उस ऊंचाई के सभी पत्थर लुढ़कते-लुढ़कते गंगोत्री हिमनद की ओर काफी नीचे चले आये थे। एक अन्य आश्चर्य रक्तवर्ण द्वार के पास पहुंच कर यह हुआ कि इस हिमनद से उतरनेवाली नदी अमरगंगा का सीमित जल असीमित हो गया था और गंगोत्री हिमनद से गिरकर अदृश्य होते समय उसकी आवाज भयावनी लग रही थी।

हमें सीधे चलना था। लगभग छः किलोमीटर तक चलते हुए भागीरथी शिखरों के आधार में स्थित नन्दनवन नामक क्षेत्र में पहुंचना था, जिसके बारे में ऐसा कहा जाता है कि नन्दनवन (नन्दनकानन) में देवी-देवता स्वच्छन्द विचरण करते हैं। रक्तवर्ण के आगे का रास्ता भी उसी प्रकार का था। जगह-जगह छोटी-छोटी चट्टानें, टूटते हिमखण्ड, गूंजती आवाजें और कांपती ध्वनियां। मुझे बार-बार सदस्यों से कहना पड़ा, "बायीं ओर से गिरते पत्थरों पर ध्यान लगा कर चलिए। बैठना भी है, तो ध्यान बायीं ओर होना चाहिए।"

यही नहीं, सदस्यों का ध्यान हिमनद में धंसते बड़े-बड़े पत्थरों की ओर भी आकर्षित करता, क्योंकि हम किसी भी स्थिति में छोटी से छोटी दुर्घटना के भुक्तभोगी बनने के लिए तैयार नहीं थे। जगह-जगह मुझे दांतों तले अंगुली दबानी पड़ी। मेरे आश्चर्य की सीमा न थी, क्योंकि स्थान-स्थान पर अजीब-से परिवर्तन थे। यही प्रश्न उभरता कि कैसे हो रहा है यह परिवर्तन? क्या यह खाड़ी युद्ध के कारण है, या पर्यावरण के कुछ अन्य कारणों से? कहीं यात्रियों के बढ़ते दबाव के कारण तथा उनके लिए सुविधाएं जुटाने के लिए खोले गये होटलों के कारण तो यह परिवर्तन नहीं हो रहा? मैंने इन होटलों में मिट्टी के तेल का प्रयोग होते नहीं देखा। देखा है, तो लकड़ी को जलते, झाड़ियों को जलते। कुछ भी हो परिवर्तन अप्रत्याशित थे।

नन्दनवन से पहले यहां चतुरंगी हिमनद का पानी गंगोत्री हिमनद में मिल रहा है। यहां की बायीं ओर के रास्ते में अभूतपूर्व परिवर्तन था। पहले जहां हम उछलते-कूदते दो-दो की पंक्ति में गये थे, वहीं आज पांव के अगले हिस्से को जमाने के लिए हमें भगीरथ प्रयास करना पड़ रहा था। इस बार बर्फ पहले से ज्यादा थी, इसलिए चतुरंगी ग्लेशियर से नन्दनवन कैम्प आने के लिए हमें लगभग तीन-चार सौ फुट तक बर्फ में चढ़ना पड़ा। नन्दनवन पहुंचकर सुख मिला, क्योंकि यहां आधार शिविर स्थापित करना था तथा खाने-पीने की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध होने की सम्भावना भी थी। यही नहीं, शिखरों के उच्च भाग यहां से दिखाई दे रहे थे। कई बार उड़ते पक्षियों से ईर्ष्या भी होती थी कि होड़ लगाकर क्यों नहीं हम इनसे बाजी मार लेते और शिखरों के ऊपरी हिस्से में पहुंच जाते? क्या जरूरत है इतना ताम-झाम इकट्ठा करने की? परन्तु फिर से यथार्थ लोक में लौटना पड़ता, क्योंकि आगे बढ़ने के लिए कैम्प लगाने ही पड़ेंगे। अच्छी बात यह थी कि सभी सदस्य चुस्त और दुरुस्त थे।

४ जून को हमने वासुकि ताल में अपना कैम्प स्थापित करने का निर्णय लिया। वासुकि ताल वहां से लगभग आठ किलोमीटर दूर था और चढ़ाई बिल्कुल सीधे ऊपर उठती हुई। वस्तुतः मध्य भाग में एक जलधारा-सी उठती है, जो वासुकि ताल से थोड़ा पहले भागीरथी और वासुकि पर्वत के पश्चिमी कोने से जा मिलती है। वह यहां से लगभग ५०० फुट सीधे नीचे उतर कर और ग्लेशियर के खुले जबड़ों से रास्ता बनाते, छोटी बजरी की दीवार को तिरछे पार करते हुए वासुकि पर्वत के नीचे विशाल वासुकि ताल से जा मिलती है। यह एक अद्भुत और अनुपम कुण्ड है, जिसका जल भी अन्ततः भागीरथी का ही अंश बनता है।

हमारे आश्चर्य की सीमा न रही, जब हम इस किनारे पर पहुंचे, क्योंकि नीचे का रास्ता पूरी तरह बदल गया था। ग्लेशियर जो पहले काफी पीछे था, न जाने कैसे चलते-चलते उसने अपने पंख ताल तक फैला लिये थे। अब वासुकि ताल तक पहुंचने के लिए मार्ग कई गुना खराब हो चुका था। विद्यार्थियों के सामर्थ्य को देखते हुए मैं किसी प्रकार के अतिरिक्त जोखिम के लिए तैयार नहीं था। वासुकि ताल तक पहुंचाने आये हमारे बोझी अंगूठा दिखा कर लौट चुके थे। अब मेरे पास केवल एक ही विकल्प शेष था और वह था केवल भागीरथी शिखर, जिसके लिए अग्रिम आधार शिविर इसी पश्चिमी किनारे से थोड़ा नीचे उस स्थान पर लगाया जाता है, जहां भागीरथी-२ का मुख्य हिमनद उतरते-उतरते नन्दनवन की ओर मुड़ जाता है।

आज कुछ सदस्य सिरदर्द से परेशान थे। शाम का समय कैम्प के बाहर गाते-झूमते गुजरा। हमारे साथियों में से एक पहले भी इस क्षेत्र में आया था। अतः अप्रकट रूप से वह हमारा दिशा-निर्देशक था। अप्रकट रूप से इसलिए कहा है, क्योंकि अंतिम निर्णय पर्वत की दिशा को देखते हुए ही लिया जाता है। अंधविश्वासी बनकर पर्वत पर चढ़ना मूर्खता है। शाम को यह निर्णय तो ले ही लिया गया कि कल विद्यालय के सदस्यों को बर्फ में चढ़ने की विभिन्न प्रकार की विधियों का प्रशिक्षण दिया जायेगा तथा कठिन ढलान पर चढ़ने का अभ्यास भी कराना होगा।

प्रातः सात बजे ही राजू थापा, बलवंत, वीरेन्द्र तथा राजेन्द्र रावत सामान लेकर कैम्प—१ की ओर चल दिये थे। वासुदेव और मैं अपने विद्यार्थी सदस्यों के साथ आरोहण की विधियां सिखाने हेतु भागीरथी शिखर की ओर चल पड़े। लगभग आधा घण्टा चलने के बाद प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त बर्फीला स्थान दिखाई दिया। यही आज का हमारा कार्य क्षेत्र था। हमारा सौभाग्य था कि शुचि और अनुज, दोनों ही विश्वास के साथ हिम कुठार का प्रयोग तथा फ्रण्ट प्वाइंट क्लाइंबिंग कर रहे थे। उन्हें बार-बार ऊपर चढ़ाया गया तथा नीचे भी उतारा गया। कुछ समय के बाद हम थोड़े और कठिन ढलान की ओर बढ़ चले।

वासुदेव ने बर्फ में गाड़नेवाली लम्बी खूंटी को बर्फ में धंसा कर आरोहण में प्रयुक्त होनेवाले रस्से को स्थिर बना कर नीचे लटका दिया था। यह नायलान का अत्युत्तम प्रकार का रस्सा था, जिसकी लम्बाई १०० फुट के आस-पास थी, यानी प्रशिक्षणार्थियों को १०० फुट तक के कठिन ढलान को पार करना था। कमर में 'सीट-हार्नेस' बांध ली गयी थी और उसमें जुमार लटका लिया गया था। जुमार पर्वतारोही का एक ऐसा सशक्त शस्त्र है, जिसे एक बार रस्से में लगा दिया जाए, तो उसके दांत उस रस्से में इस प्रकार धंस जाते हैं कि वह किसी भी हालत में, कितना भी जोर पड़ने पर, नीचे की ओर नहीं आ सकता और उसमें इतनी क्षमता है कि दो हजार किलोग्राम तक के भार को आसानी से सहन कर सकता है। जुमार केवल ऊपर की ओर ही चलता है। यदि उसका मुख नीचे कर दिया जाए, तो नीचे की ओर चलना उसकी सहज प्रकृति होगी। जुमारिंग करने का एक आसान तरीका यह है कि व्यक्ति बायें हाथ से लटके रस्से को पकड़ ले, अपने शरीर को ऊपर उठाये और साथ ही एक ही क्रिया में दाहिने हाथ से जुमार को ऊपर की ओर ले जाये। इस प्रकार आसानी से व्यक्ति ऊपर चढ़ता चला जाता है तथा कठिन से कठिन ढलान पर भी सामान्य पर्वतारोही को परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता। मैं आज के प्रशिक्षण से पूरी तरह से सन्तुष्ट था।

दोपहर होने तक ऊपर गये लोग लौट आये थे। उन्होंने कैम्प के लिए उचित स्थान ढूंढ़ लिया था, यद्यपि अपनी जरूरतों को देखते हुए उस कैम्प को हम और आगे ले गये थे। मनपति (रसोइया) ने आज आधार शिविर के अनुरूप भारी-भरकम भोजन परोस कर हमारे हौसले बुलन्द कर दिये। छोले-भटूरे और खीर का ऊंचाई पर मिलना एक अद्‌भुत अनुभव है।

६ जून की सुबह हमने जल्दी चलने का निर्णय ले लिया, क्योंकि इस क्षेत्र में ७ बजे के आस-पास उगते सूर्य की किरणें स्पर्श पा लेती हैं और ९ बजते-बजते बर्फ की तह भी कोमल हो जाती है, जिससे पांव गहराई तक धंसने लगते हैं। यदि इस तरह पैर गहरे में धंसते रहे, तो उन्हें निकालने के लिए काफी शक्ति व्यर्थ चली जाती है। हम एडवांस बेस कैम्प से दक्षिण पूर्व की ओर बढ़ रहे थे। सामने केवल भागीरथी—१ दिखाई दे रहा था और दक्षिणी कोने में भागीरथी—२, भागीरथी—३ का कहीं कोई नामोनिशान न था। दूर एक उभरा पठार-सा दिखाई दे रहा था, जिसके पास कल हमारे लोगों ने सामान छोड़ा था।

हम धीरे-धीरे ऊपर की ओर बढ़ रहे थे। तीन-साढ़े तीन घण्टे चलने के बाद हम एक ऐसी धार को पकड़ चुके थे, जो पश्चिम की ओर धीरे-धीरे उठते हुए समुद्र तट से ६५१२ मीटर ऊंचे भागीरथी—२ के शिखर से मिल रही थी। बर्फ की तरह कोमल थी, परंतु आश्चर्य यह था कि इस क्षेत्र में बर्फ की ऊपरी तह पपड़ी-सी जमी हुई थी, जो हमारे कदमों के साथ शोर भी मचा रही थी। हम उस स्थान पर थे, जहां हमारे साथियों ने सामान छोड़ा था। फिर भी न जाने क्यों, मैं इस स्थान पर कैम्प लगाने में संतुष्ट नहीं था, क्योंकि यदि पश्चिमी शिखर की ओर थोड़ा और आगे जाकर कैम्प लगाया जाये, तो हमें आसानी रहेगी। लेकिन कुछ सदस्य शिखर-२ के बारे में भ्रमित हो रहे थे, क्योंकि इस क्षेत्र में हमसे पहले आये अभियान दलों के पांवों के निशान पश्चिमी कोने की ओर न उठ कर, सीधे दक्षिण की ओर बढ़ रहे थे।

विचार-विमर्श के बाद हमने कैम्प पश्चिमी की तरफ ही लगाया। दक्षिण की ओर भागीरथी—३ के लिए मार्ग था। आज की शाम कभी-कभी बादल आते और चारों तरफ अपनी सफेदी बिछा कर भ्रमजाल में उलझा कर चल देते। हमें चिंता नहीं थी, क्योंकि टेण्ट रूपी सशक्त दुर्ग तैयार हो चुका था और खाने-पीने के सामान की कमी नहीं थी। हलकी-हलकी बर्फ गिर रही थी।

७ जून को हम जल्दी से जल्दी इस क्षेत्र से लौटना चाहते थे। आशंका थी कि यदि आई०एम०एफ० द्वारा स्वीकृति प्राप्त क्लब इस क्षेत्र में आ गया, अथवा मौसम बिगड़ गया, तो हमारे मंसूबे धरे-धराये रह जाएंगे। अतः ७ जून को प्रातः ४ बजे चलने को निर्णय हुआ। हम चलने के लिए तैयार थे, परंतु प्रकाश का कहीं नामोनिशान न था, यानी मौसम के तेवर बदले हुए थे। हमसे पूर्व क्योंकि सैन्य अभियान दल इसी शिखर पर विजय प्राप्त कर चुका था, इसलिए अधिकतर साथियों की यह इच्छा थी कि उन्हीं के बनाये रास्ते पर चलें। इसलिए मौसम खुलने पर साढ़े छह बजे हम भागीरथी—३ की ओर जा रहे पद-चिह्नों का अनुसरण कर रहे थे।

भागीरथी—३ और भागीरथी—२ के मोड़ पर थोड़ा पहले उन्होंने अपनी दिशा उत्तर-पश्चिम की ओर मोड़ दिया था। धीरे-धीरे बढ़ते हुए वे एक विशाल चट्टान तक पहुंचे थे, जहां से उन्हें शिखर की ओर मुड़ना पड़ा था। इसी विशाल चट्टान तक पहुंचते-पहुंचते शुचि और अनुज की बुरी हालत हो गयी थी। यहां तक पहुंचने के लिए हमें एक प्रकार से परिक्रमा-सी करनी पड़ी थी। मैं इसके विरुद्ध था। मैंने कार्यक्रम स्थगित करने का आदेश दिया। इसी पत्थर से एक सीधा और छोटा बर्फीला मार्ग अपना कर एक बजे से पहले ही शुचि, अनुज, बलवंत और वीरेन्द्र कैम्प लौट आये, जबकि वासुदेव, राजू तथा मैं आगे के मार्ग निर्धारण तथा 'रोप फिक्स' के लिए आगे चल दिये। मैंने उन्हें अन्य सीधे मार्ग का सुझाव दिया। इस सीधे, छोटे रास्ते में कुछ विशेष कठिनाई नहीं थी।

८ जून को कैम्प से इस सीधे रास्ते पर चलते हुए हमें आधा घण्टा भी नहीं लगा था कि उन पत्थरों से बहुत दूर नहीं थे, जहां से कल हमारे साथी लौटे थे। वहां पहुंचने के लिए हमें ज्यादा से ज्यादा तीस-चालीस मिनट की ही जरूरत थी। यह छोटा रास्ता कठिन भी नहीं लगा। यह एक प्रकार से शिखर की निर्णायक धार के ठीक मध्य से होता हुआ शिखर की ओर बढ़ रहा था। इन बड़े पत्थरों के समानान्तर मार्ग में छोटे-छोटे कितने ही पत्थर दिखाई दे रहे थे। इसी धार के बीच से एक जमा नाला-सा ऊपर की ओर उठता दिखाई दे रहा था, जिसके दाहिनी ओर भी छोटे-बड़े पत्थर थे, जिन पर कीली ठोक कर रस्से को स्थिर बनाया जा सकता था।

हम इस नाले के दाहिनी ओर यानी पत्थरों के बायें किनारे के पास से ऊपर की ओर बढ़ रहे थे। आश्चर्य यह था कि वासुदेव के लिए यह ढलान आसान था और जिस तेजी से वह रस्से पर रस्सा स्थिर बना रहा था, उससे लग रहा था कि कुछ ही समय में हम इस शिखर को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करने में सफल हो जाएंगे। परन्तु आज मुझे उसे मना कर लौटाना पड़ा।

इन दिनों के अनुभवों से एक बात साफ थी कि मुख्य शिखर की ओर धूप बहुत जल्दी आ जाती है, इसलिए आठ-साढ़े आठ से पहले ही बर्फ पिघलनी शुरू हो जाती है और कठिन चढ़ाई और भी कठिन हो जाती है। यही नहीं, ऐसा भी होता है कि बर्फ में गाड़ी गयी कीलियां ढीली पड़ कर बाहर निकलने की कोशिश करती हैं, जिससे अजीब-सा जोखिम उभर आता है। इसलिए निर्णय हुआ कि हम शाम होने से थोड़ा पहले पर्वत शिखर की ओर प्रस्थान

करें, क्योंकि भागीरथी—२ के इस क्षेत्र की ओर चार-साढ़े चार बजे के आस-पास ही सूर्य किरणें तिरछावाली हो जाती हैं, इसलिए शाम के समय यह पूरा क्षेत्र आरोहण की दृष्टि से उपयुक्त एवं सुरक्षित रहता है।

चार बजे के आस-पास हम अपनी निर्णायक यात्रा पर निकल पड़े थे। आधे घण्टे में ही हमने इस क्षेत्र में फैली धूप को विदाई दे दी थी। हम अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर बढ़ रहे थे। हर आधे घण्टे के बाद हम रुकते, ग्लूकोज एवं इलक्ट्राल डाल कर जलपान करते, जूस पीते और नये उत्साह और मनोबल से आगे चल देते। यह सिलसिला जारी रहा। ऊपर बताये नाले के पास जुमारिंग करते सदस्य सात बजे के आस-पास पहुंच गये थे।

अब हमारी यात्रा का अंतिम चरण था, यानी अंतिम दो-ढाई सौ फुट। सूर्य विदा हो गया था, परंतु उसका प्रकाश विद्यमान था। हमारे पास और रस्से नहीं थे, पर राजू अपने फार्म में था। वह नीचेवाले रस्से लेकर ऊपर की ओर बढ़ता और वासुदेव उसी के सहारे ऊपर ही ऊपर चल देता। एक और रस्से की दूरी तय हो गयी थी। तभी वासुदेव प्रसन्न मुद्रा में बोल उठा, "डॉक्टर साहब, अब तो विजय होगी। संभवतः पहले से ही बंधा रस्सा उसे दिखाई पड़ गया था। यह संभवतः हमसे पहले आए किसी अभियान दल का होगा। उसे उस रस्से का परीक्षण करना पड़ा कि कहीं किसी तरह कोई जोखिम तो नहीं। वह धीरे-धीरे ऊपर चढ़ गया था तथा मांगलिक, शुचि, मैं और राजू क्रमशः नीचे से ऊपर बढ़ते रहे।

शिखर से २०-२५ फुट नीचे एंकर बनाये गये सुरक्षित स्थान पर सदस्य रुकते और अंतिम चरण की यात्रा पूरी करके लौट आते। साढ़े आठ के आस-पास अंतिम सदस्य शिखर के इर्द-गिर्द निहार रहा था। बहुत हलके प्रकाश में श्वेत पर्वत शृंखलाएं अपना आभास दे रही थीं।

इसी आभास को संजोये हमें लौटना था।

लौटना कठिनाईभरा होता है। पुनः वासुदेव आगे की ओर, अनुज, शुचि, राजू और मैं क्रमशः पीछे से प्रतीक्षारत पंक्ति बनाकर आगे बढ़ते हुए जूतों के नीचे नुकीले दांतोंवाले कांटे (क्रैम्पन) शिखर से पहले ही बांध लिये थे। बर्फ थोड़ी सख्त थी। उतरने में क्रैम्पन का महत्वपूर्ण योगदान था। वे हलकी-सख्त बर्फ में धंसते और हमारा संतुलन बिगड़ने न देते। शिखर से उतरने में हमें कोई विशेष असुविधा नहीं हुई। लगभग एक घण्टे के भीतर ही, यानी साढ़े नौ बजे हम अपने कैम्प में पहुंच गये थे।

एडवांस बेस कैम्प पहुंचने में कोई ज्यादा समय नहीं लगा। १० जून को प्रातः बर्फानी अंधड़ की परवाह किये बिना हमने भोजवासा की ओर कूच किया। सब कुछ बदला-बदला-सा था। नन्दनवन की निचली धार तक बर्फानी अंधड़ का प्रकोप जारी रहा, परंतु गंगोत्री ग्लेशियर में पहुंचते ही वर्षा की हलकी-हलकी बूंदों ने हमारा स्वागत किया।

एक बजे के आस-पास गंगोत्री में दूर-दूर तक फैले कोहरे को भेदते गोमुख के पास उतर आये थे। आज न जाने क्यों गोमुख चुपचाप, उदास-सा था। कहीं कोई यात्री नहीं, किसी परिन्दे तक की आवाज नहीं। कुछ देर तक मैं उस मौन-निमंत्रण को समझने का असफल प्रयास करता रहा। २०-२५ मिनट के बाद चलना शुरू किया। लगभग एक किलोमीटर नीचे चाय की एक दुकान पर चाय पी रहे थे कि पुलिस और सेना के सिपाही स्ट्रेचर, बेलचे तथा फावड़े आदि लेकर चलते दिखाई दिये। अब समझ पाया गोमुख की चुप्पी का रहस्य। आस-पास कहीं भारी भू-भ्रंश हुआ था। सफल आरोहण का उत्साह न जाने कहां खो गया था।

धीरे-धीरे गंगोत्री से उत्तरकाशी और फिर देहरादून पहुंच कर अभियान दल अपनी विजय गाथा में व्यस्त था। यह एक उपलब्धि थी, क्योंकि अनुज मांगलिक एवं शुचि के लिए यह एक अकल्पित यथार्थ था। ●

सन्त तुकाराम

प्रस्तुति : सरोज मित्तल



सन्त तुकाराम की प्रारम्भिक जीवन-गाथा एक ऐसे सामान्य व्यक्ति की कहानी है, जिसके विषय में कभी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वह आगे चलकर अपने समकालीन समाज को भक्ति के एक नये रंग से ओतप्रोत कर देगा

महाराष्ट्र के एक छोटे-से गांव देहू में सन् १६०८ में सन्त तुकाराम का जन्म हुआ था। देहू पूना से लगभग ३० किलोमीटर दूर इन्द्रयाणी नदी के तट पर स्थित है। सम्पूर्ण महाराष्ट्र के लोग इस नदी को गंगा की तरह पवित्र मानते हैं। उस समय इस गांव की जनसंख्या कुछ सौ लोगों से अधिक नहीं थी। उनके पिता बोल्होबा की किराने की एक छोटी-सी दुकान थी। इसके अतिरिक्त वे एक सरकारी अधिकारी भी थे और उनका काम गांव की व्यापारिक गतिविधियों पर नजर रखना तथा दुकानदारों से कर वसूल करना था। वे बहुत धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे और उनकी गिनती आर्थिक रूप से समृद्ध तथा प्रतिष्ठित लोगों में होती थी।

सन्त तुकाराम की माता कनकाई भी पिता की तरह बहुत धार्मिक महिला थीं और पूरे परिवार की अपने कुल देवता विट्ठल (महाराष्ट्र में भगवान कृष्ण विट्ठल अथवा पांडुरंग के नाम से जाने जाते हैं) में असीम आस्था थी। तुकाराम के दो

भाई थे—बड़े भाई सावाजी और छोटे कान्होबा।

तुकाराम का बचपन सामान्य बच्चों जैसा ही था। वे गांव के दूसरे बच्चों के साथ खेलते-कूदते और साथ ही दुकान में अपने पिता का हाथ भी बंटाते। उनके पिता चाहते थे कि बड़ा होने के नाते सावाजी दुकान का काम-काज संभाल लें। लेकिन सावाजी की व्यापार में कोई दिलचस्पी नहीं थी और उनका ज्यादातर समय विट्ठल की पूजा-उपासना में ही जाता था। पिता अब बूढ़े हो चले थे, अतः दुकान की सारी जिम्मेदारी तुकाराम के कंधों पर आ गयी।

> तुकाराम ने अपने आलोचकों के खिलाफ कभी एक शब्द भी नहीं कहा। यहां तक कि अपने विरोधियों के सभी अत्याचारों को उन्होंने चुपचाप सह लिया। जो कुछ बीते, वह सहन कर लेना और किसी के दिल को दुखी न करना—यह उनका जीवन-दर्शन था।

उस समय तुकाराम की उम्र १३ वर्ष थी। उन्होंने अपनी सूझबूझ से व्यापार को बहुत आगे बढ़ाया और इसके साथ-साथ परिवार की खुशहाली भी बढ़ती गयी। गांव के सभी लोग इस बालक की व्यापारिक सफलता से आश्चर्य-चकित थे। खुशहाली बढ़ी, तो पिता ने बाल्यकाल में ही तुकाराम का विवाह कर दिया। उनकी पत्नी रखूमाबाई का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। वे दमे की मरीज भी थीं। अतः दो वर्ष बाद ही एक समृद्ध परिवार की लड़की जीजा से उनका दूसरा विवाह कर दिया गया।

जीवन सामान्य रूप से चल रहा था। जब तुकाराम १७ वर्ष के हुए, तो विपदाओं का पहाड़ उनके परिवार पर टूट पड़ा। पहले उनके माता-पिता का देहान्त हुआ, फिर उनकी भाभी भी चल बसीं। उनके बड़े भाई सावाजी को अपनी पत्नी के निधन से बहुत बड़ा सदमा पहुंचा और उन्होंने परिवार का त्याग करके संन्यास ले लिया। अब तुकाराम परिवार तथा व्यापार की देखभाल करने के लिए बिल्कुल अकेले रह गये थे। परिवार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं बचा था, जो १७ वर्षीय तुकाराम को ढांढ़स बंधा सकता, अथवा इस कठिन परिस्थिति में उनकी कुछ सहायता कर सकता।

विपदाएं यहीं पर समाप्त नहीं हुईं। एक के बाद एक उनका सिलसिला जारी ही रहा। १६३० में महाराष्ट्र भीषण अकाल से ग्रस्त हो गया। उसी साल अकाल के बाद इन्द्रयाणी में बाढ़ आ गयी। जिसके कारण सारी फसल नष्ट हो गयी। इसके अगले वर्ष ही इतना भीषण सूखा पड़ा कि खेतों की बुआई भी नहीं हो सकी और जानवर भूखे-प्यासे मरने लगे। हालत इतनी दुखदायी बन गयी कि लोगों को पेट की भूख मिटाने के लिए गांव में अनाज का एक भी दाना नहीं बचा और चारों तरफ भुखमरी फैल गयी। इन प्राकृतिक विपदाओं ने तुकाराम को कंगाल बना दिया। इसी दौरान उनकी पहली पत्नी चल बसीं और उनके बड़े पुत्र शान्तु का भी देहान्त हो गया।

तुकाराम के मन पर जीवन के इस कठोर तथा कड़वे सत्य का बहुत गहरा असर पड़ा। सन्त बनने के बाद उन्होंने भक्ति, ज्ञान तथा नीति से भरपूर अभंग अर्थात भक्ति-गीत लिखे, उनमें उस समय का वर्णन करते हुए वे कहते हैं—"इन सांसारिक दुखों से मेरा हृदय शोक से भर गया। मेरे माता-पिता स्वर्ग सिधार चुके हैं और सूखे ने मेरी सारी फसल तथा सम्पत्ति नष्ट कर दी है। यहां तक कि समाज में मेरी प्रतिष्ठा भी नष्ट हो चुकी है। मेरी पहली पत्नी भोजन के अभाव में दिवंगत है और चारों ओर मुझे केवल दुख के काले बादल मंडराते हुए नजर आते हैं।"

लेकिन ये दुख तथा विपदाएं तुकाराम को तोड़ नहीं सकीं। संसार के प्रति उनका मोह भंग हो गया था। उनके मन में नये संकल्प का जन्म हुआ—"मैं इस संसार तथा इसमें रहनेवाले लोगों से ऊब गया हूं। अब मैं विट्ठल की खोज में निकलूंगा। हे परमात्मा! मेरे मन की समस्त इच्छाओं को समाप्त कर दो और सभी सांसारिक वस्तुओं को त्यागने में मेरी सहायता करो।"

इसी के साथ एक सामान्य जीवन-गाथा ने एक असाधारण मोड़ ले लिया। परिवार के प्रति तुकाराम की आसक्ति समाप्त हो चुकी थी। देहू के निकट भामनाथ तथा भंडारा की निर्जन पहाड़ियों पर वे घंटों अपने विट्ठल के ध्यान में निमग्न बैठे रहते। सन्तों की संग और ज्ञानेश्वर, नामदेव तथा एकनाथ जैसे सन्तों द्वारा रचित ग्रन्थों का अध्ययन-मनन ही उनके जीवन का लक्ष्य बन गया था। भजन तथा कीर्तन उनकी उपासना के मुख्य साधन थे। तुकाराम को यह अहसास था कि सद्गुरु के मार्गदर्शन के बिना वे अपने विट्ठल तक नहीं पहुंच सकते। अपने समय के अनेक धर्म-गुरुओं का उन्होंने साथ किया, लेकिन उनमें से कोई भी तुकाराम को प्रभावित नहीं कर सका। इन गुरुओं के विषय में उनका कहना था कि इन गुरुओं का ज्ञान निजी अनुभव पर नहीं, बल्कि धार्मिक ग्रन्थों पर आधारित था।

इसी दौरान उनकी भेंट बाबाजी राघव चैतन्य से हुई, जिनसे उन्होंने नाममार्ग की दीक्षा ली। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति अपने छोटे भाई कान्होबा के नाम कर दी और वे अपना अधिकांश समय भजन-कीर्तन में बिताने लगे।

तुकाराम की दूसरी पत्नी जीजा हालांकि अपने पति के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थीं, फिर भी वे अक्सर अपने पति से झगड़ती रहती थीं। उनका कहना था कि उनके पति की ईश्वर-भक्ति ने ही उन्हें तथा उनके बच्चों को अभावों से भरा यह दीन-हीन जीवन जीने के लिए मजबूर कर दिया था। लेकिन तुकाराम ने अपनी पत्नी के अपशब्दों का कभी बुरा नहीं माना। जीजा की हर बात का उनके पास एक ही उत्तर था—'पांडुरंग।"

परमात्मा से मिलन के मार्ग में तुकाराम को अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। उन्होंने स्वयं यह स्वीकार किया कि उनका मन बहुत चलायमान था और उनकी इन्द्रियां सांसारिक सुखों की अभ्यस्त हो चुकी थीं। इन कमजोरियों से मुक्ति पाने के लिए उन्होंने अपने शरीर को तरह-तरह के कष्ट झेलने के लिए मजबूर किया। लगातार अनेक दिनों तक भूखे-प्यासे भामगिरि पर विट्ठल के ध्यान में मग्न बैठे रहते। फिर भी विट्ठल के दर्शन उन्हें नहीं हुए। इसके बावजूद वे हिम्मत नहीं हारे। अपने परमात्मा से कई बार वे निराशा की स्थिति में कहते—"मेरी समझ में नहीं आता कि हे परमात्मा, आप मेरे प्रति इतने उदासीन कैसे हो सकते हैं।"

भामनाथ की पहाड़ियों पर आखिर तुकाराम को अपने विट्ठल के दर्शन हुए। इस प्रसंग का वर्णन उन्होंने इन शब्दों में किया है—"भामगिरि पर मैं १५ दिनों से परमात्मा के ध्यान में खोया रहा। शेर, बिच्छू तथा सांप आदि जीव-जन्तु मुझे चारों ओर से घेरे हुए थे। बिच्छु तथा सांप के जहर का भी मेरे शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा... और तभी मुझे परमात्मा के दर्शन हुए। भगवान विट्ठल एक प्रकाश-पुंज के रूप में मेरे समक्ष प्रकट हुए...और मैं परमात्मा में उसी प्रकार विलीन हो गया, जैसे कपूर अग्नि में विलीन हो जाता है।"

धीरे-धीरे तुकाराम की ख्याति दूर-दूर के गांवों तक पहुंचने लगी और सुदूर क्षेत्रों से लोग उनके दर्शनों के लिए देहू आने लगे। उनके अभंग सत्संग तथा कीर्तनों में गाये जाने लगे। तत्कालीन ब्राह्मणों की दृष्टि में तुकाराम नीची जाति के थे और उनका मानना था कि सन्त बनने का एकाधिकार केवल ब्राह्मणों के पास सुरक्षित था। अतः अनेक लोग उनका विरोध करने लगे।

रामेश्वर भट्ट नामक एक पण्डित ने तुकाराम को आदेश दिया कि वे अपने भक्ति-गीतों की पाण्डुलिपि इन्द्रायणी नदी में विसर्जित कर दें। तुकाराम को अपने विट्ठल पर पूरा विश्वास था। वे अभंगों की अपनी पाण्डुलिपि इन्द्रयाणी को समर्पित करके विट्ठल के ध्यान में मग्न होकर नदी के तट पर बैठ गये। १३ दिनों तक वे वहां समाधि में बैठे रहे। कहा जाता है कि उनकी दूसरी पत्नी जीजा भी, जो इससे पहले तक अपने पति को उनकी ईश्वर-भक्ति के लिए कोसती रहती थीं, भूखी-प्यासी पूरे १३ दिनों तक तुकाराम के पास बैठी रहीं। अंततः विट्ठल एक बार फिर तुकाराम के समक्ष उपस्थित हुए और इन्द्रयाणी ने उनकी पाण्डुलिपि उन्हें सुरक्षित वापस लौटा दी।

तुकाराम के प्रति अपने इस द्वेषपूर्ण व्यवहार के लिए रामेश्वर भट्ट को अनेक शारीरिक कष्ट झेलने पड़े और आखिरकार तुकाराम की शरण में आने के बाद ही उन्हें इन कष्टों से छुटकारा मिला। इस घटना के बाद तो वे तुकाराम के अनन्य अनुयायी बन गये। स्वयं रामेश्वर भट्ट के शब्दों में—"तुकोबा (तुकाराम) को उनके अनुयायी श्रद्धा और प्यार से तुकोबा के नाम से पुकारते थे) की भक्ति, ज्ञान तथा त्याग इतना महान है कि मेरी आंखों ने उन जैसा कोई दूसरा सन्त नहीं देखा।"

अनेक प्रसिद्ध तथा विद्वान व्यक्ति तुकाराम के शिष्य बन गये थे, जिनमें से रामेश्वर भट्ट के अतिरिक्त शान्ताजी तथा गंगाराम मालवा के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जब भी तुकाराम विट्ठल के ध्यान में खोने के बाद कोई अभंग गाने लगते, तो ये दोनों शिष्य उसे लिपिबद्ध कर लेते थे। गंगाराम मालवा अपना अधिकांश समय अपने गुरु की संगति में ही बिताते थे। इससे उनकी पत्नी तुकाराम से बहुत क्रुद्ध रहने लगीं। एक दिन उनका क्रोध इतना बढ़ा कि उन्होंने खौलता हुआ पानी तुकाराम के सिर पर उड़ेल दिया। लेकिन तुकाराम पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वे तो अपने ईश्वर के ध्यान में ही खोये रहे।

तुकाराम ने अपने आलोचकों के खिलाफ कभी एक शब्द भी नहीं कहा। यहां तक कि अपने विरोधियों के सभी अत्याचारों को उन्होंने चुपचाप सह लिया। जो कुछ बीते, वह सहन कर लेना और किसी के दिल को दुखी न करना—यह उनका जीवन-दर्शन था।

उन्होंने अभंगों की रचना अपने विट्ठल का आदेश मानकर ही किया था। उन्होंने इस विषय में कहा है—"एक रात पांडुरंग सन्त नामदेव के साथ मेरे सपने में आये और उन्होंने मुझे भक्ति-गीत लिखने का आदेश दिया।"

उनके अभंग जहां एक ओर उनके अपने जीवन का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं, वहीं दूसरी ओर उनमें जात-पांत के भेदभाव से मुक्त तथा एक-दूसरे के प्रति प्रेम तथा सद्भावना से परिपूर्ण एक आदर्श समाज का प्रतिपादन भी किया गया है।

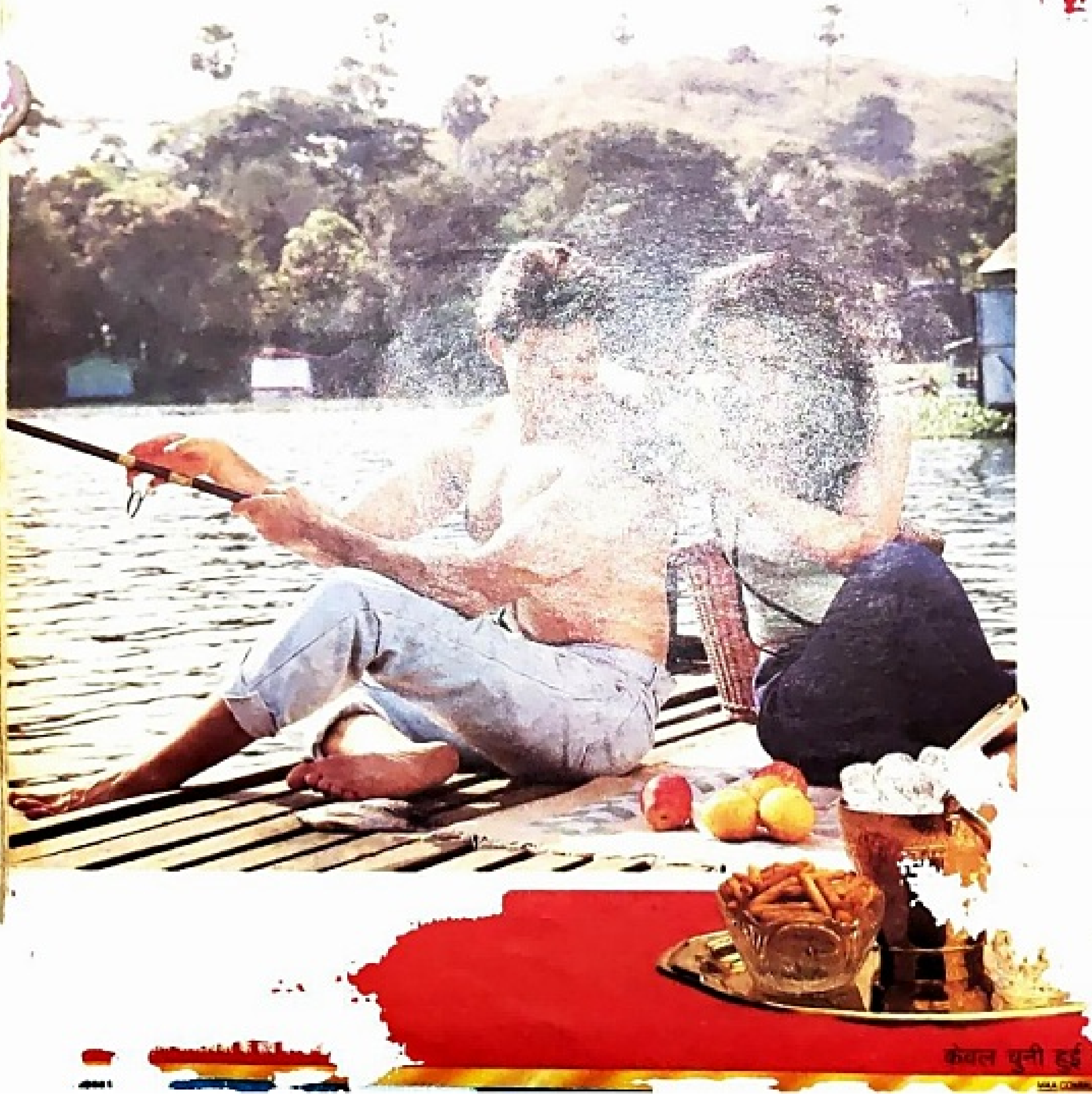
सन् १६४६ में इस महान सन्त के जीवन का अन्त हो गया। उनके स्वर्गवास के विषय में लोगों में मतभेद हैं। परम्परागत मत यह है कि वे सशरीर स्वर्ग सिधार गये। कुछ दूसरे लोगों का मानना है कि जब तुकाराम को लगा कि इस संसार में उनका कार्य पूरा हो गया, तो वे शरीर त्यागने के इरादे से एक लम्बी तीर्थयात्रा पर निकल पड़े और बाद में उन्होंने अन्तिम समाधि ले ली। एक अन्य मत के अनुसार उन्होंने अपने गांव देहू में ही इन्द्रयाणी नदी में जल-समाधि ले ली।

हाल ही की एक खोज के अनुसार, कुछ विद्वानों ने यह मत प्रतिपादित किया है कि उनके शत्रुओं ने उनकी हत्या कर दी। जैसा कि हम कह चुके हैं, कुछ ब्राह्मण तुकाराम से बैर मानने लगे थे। आम जनता में तुकाराम की लोकप्रियता बढ़ती जा रही थी और अनेक ब्राह्मण भी आध्यात्मिक मामलों में उन्हें अपनी प्रेरणा का स्रोत मानने लगे थे। इस सबसे तत्कालीन तथाकथित धार्मिक नेताओं का तुकाराम से जलना स्वाभाविक ही था। उन्होंने तुकाराम पर आरोप लगाया कि वे शूद्र हैं और उन्हें आध्यात्मिक सत्यों का विश्लेषण करने का कोई अधिकार नहीं है। इन लोगों के भड़काने पर गांव का पाटिल (मुखिया) और कुछ अन्य लोग भी तुकाराम के खिलाफ हो गये। हो सकता है कि ऐसे ही किसी सिरफिरे ने उनकी हत्या कर दी हो। ●



वो मासूम अदा
मानो दिल हो चला
सीने से जुदा
मेरी मंजिल
है रह गुजर
मेरी तमन्ना का
के मिला जवाब
enquiries contact
Textile Industries P. Ltd.
Ind. Estate, Kandivli (W),
(India). Tel: 605 3421 / 3256
Viva International, Dubai
Fax: (04) 535515
M. Viva International Inc.
(718) 4246464
(U.K.) Ltd., London
— Vivatex Pte. Ltd.
(65) 3367733
(Japan) Ltd. Osaka
Fax: (06) 2611886
— Viva Textorium,
जोडी अनोखी, मेल निराला.
The Harry Collection
The Export Range of
Suitings, Shirtings,
Sarees & Dress Materials

अरिस्टोक्रेट.
बेहतरीन ज़िन्दगी का अन्दाज़.



धारावाहिक उपन्यास

ठग

—श्रीपान्थ

पूर्वकथा : १९वीं सदी के तीसरे दशक में विलियम स्लीमैन के ठग-उन्मूलन अभियान के दौरान ठगों के जो कारनामे प्रकाश में आये, उनके रोमांचक विवरण, ठगों के समाज में अनिवार्य रूप से मान्य प्रथाओं, अनुष्ठानों, कट्टर अंधविश्वासों और देवी के नाम पर क्रूरतम हत्याओं के बारे में ठग सरदार फिरंगिया की आत्मस्वीकृति आदि के बारे में आप पिछले अंकों में पढ़ चुके हैं। अब पढ़िए आगे की कहानी



इस अनोखे विश्वास को ही धर्म मान कर खूनियों का दल रास्तों पर घूम रहा है। हंस रहा है या गा रहा है, सितार बजा रहा है, शरद के नीले आसमान के नीचे चूल्हा सुलगाकर रोटी सेंक रहा है, बड़बड़ा रहा है।

वे जब बातें करते थे, तब वह पूरी की पूरी एक नई ही भाषा होती थी। न तो वह हिन्दी थी, न उर्दू, अरबी-फारसी, तमिल-तेलगु, किसी भी भाषा के साथ उनका कोई मेल नहीं था। यहां तक कि 'मेखफंसा' या पानीवाले ठग 'भगिना' की भाषा के साथ भी नहीं। ठगों की भाषा बिलकुल अलहदा थी। उस बोली का नाम था 'रामासी'। उसका शब्द-भंडार ऐसा था, कि उससे बाकायदा एक मानक आकार का कोश बन सकता था।

जो सच्चा 'बोरा' या 'औला' है, यानी जो पक्का ठग है, वह बोली सुनकर ही बता देगा कि सामने आनेवाला दल ठगों का है, या

(शेष पृष्ठ ७४ पर)



जिम कार्बेट अपने साथी राबर्ट बेलारिस के साथ एक शिकार अभियान के तहत हिमालय के त्रिशूल शिखर की तलहटी में कैम्प डाले हुए थे। सितम्बर का महीना था। जिम कार्बेट के साथ चलनेवाले गढ़वाली मजदूरों ने उन्हें बताया था कि त्रिशूल में वास करनेवाले दानव को खुश रखने के लिए वहां के निवासी उस स्थान पर प्रतिवर्ष आठ सौ बकरों की बलि चढ़ाते थे। उन गढ़वालियों का नेता बालासिंह था। शिकार के दौरान वह जिम कार्बेट को सर्वाधिक सहयोग देता था। पहाड़ी

(शेष पृष्ठ ८१ पर)

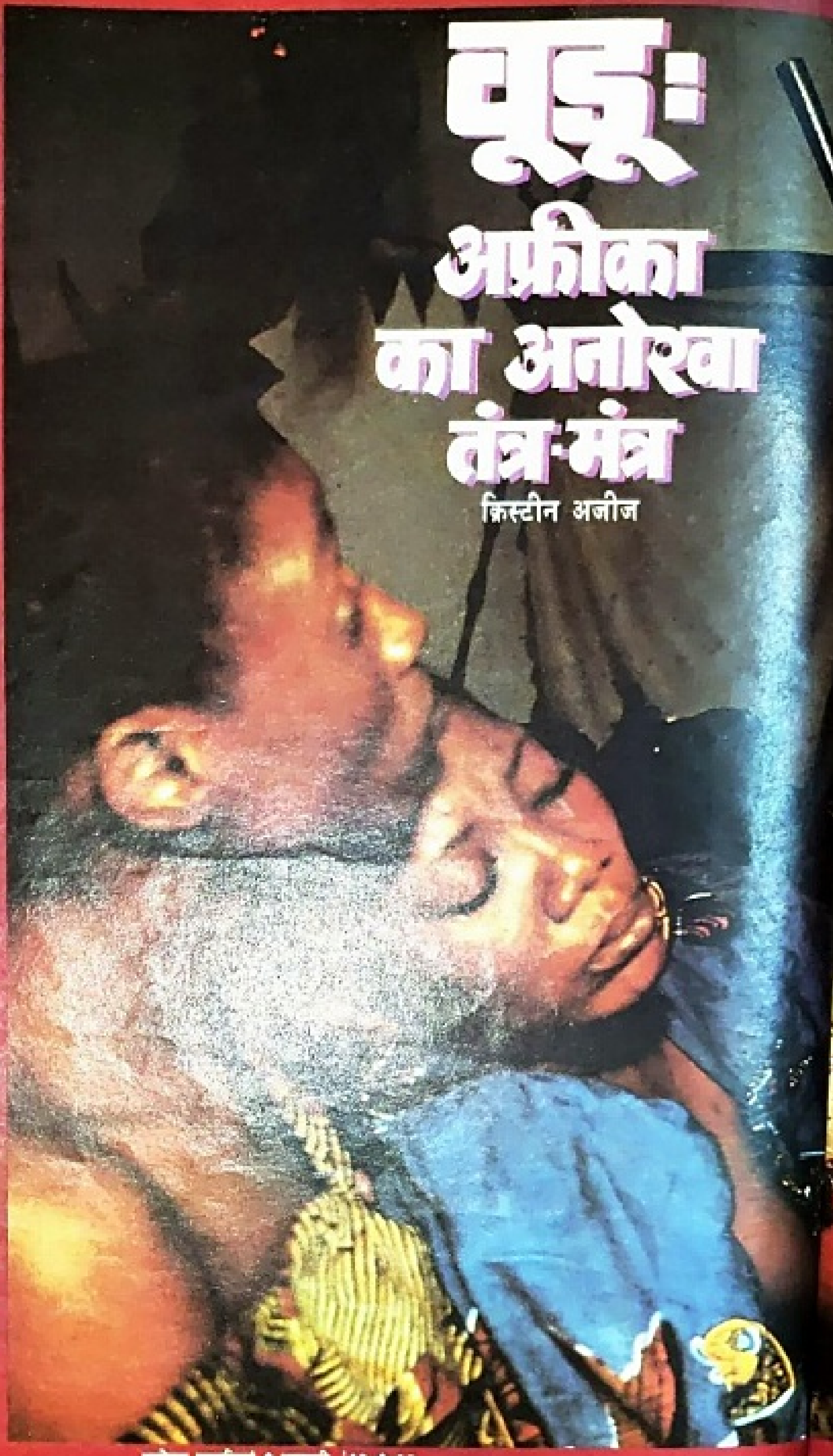
मन्दिर का बाघ

विद्याभूषण तिवारी

जिम कार्बेट को अपने लम्बे शिकारी जीवन के दौरान जहां खूंखार नरभक्षियों का [illegible] करना पड़ा, वहीं ऐसी अनेक अलौकिक घटनाओं [illegible] पड़ा, जिनकी [illegible] व्याख्या कर पाने में वे सदैव असफल रहे


अपने घर को
दीजिये फ्रांसीसी शोभा की छटा
प्रिमा

अनुष्ठान के समय वूडू की देवी से आविष्ट पुजारिन एमोहोते और उसके सहयोगी



वूडू: अफ्रीका का अनोखा तंत्र-मंत्र

क्रिस्टीन अजीज

पश्चिमी अफ्रीका के घाना, नाइजीरिया और दक्षिणी टोगो की आदिवासी संस्कृति में सर्वमान्य वूडू तंत्र-मंत्र का उपयोग मनुष्य के हित में किया जाता है। अद्भुत हैं इसके कर्मकांड और अनुष्ठान की प्रथाएं

पश्चिमी अफ्रीका के 'आव' कबीले में वूडू को माननेवाले बड़ी संख्या में हैं। यह तंत्र-मंत्र उनकी रोजमर्रा की जिन्दगी से जुड़ा है। यहां वूडू के अनुष्ठान और कर्मकांड सिखानेवाली कुछ गुप्त संस्थाएं हैं। कुछ लोग तो इसे सीखने पर एक लाख पौंड तक खर्च कर देते हैं। यह भी सच है कि कामकाजी औरतें वूडू सीखने पर इतना खर्च कर देती हैं कि वूडू सीखने के बाद गंडे-ताबीजों या पूजा-अनुष्ठानों से उतनी भी आमदनी उन्हें नहीं हो पाती।

घाना, नाइजीरिया और दक्षिणी टोगो में रहनेवाले 'आव' कबीले में 'वूडू' का शाब्दिक अर्थ है देवता, परन्तु इसका प्रचलन इस रूप में है कि वूडू पुजारी किसी आत्मा के माध्यम से, जिसे 'आफा' कहते हैं, किसी इष्ट देवता या उपदेवता से जुड़ा होता है। ऐसे देवी-देवताओं की संख्या २००० तक है, जो दैनिक जीवन के अलग-अलग पहलुओं से जुड़े हैं। किसी को प्रसन्न करने से धन-सम्पदा मिलती है, तो किसी को प्रसन्न रखने से बीमारियां दूर होती हैं। कोई दाम्पत्य सुख देनेवाला देवता है, तो कोई संतान देनेवाला।

हम आपको टोगो ले चलते हैं।



महिलाओं की एकमात्र सम्पूर्ण पत्रिका

मनोरमा

जनवरी प्रथम १९९२

नव वर्षांक

प्रमुख आकर्षण

- नया वर्ष, नयी आशाएं
- नये साल का चक्कर
- फिल्मी सितारे: नया वर्ष
- अपनी स्मरण-शक्ति बढ़ाइये
- जब पार्टी का आयोजन हो युवा हाथों से: उपयोगी सुझाव
- आजमाइये ये उपयोगी टिप्स और बचिये प्रदूषण से
- व्यंजन: इन्हें बनाइये नये वर्ष के मौके पर
- फैशन: नयी स्टाइल, नये परिधान
- बुनाई: कुछ आकर्षक नमूने
- सौन्दर्य: जाड़ों में कैसे करें त्वचा की देखभाल?
- हास्य-व्यंग्य: उनके शौक के क्या कहने/ के०पी० सक्सेना
- कहानियां: मिट्टी की सौत/ चन्द्रमोहन प्रधान, पप्पा को प्रमाण पत्र/ उषा शेठ, खोटा सिक्का/ वर्षा आलोक



- आवरण कथा:

जुड़वां बच्चों का अनूठा संसार

साथ ही सभी स्थायी स्तंभ

आज ही अपनी प्रति सुरक्षित कराइये

मूल्य: १०.००



होमोमितो और मिनावो : गुप्त बोली में वार्ता

नीची चहारदीवारी से घिरे एक लम्बे-चौड़े अहाते के एक कोने में छोटा-सा आंगन है। आंगन के चारों तरफ काफी ऊंची-ऊंची दीवारें हैं। एक छोटी-सी वेदी के रूप में पूजा-स्थल है। इसके पीछे की दीवार पर पवित्रता और धन-सम्पदा की देवी मैमीवाटर की मत्स्यकन्या जैसी भव्य आकृति चित्रित है। चित्र में धरती, आसमान और समुद्र को बांध लेनेवाले एक विशालकाय अजगर को लेकर देवी समुद्र से बाहर निकल रही हैं। मैमीवाटर यहां की विशिष्ट देवी हैं, जिनकी पूजा सबसे अधिक होती है। इनकी कृपा से नौकरी में तरक्की होती है, रोजगार अच्छा चलने लगता है और धन-सम्पदा प्राप्त होती है।

पूजा-स्थल की चौखट पर एक प्रौढ़ा पुजारिन बैठी है। वह सफेद लिबास पहने है और सिर पर एक जालीदार कपड़ा बांधे है, जो नकाब जैसा दिखता है। उसके सामने लकड़ी की एक बेंच पड़ी है, जिस पर एक सरकारी अधिकारी बैठा है। आज की पूजा वह अपनी तनख्वाह बढ़वाने के लिए करा रहा है। इस अनुष्ठान में देवी को 'श्नाप्स' (डच मदिरा) का भोग लगाया जाएगा। पुजारिन इसी की तैयारी में है।

पूजा-स्थल किसी फिल्मी नायिका के ड्रेसिंग टेबिल जैसा दिखाई पड़ रहा है, जिस पर तरह-तरह की प्रसाधन सामग्री—टैल्कम पाउडर, इत्र, लिपस्टिक आदि रखी है। यह सामग्री विदेशी है, मुख्य रूप से यूरोप की बनी हुई। ऐसे कई पोस्टकार्ड भी रखे हैं, जिन पर स्नान करती किसी विदेशी सिने तारिका का पोज है। कुछ फोटो-कार्ड ऐसे भी हैं, जिन पर भारतीय देवी-देवता अंकित हैं। देवी के चित्र के सामने अगरबत्ती की जगह एक सुलगती हुई सिगरेट ऐश ट्रे में रखी है।

पूजा की शुरुआत के रूप में पुजारिन पहले एक बार सीटी बजाती है, फिर बीन पर एक तेज धुन निकालती है। यह देवी का आवाहन है। अफसर सिर झुका लेता है। पुजारिन उसके सिर पर, फिर पास के पेड़ के नीचे धरती पर रखे एक अंडे पर सस्ता-सा कोई इत्र छिड़कती है। हवा में खुशबू तैर जाती है। इसके बाद टैल्कम पाउडर का डिब्बा उठाकर पुजारिन ढेर-सा पाउडर छिड़कती है। अब पूरा आंगन इस तरह महक उठा है, जैसे वह पूजा न होकर किसी डिपार्टमेंटल स्टोर का सेंट बेचने का काउण्टर हो। फिर झुककर वह अंडा उठाती है और उसी चौखट पर रख लेती है। फिर वह श्नाप्स की बोतल खोलकर थोड़ी शराब एक प्याले में उड़ेलती है। प्याला देवी के सामने रख दिया जाता है।

वह देवी को भोग लगाती है। अंडे के साथ शराब थोड़ी देर तक देवी के सामने ही रखी रहती है। इस बीच पुजारिन अस्पष्ट स्वर में कुछ मंत्र बुदबुदाती है।

अनुष्ठान के बाद पुजारिन सामने बैठे सरकारी अफसर को देवी के प्रसाद के रूप में गिलास में शराब देती है। झेंपभरी मुस्कान के साथ वह उस शराब को पी जाता है। इसके बाद वह पुजारिन के प्रति इस अनुष्ठान के लिए कृतज्ञता जतलाता है और उठकर खुश-खुश अपनी ड्युटी पर चला जाता है। इस पूजा पर उसे शराब की बोतल के अलावा पांच पौंड और खर्च करने पड़े हैं, लेकिन अब वह पूरी तरह आश्वस्त है कि उसकी तनख्वाह बढ़ जाएगी।

पुजारिन है एमिहोते एजिनाल। उसकी उम्र ६५ वर्ष है। शक्ल से वह दयालु दिखती है, लेकिन उसे



जड़ी-बूटियों से बनायी जा रही दवाएं

जाननेवाले बताते हैं कि वह स्वभाव से बनिया है। कोई उससे कम खर्च करने को कहता है, तो वह साफ जवाब देती है, "कम खर्च में असरदार बूटू नहीं हो सकता। देवी को जैसा प्रसाद चढ़ेगा, उतनी ही खुश होंगी वह। अगर बढ़िया नतीजा चाहते हो, तो अच्छी से अच्छी सामग्री देवी को चढ़ाओ।"

मामूली हैसियत के लोग प्रायः ताड़ी या यहीं की बनी शराब और ऊंची हैसियत के ग्राहक विदेशी मदिरा चढ़ाते हैं। शराब की बोतल में से एक प्याला शराब देवी को चढ़ायी जाती है, एक गिलास शराब ग्राहक को मिलती है और बाकी पर पुजारी या पुजारिन का हक होता है।

एमिहोते 'मैमिसी' है, यानी देवी मैमीवाटर की विशिष्ट पुजारिन। वह पांच संतानों की मां है। उसकी सभी संतानें बालिग हो चुकी हैं। उसके पास प्रायः ऐसे ग्राहक आते हैं, जो या तो नौकरी में किसी तरह से दुःखी होते हैं, या जिनको अपने धंधे में घाटा होता है, या जिनका पैसा ऐसा फंस गया होता है कि डूबने की आशंका होती है। कुछ ऐसे व्यक्ति भी उसके पास आते हैं, जो यह जानना चाहते हैं कि देवी उनसे रुष्ट क्यों हैं। एमिहोते कारण भी बताती है और धन-सम्पदा की देवी को प्रसन्न करने का तरीका भी। लोगों का विश्वास है कि उससे करायी गयी पूजा कभी विफल नहीं होती।

वह अपने पास आनेवालों को प्रायः एक स्त्री का किस्सा सुनाती है, जो तरह-तरह की डिजाइनों के मोमजामे बनाकर बेचती और खूब पैसे कमाती थी। एकाएक उसका धंधा मंदा पड़ गया। कुछ दिन तो वह हिम्मत के साथ काम करती गयी, लेकिन जब धंधा ठप्प पड़ने की नौबत आ गयी, तो उसे एमिहोते की शरण लेनी पड़ी। उसने देवी की रुष्टता का कारण पूछा।

एमिहोते ने बता दिया कि उसने यह काम अपनी मां से सीखा है और काम-धंधा चल निकलने पर उसने अपनी मां को मुनाफे का हिस्सा बिलकुल नहीं दिया। इसी लिए देवी रुष्ट हो गयीं। अब वह देवी को 'श्नाप्स' चढ़ाये, पूजा कराए और जब काम-धंधा चल निकले, तो नियमित रूप से अपनी आमदनी का कुछ हिस्सा अपनी मां को देती रहे। हिस्सा कम हो या ज्यादा, परन्तु दिया जाना चाहिए। उस स्त्री ने यह सलाह मानी, पूजा करायी और मां को कुछ रकम देने लगी, तो अब फिर

से उसका कारोबार पहले जैसा चल निकला है।

पश्चिमी अफ्रीका में घाना, नाइजीरिया और दक्षिणी टोगो इलाकों में रहनेवाला 'आव' कबीला वूडू में आस्था रखता है। गुलामों की खरीद-फरोख्त करनेवाले यहां के काफी लोगों को अपने साथ दक्षिणी अमेरिका, कैरीबियन द्वीप समूह, क्यूबा और ब्राजील तक ले गये। कबीले के इन आदिवासियों के साथ-साथ इनकी संस्कृति भी इन देशों में जा पहुंची। लिहाजा वूडू का प्रचार इन देशों में भी हो गया। दक्षिणी अमेरिका और कैरीबियन द्वीप समूह में, विशेष रूप में हैटी में, वूडू सम्प्रदाय में ईसाई (कैथोलिक) धर्म का भी मिश्रण हो गया है। क्यूबा में वूडू को सेंटोरिया और ब्राजील में कनडोम्ब्ल कहते हैं।



दीक्षित महिलाओं को ही आविष्ट होने की अनुमति

इनके देवी-देवता अलग-अलग शक्तियों के मालिक हैं। उदाहरण के लिए, चेचक जैसी बीमारियों के देवता 'सकपाथ' कहलाते हैं। उनको इस पृथ्वी का मालिक भी समझा जाता है। हैविआसो बिजली, तूफान और युद्ध के देवता हैं। धन-सम्पदा की देवी मैमीवाटर बहुत कुछ भारत की लक्ष्मी से मिलती-जुलती है—उसी तरह वे सागर से निकलती दिखाई जाती हैं। उनके हाथ में एक विशालकाय अजगर होता है, जो शेषनाग की परिकल्पना के अनुरूप है। बलि देकर या भेंट चढ़ाकर इन देवताओं को प्रसन्न किया जाता है। इनसे भविष्य भी पूछा जाता है। देवता से आविष्ट होने पर पुजारी भूत-भविष्य और वर्तमान, सभी कुछ बता सकता है।

पश्चिमी अफ्रीका में 'आव' कबीले के बहुत सारे लोग अब ईसाई हो गये हैं, लेकिन इसके बावजूद वूडू में उनकी आस्था में कमी नहीं आयी है। वूडू पुजारियों की महन्तशाही बदस्तूर कायम है। लोगों पर वूडू पुजारियों का बहुत प्रभाव होता है। सबसे उच्च वर्ग का पुजारी बोकोनो कहलाता है। उसके नीचे हूनो होते हैं, जो मुख्यतः आरोग्य-लाभ करानेवाले माने जाते हैं। पुजारियों के ये दो वर्ग पुरुषों के लिए आरक्षित हैं। कोई स्त्री इन पदों के उपयुक्त नहीं मानी जाती। दूसरे देशों की तरह यहां भी महिलाओं के मासिक धर्म के साथ कई अंधविश्वास जुड़े हैं, जैसे यह कि उन दिनों वे अशुद्ध होती हैं। पूजा-अनुष्ठान में शामिल होना तो दूर, उन दिनों वे वूडू पूजा-स्थल पर प्रवेश भी नहीं कर सकतीं। मासिक धर्म बंद हो जाने के बाद ही महिलाएं वूडू पुजारिन हो सकती हैं।

एमिहोते बताती है, "पुजारिन बन जाने पर हम बहुत शक्तिसम्पन्न हो जाती हैं। लेकिन पुजारिन बनना आसान नहीं है। इस काम में अनाप-शनाप पैसे खर्च होते हैं और देवी-देवता की साधना करनी पड़ती है। मैंने ही पुजारिन बनने के लिए लगभग एक लाख पौंड खर्च किये हैं।"

जब उससे पूछा गया कि इतनी बड़ी रकम उसके पास आयी कहां से, तो वह साफ-साफ कुछ नहीं बताती। गांव के दूसरे लोग कहते हैं कि फुटबाल मैचों से उसके पिता को भारी आमदनी थी और उसी रकम से एमिहोती पुजारिन बनी है। यह सच है कि जमीन हासिल करने, उसमें ऊंची दीवारोंवाला आंगन बनवाने और फिर पूजा-स्थल बनवाने में काफी खर्च पड़ जाता है। सारी आवश्यक सामग्री पुजारी को अपनी जेब से खरीदनी पड़ती है। आमदनी का सिलसिला तो बाद में तब शुरू होता है, जब उसे अपने क्षेत्र में प्रसिद्धि मिल जाती है।

यह तंत्र किसी न किसी उच्च-वर्गीय पुजारी से सीखना पड़ता है। एमिहोती चार साल में वूडू सीख पायी, जबकि कुछ लोगों को तो इसे सीखने में दस साल भी लग जाते हैं। देवता कब क्या चाहता है, किस तरह की पूजा करानी होगी, ये बातें धीरे-धीरे ही समझ में आती हैं। आम तौर पर किसी 'आत्मा' का सहारा लेकर उसके माध्यम से देवी-देवता की इच्छा समझी जाती है। इस आत्मा को यहां की भाषा में 'आफा' कहते हैं। खजूर की सोलह गुठलियां या ओमेल की फलियों की माला उछालकर देवी-देवता की इच्छा का पता लगाया जाता है। खजूर की गुठलियों पर एक फांक होती है, जो आंख जैसी नजर आती है। वूडू माननेवालों का विश्वास है कि 'आफा' इन्हीं आंखों से देखकर देवी-देवता की इच्छा जान लेती है और पुजारी के माध्यम से व्यक्त कर देती है।

एमिहोते बताती है, "पुजारिन बनने के बाद मुझे अपने पति से अलग रहना पड़ता है। अब मैं अपने पिता के घर में रहती हूं। मेरे पति ने इस बात का बुरा नहीं माना कि मैं उसको छोड़कर अलग रहने लगी। उसकी दूसरी पत्नियां उसके साथ अब भी रहती हैं। मैं यदा-कदा उससे मिल आती हूं। पति के पास रहने पर पत्नी को काफी वक्त पति को देना पड़ता है, जो किसी पुजारिन के लिए संभव नहीं रह जाता। पुजारिन को अपनी साधना में समय लगाना पड़ता है।"

पुरुष पुजारियों की स्थिति इससे ठीक विपरीत होती है। उनके बारे में माना जाता है कि उनकी जितनी ज्यादा पत्नियां हों, उतना ही अच्छा है। बहुविवाह की प्रथा इस कबीले में प्रचलित है।

टोगो की राजधानी लोमे के उत्तरी सीमान्त पर बसे डौमेसिस में एमिहोते बस्ती की एकमात्र पुजारिन है। इस बस्ती में उसके अहाते के बाहर छोटे-छोटे वर्गाकार मकान हैं, जिनके छप्पर काफी नीचे हैं। इन मकानों का सिलसिला लोमे की रेल पटरियों तक गया हुआ है। इनमें रहनेवाली कुछ औरतें आलू या शकरकन्द को उबलते हुए तेल में पकाकर बेचती हैं और कुछ अपनी पीठ पर छोटे बच्चे को बांधे सिर पर आम की गुठलियों की परातें रखे उनको बेचने निकलती हैं। शाम के समय पुरुष सिर पर घर-गृहस्थी का सामान लिये या फिर हाथ में ब्रीफकेस लिये घर लौटते हैं।

यहां के बाजारों में अंधविश्वासों से जुड़ी बहुत सारी सामग्री बिकती है, जैसे जानवरों की खोपड़ियां, सांपों की सुखायी गयी खाल और ढेर सारी जड़ी-बूटियां। यहां के वैद्य या हकीम इनको खरीदकर, कूट-पीस और छानकर दवाएं तैयार करते हैं। जादू-टोना करनेवाले इस सामग्री का उपयोग अपने काम में करते हैं।

तंत्र-मंत्र और जादू-टोना यहां दो अलग-अलग चीजें हैं। तंत्र-मंत्र का उपयोग दूसरों के हित में किया जाता है, जबकि जादू-टोने का इस्तेमाल किसी का अनिष्ट करने के लिए होता है। मुख्यतः किसी से बदला लेने के लिए या किसी को मरवा डालने के लिए जादू-टोने का इस्तेमाल किया जाता है। इसी लिए समाज में वूडू के पुजारियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, जबकि जादू-टोना करनेवालों को असम्मान से।

बूडू के किसी पुजारी से अगर किसी का अनिष्ट करने को कहा जाए, तो वह नाराज हो जाता है। बूडू पुजारी यह मानते हैं कि किसी का अनिष्ट कराने से देवी-देवता नाराज हो जाएंगे और उनकी सिद्धि जाती रहेगी। बूडू के कुछ अलिखित नियम हैं, जिनका पालन हर पुजारी या पुजारिन को करना पड़ता है। इन्हीं में से एक यह है कि कभी किसी के अनिष्ट के लिए बूडू की सहायता न ली जाए।

स्थानीय लोग बताते हैं कि एक बार यहां दो औरतों में झगड़ा हुआ। उनमें से एक गलती पर थी और दूसरी नहीं। इसी लिए दूसरी को पहली पर इतना गुस्सा आया कि वह बूडू के एक पूजास्थल पर चली गयी। (गांव में ऐसे कई पूजास्थल हैं) वहां उसने स्वयं बूडू से प्रार्थना की कि उससे झगड़ने वाली औरत मर जाए। किसी तरह यह बात गांव के लोगों को मालूम हो गयी। गांव के सारे लोगों की सभा हुई। गवाही के लिए दोनों औरतों को बुलाया गया। दोनों ने पूरी बात सच-सच बता दी। गांव के पुजारी ने हुक्म दिया कि बूडू को परेशानी में डालनेवाली औरत को कोड़े लगाये जाएं। तब झगड़े में कोई गलती न होने के बावजूद बेचारी को कोड़े खाने पड़े।

बस्ती के एक चौराहे पर बूडू का पूजास्थल है। पहले यहां बस्ती का बाजार था, जो अब दूसरी जगह लगता है। यहां जमीन के एक टीले पर एक झोपड़ा-सा बना है। लोग यहां आकर अपनी-अपनी भेंट मिट्टी में दबा जाते हैं। इसमें एक तुड़ी-मुड़ी जूती पड़ी है, जो किसी औरत की है। उससे पता चलता है कि वह अनजाने में हुई अपनी किसी भूल (जैसे रात में पानी न फेंकने के अंधविश्वास के उल्लंघन) के लिए माफी मांगने के लिए वहां फेंक गयी है। इससे वह यह जतलाना चाहती है कि ऐसी गलती वह फिर कभी नहीं करेगी। यहां की मिट्टी में पुरानी टीशर्ट, पैंट, पाजामे या बैनियान भी दबे हैं, जो बूडू से क्षमा मांगने के लिए इस तरह फेंके गये हैं।

हौमेसिस में बूडू सम्प्रदाय का एक बहुत ऊंचे दर्जे का पुजारी है अडानलीट। वह इस बस्ती का सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्ति है। उसका आंगन बहुत बड़ा है, लेकिन कभी साफ-सुथरा नहीं रहता। आंगन में हर वक्त कुछ न कुछ उबलने की गंध आती रहती है। इस आंगन की दीवारों में कई दरवाजे हैं। इनमें से सिर्फ एक बाहर की तरफ खुलता है और बाकी उन अंधेरे-से कमरों में खुलते हैं, जिनमें उसकी पत्नियां रहती हैं। उसकी कुल आठ पत्नियां हैं, जिनमें से चार अब सन्तानोत्पत्ति के लायक नहीं रहीं। वे अब दाम्पत्य जीवन से भी प्रायः मुक्ति पा चुकी हैं।

अडानलीट अवकाशप्राप्त हेडमास्टर है। उसकी उम्र सत्तर साल से भी अधिक है, लेकिन इस उम्र में भी वह आकर्षक दिखता है। शरीर लम्बा-तगड़ा है। चश्मे के मोटे कांचों के पीछे से झांकती उसकी आंखों की चमक से साफ पता चलता है कि वह काफी चतुर-चालाक है। उसके २७ बच्चे हैं। इनमें से जो छोटे हैं, वे आंगन के बाहर चहारदीवारी से घिरे अहाते में बकरियों या मुर्गियों के साथ खेलते रहते हैं। कुछ स्कूल में पढ़ते हैं और वे अहाते की छायादार जगह पर बैठकर अपना होमवर्क निपटाते दिखाई पड़ते हैं। अडानलीट का कार्यालय रूम इस अहाते का सबसे बड़ा कमरा है। इस कमरे में फ्रिज और टेलीफोन भी है। जहां वह बैठता है, उसके ठीक ऊपर दीवार पर टोगो के राष्ट्रपति जनरल आयडिमेन का एक फोटो और उसी के पास फ्रेम में मढ़ा प्रमाणपत्र है कि वह ऊंचे दर्जे का पुजारी है।

बीमारी से छुटकारा पाना हो, या गृहस्थी पर कोई संकट आया हो, प्रेम-प्रकरण में असफलता हाथ लगी हो, या शादीशुदा जोड़े के सन्तान न हो रही हो, सब तरह की समस्याओं में बूडू की मदद लेने के लिए लोग यहां आते हैं। तकलीफ शारीरिक हो या मानसिक, सब का कोई न कोई इलाज कभी जड़ी-बूटियों के सहारे और कभी बूडू की मदद से किया जाता है। पुलिस अफसरों से लेकर आला दर्जे के राजनीतिज्ञ तक नियमित रूप से यहां आते हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां ज्यादा बड़ी संख्या में यहां आती हैं।

मिनावो साहो एक स्वस्थ और खुशदिल युवती है। उसकी उम्र पच्चीस के आस-पास है। वह कुछ घरों में खाना पकाने का काम करती है। दो जुड़वां बेटों की मां है वह। इस कबीले में किसी के घर जुड़वां बेटे होना सौभाग्य का लक्षण और ईश्वरीय कृपा माना जाता है। मिनावो साहो वैसे भी अडानलीट के घर आती है, क्योंकि उसकी पत्नियों से—खास तौर पर उसकी सबसे छोटी पत्नी हौमीमीतो से इसकी गहरी दोस्ती है।

आज वह रोज की तरह नहीं आयी है। उसका हमेशा खुश दिखाई पड़नेवाला चेहरा आज उदास और गंभीर है। वह अडानलीट से कहती है, "मैं एक बच्चा और चाहती हूं, जबकि मासिक धर्म की अनियमितता के कारण इसमें अड़चन आ रही है। मुझे आपकी मदद की जरूरत है। अगर आप जैसा ऊंचे दर्जे का पुजारी मेरी मदद नहीं करेगा, तो मजबूरन मुझे अस्पताल जाना पड़ेगा, जबकि मैं अस्पताल नहीं जाना चाहती। बूडू तो डाक्टर से ज्यादा ताकतवर होता है।"

अडानलीट के इष्ट देवता हैं ऐज़ान। उनका पूजास्थल बनवाने पर उसको ७५,००० पौंड खर्च करने पड़े हैं। आस-पास के लोगों ने भी इस काम के लिए पैसे जुटाने में उसे सहयोग दिया है। समय-समय पर अडानलीट ने भी उनकी मदद करके अपना फर्ज निभाया है। वह कहा करता है, "ऐज़ान में अजगर के बराबर ताकत है।"

इस इलाके का हर पुजारी अपने इष्टदेव की शक्ति को इस तरह बढ़ा-चढ़ाकर बताता है कि उनको मानने-वालों की संख्या बढ़े। दूसरों की उपस्थिति में वह किसी और देवता का नाम तक नहीं लेता।

मिनावो अडानलीट के सामने बिछी एक चटाई पर बैठ जाती है। बूडू उसकी समस्या का क्या हल बताते हैं, यही जानने के लिए आज वह आयी है। अडानलीट बताता है, "तुम्हारा कोई नजदीकी आदमी ही तुम्हें नुकसान पहुंचाने के लिए जादू-टोना करा रहा है। बूडू तुम्हारी मदद करने को तैयार है, पर तुमको एक बकरे की बलि चढ़ानी होगी।"

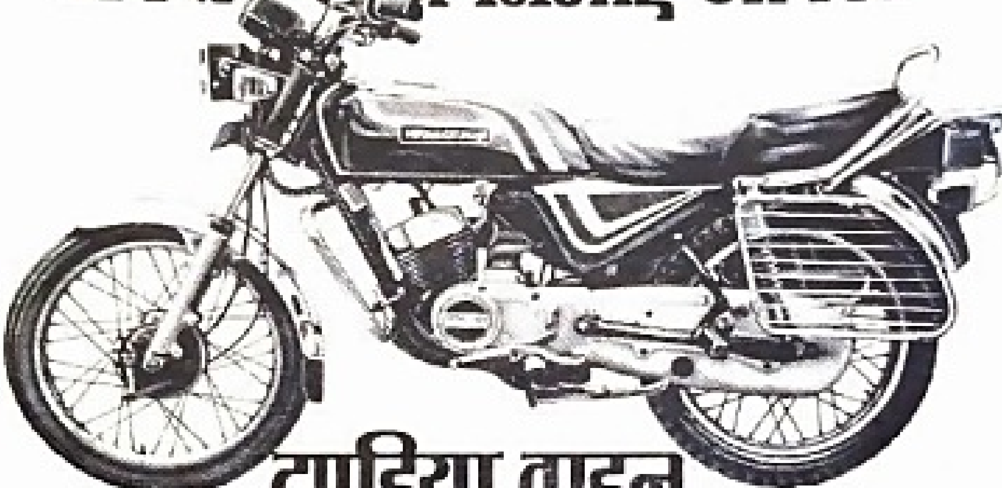
इन दिनों बकरे की कीमत ८० पौंड है और बेचारी मिनावो की दो महीनों की तनख्वाह भी इतनी नहीं होती। यह उसकी हैसियत के बाहर की बात है। वह कहती है, "ठीक है, मैं अपने मां-बाप से बात करूंगी।"

आज कबीले के दूसरे बहुत सारे लोगों की तरह मिनावो के मां-बाप भी यहां के एक अनौपचारिक किस्म के पिगी बैंक के सदस्य हैं, जिसमें सभी सदस्य, विशेष रूप से स्त्रियां, समय-समय पर अपनी सुविधा के अनुसार एक-एक, दो-दो पौंड जमा करते रहते हैं। बैंक में जमा यही रकम मौके-बेमौके कोई आकस्मिक खर्च आ पड़ने पर सदस्यों को उधार के रूप में मिल जाती है। मिनावो ने हमें बताया कि उसके समाज में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित है। पति की सभी पत्नियां मिल-बांटकर घर का काम-काज कर लेती हैं और सबको इतना समय भी मिल जाता है कि वे बाहर जाकर कुछ समय कोई काम-धंधा कर लें, या फिर घर पर ही कोई सामान बनाकर उसे बाहर बेच आएं। इससे उन्हें जो आय होती है, उसमें से कुछ घरेलू खर्च में काम आती है और बच रही रकम इन पिगी बैंकों में जमा कर आती हैं।

मिनावो बताती है, "मेरे पति के तीन पत्नियां हैं। अफ्रीका के पुरुष घर के काम-काज में जरा भी हाथ नहीं बंटाते हैं, इसलिए सारे काम स्त्रियों को ही करने पड़ते हैं। घर का सौदा-सुलुफ लाने तक में यहां के पुरुष शर्म महसूस करते हैं। मैं और मेरी सौतें बारी-बारी से खाना बनाती हैं। बच्चों की देखभाल भी हम मिल-जुलकर कर लेती हैं। मैं एक-दो घरों में खाना पकाने का काम कर कुछ कमा लेती हूं। मेरी अपनी राय में तो पति की जितनी ज्यादा पत्नियां हों, उतना ही अच्छा है। इससे भी अच्छा यह हो कि हर पत्नी को हमेशा पति के घर में न रहना पड़े। यह बात जरूर है कि अगर पति की दूसरी पत्नियों से किसी एक की पटती न हो, तब यह उसके लिए परेशानी की बात हो जाती है।

परम्परा के अनुसार, यहां पत्नियां अपनी कमाई पति को सौंपने के लिए बाध्य नहीं हैं। इसी तरह यहां पत्नी के भरण-पोषण की जिम्मेदारी भी पति की नहीं होती। यहां स्त्रियों की कमाई का ज्यादातर पैसा पूजा-

अब आपकी दीर्घ अवधि 'एक्ट ओनली' बीमा पॉलिसी चालू रहे तब तक जब तक साथ निभाए आपका



दुपहिया वाहन.

दुपहिये वाहनों के लिए दीर्घ अवधि 'एक्ट ओनली' पॉलिसी, मोटर वाहन अधिनियम के अंतर्गत कानूनी रूप से अनिवार्य बीमा की आवश्यकता की सदा के लिए पूर्ति करती है. यह पॉलिसी लेने पर आपको पॉलिसी के बार-बार नवीकरण कराने की चिन्ता से छुटकारा मिल जाता है. अन्यथा जिसका नतीजा कानून भंग और तृतीय पक्ष मुआवजे की भारी कीमत के रूप में आपको चुकाना पड़ सकता है.

'एक्ट ओनली' क्यों? प्रत्येक दुपहिए वाहन का तृतीय पक्ष दायिता के लिए 'एक्ट ओनली' पॉलिसी के अंतर्गत बीमित होना अनिवार्य है. अगर आप अपने वाहन की 'एक्ट ओनली' बीमा पॉलिसी का नवीकरण कराना भूल जाएं, तो आप पर रु. 1,000/- तक का जुर्माना या 3 महीने तक की जेल या दोनों दण्ड लागू हो सकते हैं.

तृतीय पक्ष दायिता :– अपना वाहन चलाते समय अगर आप अनजाने में किसी को टक्कर मार कर घायल कर देते हैं, जो कि घातक भी सिद्ध हो सकती है, तो इस प्रकार लगी चोट या मौत के लिए मुआवजे की जिम्मेदारी आपकी बनती है. 'एक्ट ओनली' बीमा पॉलिसी इस दायिता के विरूद्ध आपकी क्षतिपूर्ति करती है. लेकिन केवल तभी, अगर पॉलिसी वैध हो. पॉलिसी का नवीकरण न करने पर इसका पूरा जिम्मेदारी आप पर रहता है.

दीर्घ अवधि क्यों? कई राज्यों ने एकमुश्त सड़क कर लेना शुरू किया है. अधिक सुविधा और सुरक्षा की दृष्टि से अब आप 'एक्ट ओनली' बीमा के एकमुश्त भुगतान का विकल्प चुन सकते हैं, और हर साल पॉलिसी के नवीकरण के चक्कर से बच सकते हैं.

अन्य लाभ :– एकमुश्त भुगतान करने से आपको साल दर साल चुकायी जाने वाली कुल राशि की अपेक्षा कम राशि का भुगतान करना पड़ता है. और यदि सम्पूर्ण हानि या वाहन के हस्तांतरण के कारण पॉलिसी निरस्त हो जाती है तो आपको प्रीमियम की उचित राशि लौटाइ जाएगी.

इसलिए अब मन की चिन्ता मिटाइए और निश्चिन्तता की राह चुनिए.

*यदि आपसे कोई दुर्घटना हो जाए और कोई घायल हो जाए तो कृपया * घायल व्यक्ति को लगी चोट की प्रकृति का उल्लेख करते हुए बीमा कम्पनी को तुरन्त इसकी सूचना दें * बीमा कंपनी की सलाह के बिना तृतीय पक्ष को मुआवजे के बारे में कोई आश्वासन मत दीजिए. * पुलिस अभियोजन के प्रकरण में कानूनी सलाह लें तथा बीमा कम्पनी को परिस्थितियों से अवगत रखें. * दुर्घटना से सम्बन्धित जो भी नोटिस और सम्मन प्राप्त हों, उन्हें बीमा कम्पनी को भेजें, जो कि उस पर आपकी तरफ पैरवी करेंगे.*

दीर्घ अवधि
मन की शांति
एक्ट ओनली पॉलिसी

सड़क पर सावधान—दुर्घटना का मिटाएं नामोनिशान

भारतीय साधारण बीमा निगम
General Insurance Corporation of India

नेशनल इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड | दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड | दि ओरिएन्टल इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड | युनाइटेड इंडिया इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड

अनुष्ठानों में ही खर्च हो जाता है। वे बाजार करते वक्त तो चूजों की कीमत पर बेचनेवालों से जमकर मोल-भाव करती दिखाई पड़ती हैं, लेकिन वूडू अनुष्ठानों पर बड़ी-बड़ी रकम खर्च करने में चूं तक नहीं करतीं।

अडानलीट की बात सुनकर मिनावो सोच-विचार में पड़ गयी कि कहीं उसकी कोई सौत ही उस पर जादू-टोना न करा रही हो। उसने कहा, "मेरे जुड़वां लड़के हैं, इसलिए मुझसे जलनेवाली ही जादू-टोना करा रही होगी। शायद वह नहीं चाहती कि मेरे और कोई सन्तान हो।" यह बात उसने कुछ इस अंदाज में कही, जैसे हत्या के किसी गूढ़ रहस्य को सुलझा लिया हो।

अडानलीट खामोश रहा।

तभी आंगन की दीवार के उस पार से आवाज आयी, "हो सकता है, तुम्हारा पति ही और सन्तान न चाहता हो।"

इसके जवाब में मिनावो ने भी काफी जोर से, ताकि दीवार के उस पार सुनाई दे जाए, कहा, "अगर मेरा पति बच्चा न चाहता हो, तो वह जानता है कि उसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं। वह मेरी जान का दुश्मन क्यों बनेगा?"

मिनावो अडानलीट और उसके देवता को अपने बचपन से जानती है—तब से, जब उसका जन्म हुआ था और उसके माता-पिता नवजात बच्ची के रूप में उसे यहां लाये थे। आव समाज में यही प्रथा है कि घर में बच्चे का जन्म होते ही उसके माता-पिता उसका भाग्य जानने के लिए उसे किसी पुजारी के पास ले जाते हैं। वे यह भी जानना चाहते हैं कि अब उन्हें किस देवता की पूजा करनी होगी और किन प्रतिबंधों का पालन करना होगा। इसी तरह प्रत्येक नवजात शिशु का परिचय वूडू से कराया जाता है। इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए मिनावो अपने जुड़वां बच्चों को लेकर यहां आयी थी।

मिनावो कहती है, "दोनों बच्चे दीर्घायु होंगे और उनको जुदा नहीं किया जायेगा। उनको हमेशा साथ ही रहना है, क्योंकि जुड़वां बच्चों का साथ रहना ही उनके लिए हितकर होता है।"

इनमें से प्रत्येक बच्चे के लिए एक सुरक्षा 'लेगबाह' निर्धारित किया जाता है। 'लेगबाह' मिट्टी की बनी एक मानवाकार आकृति होती है, जिसमें आंखों की जगह कौड़ियां लगी होती हैं और काफी बड़े आकार की जननेन्द्रिय होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति का अपना जन्म प्रतीक होता है, जो उसकी मृत्यु हो जाने के बाद ही नष्ट किया जाता है। अडानलीट का मानवीकृत प्रतीक चिह्न अहाते के बीच में बनी हुई एक मीनार है, जिसमें कांच की बोतलें जड़ी हैं, कुछ झंडे टंगे हैं और उसके इर्द-गिर्द चूने की पुताई की पट्टियां एक-दूसरी को काटती हुई ऊपर तक चली गयी हैं। मीनार कंक्रीट की बनी है, जो अडानलीट की समृद्धि का परिचय देती है।

अडानलीट के वूडू देवता एजान हैं। उसके पूजास्थल पर इनामेल के दो प्याले औंधाकर आपस में कस दिये गये हैं, जिन पर खजूर का तेल मला गया है। जानवरों की बलि दी जाने से उस पर खून के धब्बे लग गये हैं। इन प्यालों को कौड़ियों की झालर लगे एक कपड़े से ढंक दिया गया है और उन पर भूसे का एक हैट टंगा है। पूजास्थल की छत में जहां-तहां जानवरों की खोपड़ियां टंगी हैं। यहां हाल ही में बकरे की बलि दी गयी है और उस पर बकरे का सिर इस प्रयोजन से टंगा है कि बलि देनेवाले के मन को शांति मिले। बकरे के गोश्त के कुछ टुकड़े पूजास्थल पर जहां-तहां खुसे हुए हैं, जो बलि के रूप में देवता पर चढ़ाये गये हैं और बाकी सारा गोश्त अडानलीट के परिवार का भोजन बन गया है।

मिनावो जब अडानलीट को अपनी समस्याओं के बारे में बता रही होती है, तभी दीवार में बने दरवाजे से निकलकर एक युवती वहां आ जाती है। वह होमीमीतो है, अडानलीट की आठवीं पत्नी। वह मिनावो की सहेली भी है। कुमासीस में जो औरतें हमने अब तक देखी थीं, उन सबसे भिन्न रूप है उसका। उसका सिर घुटा हुआ है। माथे की त्वचा पर नीले रंग का गोदना है। उसका पूरा शरीर निरावृत है, सिर्फ कमर का भाग एक लंगोट से ढंका है। उसके पैरों में हरे रंग के मनकों की एक-एक माला है। वह वूडू की दीक्षा प्राप्त कर चुकी है और अपने सम्प्रदाय की पोशाक में है। वह काफी शर्मीले स्वभाव की है, कम बोलती है और ज्यादातर चुप रहकर मुस्कराती है। इस समय वह पूजास्थल की झाड़-बुहार करने आयी है।

सत्रह साल की उम्र में ही उसकी शादी अडानलीट से हो गयी थी। पिछले तीन साल उसने एक 'कपामे' अर्थात गुप्त संस्था द्वारा चलाये जा रहे प्रशिक्षण केन्द्र में गुजारे हैं। इन प्रशिक्षण केन्द्रों में स्त्रियों को 'वूडूसी' अर्थात वूडू की उपासिका बनने का प्रशिक्षण दिया जाता है। आव समाज में ऐसी गुप्त संस्थाओं का संचालन प्रायः महिलाएं करती हैं, जो वूडू परम्परा को पीढ़ी पर पीढ़ी जीवित रखना चाहती हैं। ये महिलाएं वूडू सम्प्रदाय के गुर सिखाने का काम करती हैं। यद्यपि पुरुष भी वूडू उपासक बन जाते हैं, परन्तु प्रशिक्षण मुख्य रूप से स्त्रियों को ही दिया जाता है।

एमिहोते की तरह सभी पुजारिनें कभी न कभी वूडूसी रही हैं और वे ही शिक्षक के रूप में गुप्त प्रशिक्षण केन्द्रों में शिक्षक के रूप में जाती हैं। सभी पुजारियों के लिए संस्थागत प्रशिक्षण जरूरी नहीं है। कोई प्रशिक्षणार्थी यदि समयपूर्व केन्द्र से जाना चाहता है, तो इसकी इजाजत पाने के लिए उसे पुजारियों को काफी रकम चुकानी पड़ती है। होमीमीतो पूरे तीन साल प्रशिक्षण केन्द्र में रही है।

लोमे के बाहर एमेंडान नामक एक छोटा-सा गांव है। इस गांव के पास एक निर्जन जंगल है, जिसमें इस तरह का प्रशिक्षण दिया जाता है। कहीं-कहीं जंगल इतना घना है कि सूरज की रोशनी भी धरती तक नहीं पहुंच पाती। इस अंधेरे का फायदा उठाकर चमगादड़ पेड़ों से इस तरह लटके रहते हैं, जैसे फल लटके हों। यह निर्जन वन वूडू सम्प्रदाय का इलाका माना जाता है और इसमें सर्वसाधारण का प्रवेश वर्जित है। इस जंगल में अनुष्ठानों के लिए एक गुप्त वनरक्षक तैनात रहता है।

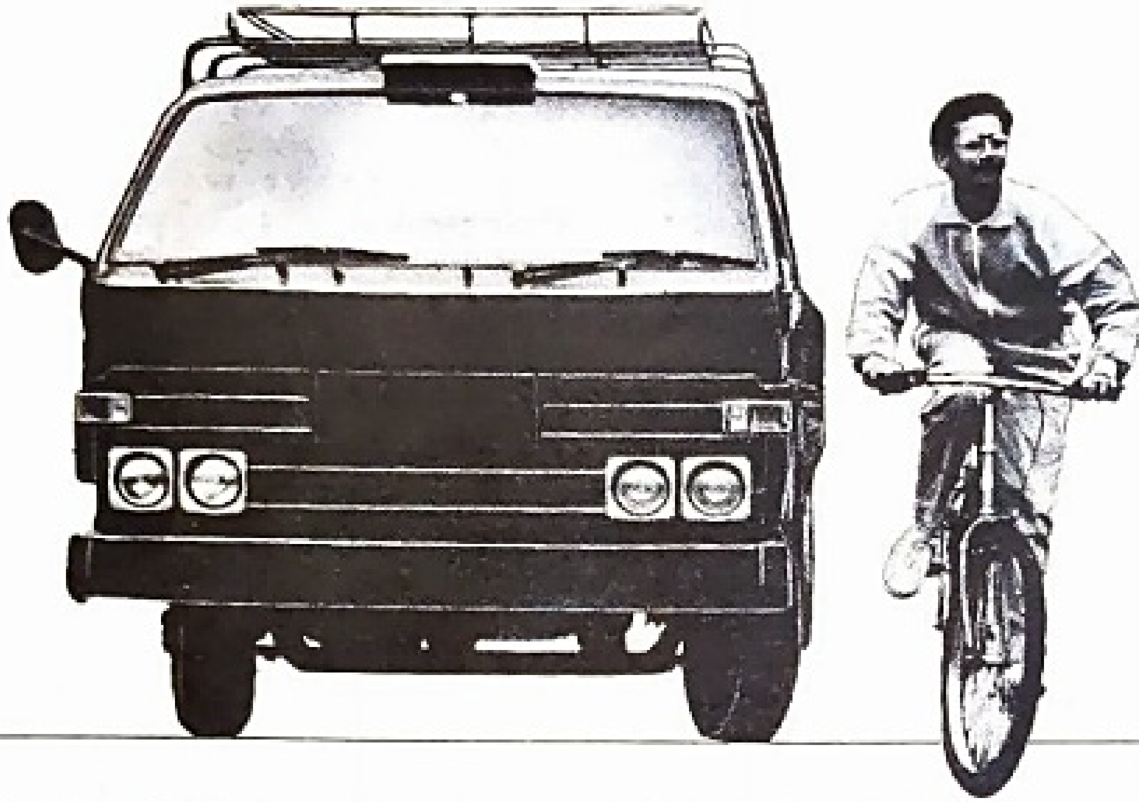
हैबिआसो के 'कपामे' में दाखिल होने से पहले हमें भी जूते उतारकर बिना सिले कपड़े पहनने पड़े। ऐसा किये बिना हमें वहां घुसने न दिया जाता। रिवाज के मुताबिक हमें देवता को भेंट चढ़ानी पड़ी। बड़े पुजारी और उसके सहायकों को धन के साथ-साथ श्नाप्स की कई बोतलें भेंट करनी पड़ीं।

वूडू का प्रशिक्षण देनेवाली गुप्त संस्था द्वारा इस अहाते में दीक्षाप्राप्त स्त्री-पुरुषों को दो वर्ष के लिए प्रवेश दिया जाता है। इस दौरान उन्हें देवता की उपासना के नृत्य और कुछ अन्य काम सिखाये जाते हैं। जिन चटाइयों पर बैठकर देवता की इच्छा जानी-समझी जाती है, उनको बुनना और माथे पर बांधी जानेवाली विशेष तरह की पट्टियां तैयार करना उन्हें सिखाया जाता है। अनुष्ठान के कर्मकाण्ड की शिक्षा देते समय उन्हें बताया जाता है कि किस देवता की उपासना के लिए उन्हें किस वस्तु का त्याग करना होगा। एक खास तरह की बोली उन्हें सिखायी जाती है, जो उनकी संकेतात्मक भाषा है। इसे सामान्य व्यक्ति नहीं समझ सकता। कुछ प्रशिक्षणार्थी लकड़ी पर नक्काशी के काम जैसा कुछ व्यावसायिक प्रशिक्षण भी प्राप्त करते हैं, ताकि वे सुविधापूर्वक जीवन-निर्वाह कर सकें।

होमीमीतो ने हमें बताया, "प्रशिक्षण के दौरान कुछ चीजें खाने की मनाही होती है। उस दौरान संयम-नियम से रहना पड़ता है। भोग-विलास एकदम वर्जित है। हमारे परिवार के लोग चाहें, तो बीच में आकर हमसे मिल सकते हैं। वहां कुछ वूडूसियां बाल-बच्चोंवाली भी होती हैं। आम तौर पर बच्चों को साथ रखने की इजाजत नहीं दी जाती, पर आपवादिक मामलों में इसमें छूट भी दी जाती है। प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को अपने विशिष्ट वूडू की गुप्त संस्था द्वारा अनुमोदित पोशाक पहननी पड़ती है।"

मिनावो और होमीमीतो के माथे पर एक से गोदने अंकित थे, जिससे यह स्पष्ट था कि उन दोनों ने एक ही जगह प्रशिक्षण लिया है। दोनों सहेलियां आपस में वूडू बोली में ही बातें करती थीं। इन दोनों ने स्वेच्छा से यह प्रशिक्षण नहीं लिया था, बल्कि परिस्थितिवश उन्हें ऐसा करना पड़ा था।

सब कुछ तो ठीक है,
फिर गाड़ी पिक-अप क्यों नहीं ले रही?

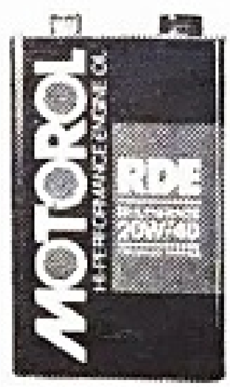


दोषी : साधारण इंजिन ऑयल. यह पिक-अप कमज़ोर कर देता है. फिर कई समस्यायें खड़ी हो जाती हैं. जैसे खराब लुब्रिकेशन, बेकार कूलिंग और फिर यह सिलसिला चलता ही रहता है. नतीजा - रिपेयरिंग का मोटा बिल.

समाधान : मोटोरॉल हाइ-परफॉर्मेन्स इंजिन ऑयल. हाइ-परफॉर्मेन्स इसलिये कि इसके उच्च श्रेणी के तत्व आपके इंजिन की भली भाँति देखभाल करते हैं.

अब स्टार्टिंग की समस्या नहीं रहती. ठण्ड में भी नहीं. इसके ख़ास तत्व तोड़-फोड़ कम करते हैं. ज़ंग व एसिड से उत्पन्न रगड़ से बचाव करते हैं. यह इंजिन के ख़ास हिस्सों को साफ़ करते है. और ऑयल में गन्दगी बैठने से रोकते हैं ताकि उसे आसानी से बदला जा सके. स्पार्क प्लग पर कार्बन के जमने को रोकते हैं. यह इंजिन के विभिन्न हिस्सों के लिये अच्छे खासे कूलर का काम करता है. ऑयल में झाग बनने की क्रिया को नियंत्रित करता है और इंजिन को हानिकारक तत्वों से बचाता है.

अब जब गाड़ी स्टार्ट करते ही कोई आपको ओवरटेक कर जाए, तो समझिये कि मोटोरॉल अपनाने का समय आ गया है.



MOTOROL
RTX | RDE
HI-PERFORMANCE ENGINE OIL
FROM RINKI INDUSTRIAL OILS LIMITED

मुफ़्त!
हिन्दी गीतों की एक कैसेट मोटोरॉल के किसी भी उत्पादन या पैक की कुल मिलाकर 20 किलो/लिटर की खरीदी पर

मोटोरॉल
आपका इंजिन बेहतर चले, दूर तक चले.

रिन्की इन्डस्ट्रियल ऑयल्स लिमिटेड, 67, रेस कोर्स सर्कल, बड़ौदा 390 007.
■ फ़ोन : 324101/2, 324447, 324377 ■ टेलेक्स : 0175-298 RINK IN ■ फैक्स : 0265-326149

Mudra.A/RO 6008 Hin. A

हीमोमीलो अपने बचपन में एक बार बहुत गंभीर रूप से बीमार पड़ गयी थी। उसे बुखार आ गया था, जो बहुतेरा इलाज कराने पर भी लम्बे समय तक उतरा नहीं था। जब वह उठने-बैठने लायक भी न रही, तब उसके पिता उसे एक बड़े पुजारी के पास ले गये। पुजारी ने देवता से सम्पर्क कर बताया कि बलि चढ़ाने भर से यह लड़की स्वस्थ नहीं होगी। अगर बड़ी होने पर इसे वूडू प्रशिक्षण दिलाने की मन्नत मानी जाए, तो यह चंद दिनों में चंगी हो सकती है।

पिता बेटी के जीवन से निराश हो चले थे। उन्होंने पुजारी की बात मानकर बलि चढ़ा दी थी और यह मन्नत भी मान ली थी। सचमुच कुछ दिनों में हीमोमीलो एकदम स्वस्थ हो गयी थी। पिता की मन्नत पूरी करने के लिए ही उसे यह प्रशिक्षण लेना पड़ा था। मिनावो को भी कुछ ऐसी ही परिस्थितियों में प्रशिक्षण लेना पड़ा था।

एमिहोते ने भी हमें बताया था कि उसके सीने में तेज दर्द उठा करता था, जिसके कारण वह रात-रात भर सो नहीं पाती थी। पुजारी के पास जाने पर उसे भी ऐसा ही इलाज बताया गया था। उसने अपना मालिक धर्म बंद हो जाने के बाद प्रशिक्षण लिया था। अडानलीट ने भी ढेर सारी घरेलू मुसीबतें झेलने के बाद चालीस से पैंतालिस की उम्र के बीच प्रशिक्षण प्राप्त किया था।

जब हम लौटकर आये, तो हमें सड़क पर ही अफोना और काना अटोरा मिल गये। वे आपस में भाई-बहन हैं।

अफोना हमसे कहती है, "आप लोग क्यों वूडू उपासकों के चक्कर में पड़ कर अपना वक्त बर्बाद कर रहे हैं? ये पिछड़े हुए लोग 'कबये' आदिवासी हैं, जो प्रोटेस्टेंट हो गये हैं। इनकी नफरत की जड़ें इनके जातिगत विद्वेषों और धर्मगत भेदभाव हैं। विकास के किसी काम में ये सहयोग नहीं देते, जबकि पुजारियों को भेंट-पूजा चढ़ाने के लिए मुंहमांगी रकम देने को तैयार हो जाते हैं। इनकी औरतें अपनी छाती तक नहीं ढंकती।"

काना कहता है, "ये लोग बहुविवाह करते हैं। मुझे देखो, मैंने एक ही विवाह किया है।"

अफोना बैंक में क्लर्क का काम करती है और इन दिनों अपने विवाह के लिए पैसे बचाने में लगी हुई है। वैसे यह भी सच है कि अभी तक उसकी मुलाकात ऐसे किसी व्यक्ति से नहीं हुई है, जिसे वह अपना जीवन-साथी बनाने की बात सोचे।

जब हम बताते हैं कि हम एक ऐसे समारोह में शामिल होने जा रहे हैं, जिसमें पुजारी अपने देवता से आविष्ट होते हैं, तो वे आश्चर्य से आंखें फाड़कर हमें देखने लगते हैं।

लोमे के केन्द्रीय इलाके में, जहां पहले भीड़भाड़ रहा करती थी, अब एक बड़े पुजारी का घर और पूजा-स्थल है। वहां हर शुक्रवार को ऐसा आयोजन होता है। जिस कमरे में पूजास्थल है, वहां शराब की तेज गंध आती है। इस कमरे का एक कोना किसी रंगमंच के पिछले हिस्से में बने ड्रेसिंग रूम जैसा दिखता है। यहां पहुंचकर अलग-अलग वूडू की उपासिकाएं भाग-दौड़ कर बड़ी फुर्ती से अपने विशिष्ट सम्प्रदाय की पोशाकें पहनती नजर आती हैं। बाहर ढोल की लय-ताल में बंधी आवाज गूंज रही है, जिसमें अजीब-सा सम्मोहन है।

पूजास्थल के छोटे कमरे में कोला के बीज बिखरे पड़े हैं और एक दीवार के पास उनका ढेर लगा हुआ है। कोला-बीज का स्वाद कच्चे आलू की तरह कड़वाहट लिये होता है और उसको चबाने से दांत कुछ पीले हो जाते हैं। यहां मौजूद प्रत्येक व्यक्ति कोला-बीज चबाता हुआ दिखता है, क्योंकि ऐसी मान्यता है कि इनको चबाने पर ध्यान या आवेश की स्थिति में जल्दी पहुंचा जा सकता है।

औरतें यहां से निकल-निकलकर बाहरी अहाते में पहुंचती हैं, जहां पहले से ही कुछ लोग संगीत की धुन पर थिरकते हुए मंत्रोच्चार कर रहे हैं। औरतों और बच्चों को मिलाकर कुल ८० व्यक्ति यहां रखी बेंचों पर इस तरह बैठे हैं कि बीच में एक वर्गाकार जगह खाली छूटी है। यह जगह ढोल बजानेवालों और नाचनेवालों के लिए है। कुछ लोग अपने मित्रों-परिचितों से मिलने और कुछ थोड़ी देर के लिए यहां का दृश्य देखने के लिए भी आ जाते हैं। एक औरत धुले हुए कपड़े अहाते के बाहर सूखने के लिए टांगकर बहुत ऊब के साथ सारा दृश्य देख रही है। यहां केवल वूडू उपासिकाओं को ही 'ध्यान' में आने या आविष्ट होने की इजाजत है। किसी बड़े पुजारी के निर्देशों या कर्मकाण्ड का कोई अनुष्ठान किये बिना यहां औरतों को अपने वूडू से सम्पर्क का मौका मिलता है।

औरतों में से एक भड़कीली लाल पोशाक पहनकर आयी है। लाल रंग 'कुई' नामक वूडू का प्रतीक है। औरत का चेहरा ढंका है, लेकिन उस पर सफेद रंग पुता हुआ है। उसे उम्मीद है कि उसकी चमक-दमकवाली पोशाक से वूडू जल्द ही उसकी ओर आकर्षित होंगे। उसके साथ-साथ नाचनेवाली कुछ स्त्रियां और भी हैं। इन सब के आस-पास जमा लोग संगीत की धुन पर थिरक रहे हैं और मंत्रोच्चार कर रहे हैं।

जो स्त्रियां यहां अपने-अपने वूडू को रिझाने के लिए नाच रही हैं, उनमें से कुछ की आंखों में नशे का भाव दिखाई पड़ने लगा है। कुछ की आंखें एकदम लटपटा गयी हैं और वे अपने सिर आगे-पीछे झटकारने लगी हैं। भड़कीले लाल रंग की पोशाक पहने वह स्त्री ध्यानविह्वल हो गयी है। शायद देवता उस पर आ गये हैं। वह उस वर्गाकार जगह पर चक्कर लगा रही है और उसकी देह लचक रही है। जिस स्थान पर वह नाच रही है, वहां फर्श पक्का नहीं है, इसलिए जब वह अपनी टांगें उछालती है, तो धूल भी उड़ती है। कभी वह आगे की तरफ झुक जाती है, कभी पीछे की तरफ। उसकी त्वचा पर पसीने की बूंदें चमक रही हैं। उसे विश्वास है कि उसके वूडू देवता उसके शरीर में प्रविष्ट हो गये हैं। बीच-बीच में वह आगे बढ़कर दर्शकों में से किसी से हाथ मिलाने लगती है और उस समय इतने जोर का झटका देती है कि सामने बैठा हुआ आदमी न केवल खिंच आता है, बल्कि कभी-कभी तो गिर भी पड़ता है। वैसे यहां यह माना जाता है कि वह जिनसे हाथ मिला रही है, उनको भी देवता की कृपा का कुछ अंश प्राप्त हो रहा है।

वूडू देवता के मानव शरीर में प्रवेश के साथ रति सुख की भावना भी जुड़ी हुई है। भावाविष्ट होने या देवता से आविष्ट होने के लिए आव कबीले की बोली में जिस शब्द का प्रयोग होता है, वह स्त्री-पुरुष सहवास के लिए भी प्रयुक्त होता है।

पहली बार हमारे देखने में यह आया कि शुक्रवार के इस साप्ताहिक समागम में किसी से पैसे नहीं लिये जाते। फिर भी न केवल पूजास्थल पर, बल्कि नाचनेवालों के लिए भी श्नाप्स की कोई कमी नहीं थी। सभी को वह उपलब्ध थी।

वूडू ऐसे देवता हैं, जो अपने लिए अपने भक्तों से बढ़िया से बढ़िया भेंट-पूजा या बलि मांगते हैं। उनके पूजास्थलों से लेकर अनुष्ठान में काम आनेवाली चढ़ाइयों तक हर चीज बढ़िया से बढ़िया होनी चाहिए। यह सच है कि अडानलीट और एमिहोते जैसे लोग, जो देवता और जनसाधारण के बीच माध्यम का काम करते हैं, इससे काफी फायदा उठाते हैं। उनकी अपनी कीमतें होती हैं, जिसे चुकाने में वूडू माननेवालों को कोई एतराज नहीं होता।

कुछ भी हो, वूडू सम्प्रदाय पश्चिमी अफ्रीका की आदिवासी संस्कृति का एक ऐसा विशिष्ट पहलू है, जिसके बारे में आज भी बहुत कम लोग जानते हैं। देश-विदेश की आदिवासी संस्कृतियों का अध्ययन करनेवालों के लिए इसका अपना महत्व है। ●

—अनुवाद : हरिदयाल चतुर्वेदी



आज फिर नकली छीनकर लौटे!... कल से तुम घर में बैठकर रोटी पकाना, तुम्हारा धंधा मैं संभालूंगी...।

आखें प्यार देती भला वे किस डिब्बे में बन्द की जा सकती हैं? किस दूकान में बिक सकती हैं? ठीक वैसे ही, संसार का सर्वोत्तम शिशु आहार एक ही जगह मिलता है-माँ के आँचल में.

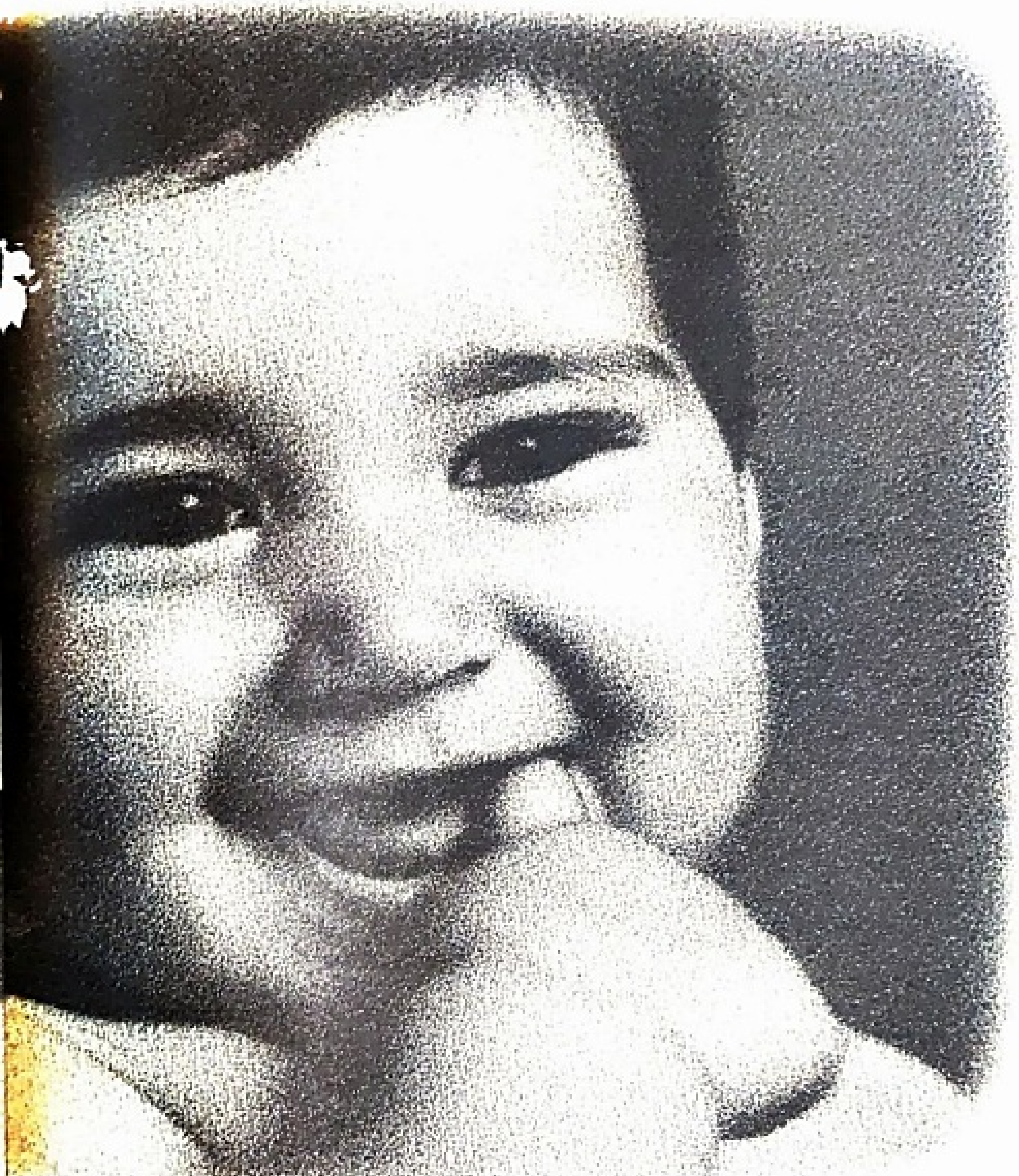
माँ का दूध सिर्फ आपके मुन्ने की भूख ही नहीं मिटाता, आपका प्यार-दुलार उस तक पहुँचाता है. गोद में दूध पीते हुये मुन्ने को देखिये - लगेगा, मानो दुनिया की सबसे बड़ी न्यामत उसे मिल रही है. माँ और शिशु के अजर अमर बंधन को मजबूत बनाने का इससे बेहतर कोई उपाय हो सकता है भला? आपके स्नेह-छोह, प्यार-दुलार की वह खुशबू किसी और शिशु आहार में आ ही नहीं सकती.

पोषण की नजर से देखा जाये, तो भी माँ के दूध का मुकाबला कोई शिशु आहार नहीं कर सकता. इसके हल्के, आसानी से पचनेवाले प्रोटीन, इसके कुदरती खनिज पदार्थ, इसकी शक्तिदायक शर्करा—यानि वो सारा कुछ जो आपके शिशु को अच्छी सेहत बनाने के लिये चाहिये. आखिर इसका स्रोत भी तो आप ही हैं.

और मुन्ने की असली जरूरतों को आपसे बेहतर कौन समझेगा, माँ?

शुक्र है, संसार का सर्वोत्तम शिशु आहार दूकानों में नहीं बिकता.

अमूल का यह संदेश हर भारतीय माता और उसके शिशु के लिये



—ठग—

(पृष्ठ ५६ का शेष)

'बिट्टो' या 'कूज' अर्थात ठग नहीं है। ठग होने पर सम्बोधन से ही पहचान लिया जा सकेगा। सच्चा ठग अपरिचित ठग को देखते ही बोल पड़ेगा, "औले खान, सलाम!" या "औले भाई, राम-राम!"

'बोरा' ओं की भाषा में उनके विचरने के क्षेत्र का नाम है 'बाग' या 'फूल', रुमालधारी खूनी का नाम है 'मुकोत' या 'भुरतोत'। जहां खून किया जाता है, उस जगह का नाम है 'ब्याल' या 'बिल'। जाल में मनपसंद मंडली आ फंसते ही एक आदमी चला जायेगा 'बिल' पसंद करने के लिए। जाने से पूर्व दलपति कहेगा, "जा, कटोरी मांज ला," यानी "जगह तय कर आओ।" उसका नाम है 'बिलहो'। उसकी रिपोर्ट मिलने के बाद वहां के लिए दौड़ेगा 'लुगहा', यानी कब्र खोदनेवाला। कितने कब्रों की जरूरत पड़ेगी, यह तो वह मालूम करके ही गया है। दस मील या बीस मील दूर, यह कब्र खोद रहा है। कब्र दो किस्म की हो सकती है—'कुरवा' या चौकोर, या 'गब्बा', यानी गोलाकार।

उधर जब कब्र बन रही है और इधर उस बीच शिकारी और शिकार में दोस्ती हो गयी है। अगर दिखाई दे कि मंडली काफी अमीर है, तो क्या कहना? 'सोथा' फौरन उनके इर्द-गिर्द मंडराने लगेंगे। उनका काम है उस मंडली को अपनी दोस्ती के दायरे में ले आना। 'चन्दुरा' या दस ठग उनकी इस काम में सहायता करते हैं। 'सोथा' की जिम्मेदारी जिस प्रकार बटोहियों में विश्वास उपजाना है, इनकी जिम्मेदारी मनोरंजन करना है। मुसाफिर अगर 'लटकनिया' या गरीब है, तो भी खातिर में कोई कमी नहीं होगी। 'खाऊओं' के पास यानी ठगों के गिरोह के लिए राह पर सभी बराबर हैं। वहां 'फांक' या बेदाम की चीजों की भी काफी कद्र है।

इधर वक्त जितना ही आगे बढ़ता जायेगा, एक दल उतना ही पिछड़ जाने लगेगा। वे हैं 'तिलहाई' या गुप्तचर। पीछे 'डानकी', 'दानकी' या पुलिस लगे हैं या नहीं, इस पर निगरानी रखना उनका काम है।

वध-स्थान पर पहुंच कर भी वे मौके की प्रतीक्षा करेंगे। मनपसंद जगह पर वे 'थाप' बिछाएंगे, यानी तम्बू गाड़ेंगे। पास-पड़ोस में 'तुप्पुल', यानी गली-कूचा है या नहीं, इसका भी पता लगाएंगे। देखना यह है कि जगह 'निसार' (निरापद) है, या 'टिक्कुर' (खतरनाक)। सारी सूचनाएं लेने के बाद रात को एक साथ दावत होगी। दावत के बाद किस्सा-कहानी। दल में अगर कोई 'नौरिया' या नवागत नाबालिग है, तो उसे वहां से दूर भेज दिया जाएगा।

समय आ गया है। शायद कोई-कोई बटोही उस वक्त भी खड़ा हुआ है। खड़े-खड़े, 'सोथा' के मुंह से किस्सा सुन रहा है। ऐसे ही समय 'सोथा' अपने बगल में बैठे आदमी को धीमी आवाज में आदेश देगा, "चुका देना", या "पिवाई देना।" यानी किसी तरह समझा-बुझा कर उनको बिठा दो। वे बैठ गये। बगल में वे भी। दोनों ओर दो, पीछे एक और। बीच में बटोही। किस्सा जारी है।

"बटोहियों की आंखों में नींद उतर आयी है। ऐसे ही समय सुनाई पड़ा। कोई कह रहा है, "पान का रुमाल लाओ।" बटोही ने सोचा कि शायद पान का रुमाल ही मांगा गया है। वे उस वक्त भी नहीं जानते कि हुक्म हो गया कि रुमाल तैयार करो। उसके बाद ही दूसरा हुक्म, 'तमाकू लाओ।' सोते हुए आदमी का खून करना मना है। इसलिए बटोही अगर सो रहे हों, तो एक आदमी चिल्ला उठेगा, "सांप-सांप", या "बिच्छू-बिच्छू।" वे हड़बड़ा कर उठ बैठेंगे और फिर नींद की गोद में लुढ़क जायेंगे—अब की बार हमेशा के लिए।

'मुकोत' लमहे भर में उसके गले में फांसी लगा देगा। बगल में बैठा आदमी एक धक्का देकर, उसे जमीन पर गिरा देगा। उसका नाम है 'चुमिया' एक आदमी दोनों हाथ पकड़े रहेगा। उसका नाम है 'चुमोसिया' या 'समसिया' क्या हो रहा है, यह समझने से पहले ही बटोही आखिरी सांस ले लेगा। 'मुकोत' विजय के आनंद से चिल्ला पड़ेगा, "बाजित खान", यानी काम खत्म। दलपति कहेगा—'ऐ, बिचाली देखो', यानी 'बाहरा' या लाशों का इंतजाम करो। देखना, कोई 'जीवालु' जिन्दा आदमी न रह जाय।

एक दस्ता फौरन लाशों को ढोकर, कब्र की ओर ले चलेगा। वे लोग हैं 'भोजा'। और एक दस्ता है, जो घुटनों को तोड़कर ठोढ़ी के साथ मिलाकर कब्र में रखेगा। पेट और सीने पर चाकू चलाकर, काम पक्का कर देंगे। उनका नाम है 'कुथावा'। कहीं लाश फूल कर कब्र फोड़कर बाहर न निकल आये, इसी का इंतजाम करना उनका काम है।"

"वे जब ये काम करने में मशगूल होते हैं, तब दूर नुक्कड़ पर दो आदमी निगरानी करने में लगे होते हैं। खतरे के आसार देखने पर वे एक टुकड़ा सफेद लत्ता हिलाएंगे। अंधेरे में वह कपड़ा देखकर, दूसरों को मालूम हो जायेगा कि खतरा आ रहा है। 'फुरकदेना' उसी की इत्तला भेज रहा है।"

अगर आखीर तक ऐसा कुछ भी न हो, तो हाथों-हाथ हैरतअंगेज फुर्ती के साथ लमहे भर में खून के सारे निशान मिटा दिये जाएंगे। एक को कहा जायेगा—'फुरजाना'। वह फौरन उस जगह को साफ-सुथरी बना देगा। देखते



मृण्मूर्तियों द्वारा ठगों की अपराध-शैली का चित्रण

ही देखते कब्रों के ऊपर उनकी भोज सभा बैठ जायेगी।

गुड़ का भोज। लेकिन ठग कहते हैं कि वह चीज गुड़ नहीं, अमृत है। सब का उस पर हक नहीं है। सिर्फ 'खून' या सच्चे ठग के जो बच्चे हैं, और जिन्होंने अपने हाथों से खून किया है, उन्हीं को मुंह में गुड़ डालने का हक हासिल है। बाकी को भी मिलता बेशक है, लेकिन वह मंत्रपूत गुड़ नहीं होता। उनके लिए कुछ पहले से ही अलग रख लिया जाता है।

"इस तरह खून करने के बाद ही बेगुनाह लोगों के कब्रों पर बैठ कर दावत उड़ाने में क्या तुम्हें जरा भी तकलीफ नहीं होती?"

"नहीं", फिरंगिया ने जवाब दिया था, "कभी-कभार हमारा दिल पसीज न उठता हो, ऐसी बात नहीं। लेकिन 'तुपोनी का वह गुड़' हम लोगों को सब कुछ भुला देता है। वह गुड़ जिसने एक बार मुंह में डाला हो, उसके लिए दुनिया दूसरे किस्म की हो जाती है। मैं बता रहा हूं साहब, तुम परख कर देख सकते हो। कितना ही जहीन हो, कितना ही धन-दौलतवाला हो, यह गुड़ एक बार जो खा लेगा, फौरन ठग बन जायेगा। घोड़े को खिलाओ तो देखोगे कि उसकी भी चाल-ढाल बदल गयी है।"

"धत्, ऐसा भी कहीं हो सकता है?"

"होता है। न जाने कब बचपन में बाप ने मुंह में 'तुपोनी' का गुड़ डाला था। उसका स्वाद आज भी मुंह में चिपका हुआ है। और अब भी अगर हजार साल और जिंदा रह गया, तो भी मुझे हमेशा ठग ही बना रहना पड़ेगा।"

दावत खत्म हुई। कब्र पर बिस्तर बिछा कर, पूरा गिरोह उस रात उसी जगह आराम करता रहा। रात को 'तिलहाई' खबर ले आया कि दूसरी एक मंडली सामने पश्चिम के रास्ते पर चल रही है, हालांकि आखिर तक पश्चिम के रास्ते पर चलेगी ही, यह कहना मुश्किल है। दलपति ने अपना दल चार हिस्सों में बांट दिया। हुक्म हुआ कि चारों दल सुबह होने के पहले ही चार दिशाओं में निकल पड़ेंगे। एक को किसी भी दल में नहीं लिया गया। वह

'भायली' है। उसके हाथ गांव कुछ रुपया भिजवा देना है। क्योंकि, कब वे घर लौट सकेंगे, कौन जाने? बच्चों को तकलीफ होगी।

सुबह होने के पहले ही चार दल चार ओर निकल पड़े। जितनी देर पटेल की वह मंडली की खोज नहीं मिलती, तब तक वे चलते रहेंगे। दिनों, हफ्तों वे चलते रहेंगे। चलते-चलते चौराहे पर आ जाने पर सामनेवाला दल चुपचाप बालू पर एक लकीर खींच कर चला जायेगा। उस संकेत को देखकर, पीछे के दल को यह समझने में कोई दिक्कत नहीं होगी कि उनको किस रास्ते पर चलना है, किस रास्ते में जाना चाहिए। कितनी ही दूर का रास्ता क्यों न हो, वे चलेंगे ही। एक गिरोह ने बारह आदमियों का खून करने के लिए बीस दिन में दो सौ मील पैदल तै किया था।

शायद अंत में चंद तांबे के पैसे मिले, या शायद वह भी नहीं। लेकिन फिर भी मन ही मन एक बार जिस पर इन लोगों ने निशाना साध लिया है, उसकी हत्या वे करके ही रहेंगे। मुसाफिर कितने सावधान क्यों न हों, ठग के चंगुल से उनका बचाव नहीं।

एक दिन एक ऊंचे खानदान के मुसलिम नौजवान घोड़े पर जा रहे थे। उनके साथ काफी लाव-लश्कर लोग-बाग थे। वह सज्जन भी अच्छी तरह लैस थे। उनकी कमर की एक तरफ तलवार थी, दूसरी ओर पिस्तौल। पीठ पर तीर कमान। ठगों के गिरोह ने तय किया कि इनकी हत्या करनी है। लेकिन वह मुगल किसी भी अजनबी को नजदीक फटकने नहीं देता था। वे हिन्दू हों, या तीर्थयात्री। ब्राह्मण भी हों, तो क्या?

दूसरे दिन रास्ते में मुसलमान मुसाफिरों का एक काफिला मिला। उन लोगों ने सलाम करके रास्ते के खतरों के बारे में बताया। काफिले में जो बुजुर्ग था उसने बताया, "ऐसा जमाना आ गया है कि ऐसे बदहाली के दिनों में अकेले राह चलते किसे डर नहीं लगता? हम लोगों का नसीब अच्छा है कि आप जैसा साथी मिल गया।"

मुगल फिर भी अटल बना रहा। उन्होंने कहा, "भाग जाओ।"

तीसरे दिन एक सराय में उन्हें रात काटनी पड़ी। ठगों के एक गिरोह ने भी वहां अड्डा जमाया। नवाबजादों से उन लोगों का परिचय बेशक नहीं हो सका। लेकिन रातोंरात उनके नौकर-चाकरों में से बहुतों के साथ उनकी दोस्ती हो गयी।

चौथे दिन कुछ दूर पहुंचते न पहुंचते फिर एक नये दल से मुलाकात हो गयी। मुगल को यह मालूम न था कि रात को वे एक ही सराय में टिके थे। उन्होंने अपने दस्तूर के मुताबिक इनसे कतराना चाहा। "नहीं, मुझे किसी साथी संगी की जरूरत नहीं है।"

उन लोगों ने कहा, "लेकिन हुजूर हम लोगों को तो जरूरत है। हम लोग गरीब तीर्थयात्री हैं, आपके साथ रहने पर शायद आपको कोई भलाई न हो, लेकिन हम लोगों का भला हो जायेगा, हम लोग निडर होकर राह चल सकेंगे। नौकरों में किसी-किसी ने आकर सिफारिश की और बताया कि "कल ये लोग हमारे साथ सराय में थे। आप बेझिझक इनको अपने दल के साथ ले सकते हैं। हम लोगों की जान-पहचान हो गयी है। नेक लोग हैं।"

मुगल फिर भी अटल बने रहे। उन्होंने कहा, "एक बार तो कह दिया, मेरे साथ नहीं। तुम लोग अपना रास्ता नापो।"

वे सलाम करके धीरे-धीरे गायब हो गये।

पांचवें दिन दिखाई पड़ा कि रास्ते के किनारे मुसलमान सिपाहियों का एक दल एक मुर्दा लिये, बैठा रो रहा है। नवाबजादे को देखकर, वे आगे बढ़ आये। बोले, "हुजूर, यह हमारा साथी था। तबीयत ठीक नहीं थी। पैदल चलने की मेहनत बरदाश्त न कर पाने से इसका इंतकाल हो गया। हम लोग जाहिल मुसलमान हैं। फौज में मुलाजिम हैं। कुरान-शरीफ वगैरह कुछ भी पढ़े नहीं हैं। कब्र तैयार है, अगर आप अन्तिम कृत्य कर दें, तो बड़ी इनायत होगी।"

शिक्षित मुसलमान परिवार की सन्तान। साथ में कुरान शरीफ भी था। मुगल से यह अनुरोध टाला नहीं जा सका। तलवार के बदले हाथ में कुरान शरीफ लेकर वे घोड़े से उतर आए। उन लोगों ने पानी ... दुआ करने बैठे। उनके सामने कब्र खुदी हुई थी। बगल में मुर्दे के दो दोस्त थे। वे समझ नहीं पाये कि सिपाही के भेष बदले, वे ठग थे।

मुगल आंखें बंद किये दुआ कर रहा था। नजदीक ही उसका घोड़ा और उसके लोग-बाग खड़े हैं। ऐसे ही समय पाक कुरान शरीफ की आयतों को नीचे दबाकर, निर्मम मृत्यु आदेश घोषित हुआ—"तम्बाकू लाओ।"

साथ ही साथ पीले रंग का रुमाल चमचमा उठा। लमहे भर में खुदा के ध्यान में मग्न, मुगल अपने ध्यान के विजय में लुप्त हो गया।

यह मूर्ति एक नहीं है। अपनी कब्रों के बगल में ध्यानमग्न बैठे पथिकों की ऐसी हजारों-लाखों मूर्तियां हैं।

उसी की एक मूर्ति आज भी एलोरा में है।

अगर कोई आज एलोरा की गुफा में आए और मौन पहाड़ों की चट्टानों पर खुदी हुई मूर्तियों को गौर से देखे, तो एक ही दृश्य देखेगा। कम से कम ठग ऐसा ही देख पाते थे।

स्लीमैन ने पूछा था—"सागर में जानसटन साहब को तुम लोगों ने शायद बताया था कि एलोरा गुफा में जाने से तुम लोगों के हुनर का पूरा-पूरा दर्शन हो जायेगा उन्हें!"

फिरंगिया ने जवाब दिया था, "जी हां, सारा का सारा। एक जगह आप देखेंगे कि लाश को कब्र की ओर ढोये ले जा रहे हैं। ठगों की ऐसी कोई कारगुजारी नहीं है, जो वहां न हो।"

दुर्गा बोला, "सिर्फ ठगों का ही क्यों जिक्र कर रहे हो? दुनिया में ऐसा कोई पेशा नहीं, जिसका नक्शा एलोरा में न हो।"

छोटे ने भी हामी भरी। "जी साहब, हम जभी उधर जाते हैं, तो एक बार उस गुफा को देख आते हैं। हैरतअंग्रेज बात। दुनिया के जितने पोशीदा कारोबार हैं, सब आंखों के सामने रखे हैं। हालांकि वह गुफा रात भर में बनकर तैयार हो गयी थी।"

स्लीमैन हंसे, "क्यों तुम लोगों के अलावा कोई और उनको देखे, तो क्या समझ सकेगा कि वह मूर्तियां तुम्हीं लोगों की हैं?"

फिरंगिया ने सिर हिलाया, "नहीं, सो कैसे समझ सकेंगे? हम लोग कभी किसी को यह बात नहीं बताते। कोई भी नहीं बताता। सभी लोग अपना-अपना पेशा देख पाते हैं, लेकिन दूसरों के सामने राज नहीं खोलते। दरअसल मामला क्या है, जानते हैं, हुजूर? ये सब किसी इंसान के हाथों का बनाया हुआ नहीं है। हम सभी का यह खयाल है कि यह एलोरा भगवान के अपने हाथों का सर्जन है।"

"तुम लोगों के किन-किन कारनामों की दास्तानें वहां खुदी हैं?" स्लीमैन ने फिर सवाल किया। उनकी बातें यथासंभव तफसील से जानना जरूरी था।

अब साहब खां आगे बढ़ आया—"मैंने देखा था, हुजूर, एक जगह 'सोथा' मुसाफिरों के साथ बैठा बातें कर रहा है, उनसे हिल-मिल रहा है, जैसा कि हम लोग करते हैं। और एक जगह 'भुरतोत' एक मुसाफिर के गले में रुमाल डाल रहा है। 'चमची' उसके दोनों पैरों को कस कर पकड़े हुए है। मैंने वहां यही दो दृश्य देखे थे, हुजूर।"

फिरंगिया ने बताया कि उसने और एक दृश्य देखा था। "लुगा मुर्दा लेकर कब्र की ओर जा रहा है।"

यह नहीं कहा जा सकता कि यह सारी की सारी मनगढ़ंत कहानियां ही हैं, क्योंकि डब्ल्यू क्रुक ने अपनी मशहूर किताब 'थिंग्स इंडियन' (१६०१) में लिखा है: भारत में ठगों के अस्तित्व का सबसे पुराना सबूत है एलोरा। कहा जाता है कि वहां एक खुदे हुए दृश्य में एक ब्राह्मण शिव-पूजा में बैठा है। उसके पीछे से हाथ में फांसी लिये मौत का जालिम दूत ठग टूट पड़ा है। व्याकुल महादेव अपने भक्त की रक्षा के लिए उद्यत है।

एलोरा सातवीं सदी की भारतीय कलाकृति है। इसलिए बहुतों की धारणा है कि ठगी भारत की अपनी देन है। कहा जाता है कि हमारे पुराण में वर्णित 'नागपाश' नामक हथियार यही साबित करता है।

लेकिन परवर्ती काल के अंग्रेज इतिहासकार कहते हैं कि यह प्रमाण नहीं,

केवल अनुमान मात्र है। क्योंकि हेरोडेटस ने इनका फारसवासी के रूप में वर्णन किया है। अपने इतिहास के सातवें अध्याय में उन्होंने लिखा है : ये लोग मूलतः फारसवासी हैं। इनकी भाषा फारसी है, पहनावा फारसवासियों जैसा है, कुछ-कुछ पैक्टियनों की तरह। लेकिन उनकी असली विशेषता उनके हथियार में है। सिवाय छुरे के वे कोई लोहे या पीतल का हथियार लेकर नहीं चलते। उनका असल हथियार है चमड़े के तस्मे से बनी एक फांसी।

हेरोडेटस के अनुसार, इसी अजीब दस्यु दल का आदि पुरुष सागार्ती, जिसने जारेक्साम की सहायता आठ हजार अश्वारोही देकर की थी।

पश्चिमी इतिहासकार काफी शोध के उपरान्त इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि भारत के ठग भी उसी महान पुरुष सागार्ती की ही संतति हैं। पश्चिम के मुसलमान विजेताओं के साथ-साथ उन्होंने भी आकर कभी इस देश की नर्म मिट्टी में कदम रखा था। इसके बाद फिर वे अपने देश न लौट सके, क्योंकि पराजित देश का माहौल उनकी मनचाही जिन्दगी के लिए काफी अनुकूल था। तिस पर लूट-खसोट से खोखले हिन्दुस्तान की मिट्टी में जड़ फैलाना भी मुश्किल न था। अपने वतन न लौटकर वे यहीं पर जंगल बसाने में लग गये थे।

मुलतानों के हमसफर बनकर आने की वजह से शुरू-शुरू में नौवारिद ठगों का पता था दिल्ली के आस-पास। तुगलक वंश गौरव फीरोज खां का दरबारी इतिहासकार जिया-उद्-बारनी ने १३६५ ई० में अपने 'तुगलक नामा' में लिखा है : १२९० सन् में जलालुद्दीन की हुकूमत में दिल्ली में करीब एक हजार ठग पकड़े गये थे। उन लोगों ने मुलतान के किसी प्रिय नौकर की हत्या करके बादशाह को नाराज कर दिया था। लेकिन वह थी शाही नाराजगी। सांझ उतरते-उतरते वह क्षमा में तबदील हो गयी। सुलतान ने कहा, "इसके चूतड़ों पर मेरे सिक्के की पक्की छाप लगवा कर उनको नाव पर बिठा दो। यह नाव पूर्वी भारत के लखना से पहले कहीं लंगर न डाले।" सुना जाता है कि बंगाल के ठग वहीं से आये थे।

सुलतानी जमाने में ठगों की दूसरी कहानी सुलतान अलाउद्दीन के समय की सुनाई पड़ती है। १३०३ ई० में जब बाहरी हमलों की धुआंधार आंधी चल रही थी, उस समय उन बुरे दिनों में बेपरवाह सम्राट की राजधानी की रक्षा का भार ठगों ने ही ले लिया था। उनके नायक थे मशहूर सन्त निजामुद्दीन। सुना जाता है कि उन्होंने ही अपने चेलों की सहायता से दुश्मनों में दहशत पैदा कर दी थी। कोई कहता है कि यह काम उन्होंने अपनी अलौकिक शक्ति के बल पर किया था, तो कोई कहता है कि उस रुमाल के बल पर।

दूसरे अनुमान के पक्ष में यह कहा जाता है कि दिल्ली का मशहूर निजामुद्दीन औलिया का मकबरा ठगों के लिए एक तीर्थस्थान था। दूसरी बात, दरवेश निजामुद्दीन उस समय धन-दौलत में दूसरे सुलतान थे। लोगों का कहना है कि वे 'गैबी खजाने' का पता रखते थे। ठगों का कहना है कि वे जबानी में ठग रहे थे।

लगता है कि ये सारे के सारे अनुमान हैं। क्योंकि ठगों के अनुसार, जिसे लेकर कोई तीर्थ बना हो, उसी तीर्थपति को ठग मान लेना दलील के तौर पर कतई जायज नहीं। ऐसा करने से सिर्फ निजामुद्दीन ही नहीं, भारत के कई आदर के पात्रों को इस कमीने पेशे के साथ जोड़ना पड़ता है। चूंकि यह अनुमान सिद्ध नहीं हुआ है, इसलिए अनुचित है। दूसरी यह बात कि भारत में सदा से साधु-संन्यासियों की संख्या थी लगभग बारह लाख, और मुसलमान (फकीरों) दरवेशों की संख्या आठ लाख। हिन्दुस्तान के धर्मप्राण निवासी इनको अपने दान-खैरात से जिन्दा रखते थे।

इसलिए हालांकि निजामुद्दीन और ठगों में रिश्ता जोड़ने की कोशिश किसी-किसी अंग्रेज इतिहासकार ने अवश्य की है, लेकिन इसमें कोई तत्व नहीं है। बल्कि 'दादाधीरा' और 'झोरा नायक' के साथ इनके योग-सूत्र की बात काफी कुछ विश्वसनीय है।

ठगों से बातचीत के दौरान यह मालूम हो सका था कि मुरसुते उपजाति के नायक दादाधीरा उनके अन्यतम आराध्य थे। वे कहते थे कि धीरा उनके नायक थे। विशेष अनुष्ठानों में वे उनकी आत्मा को अपने बीच बुलाते थे, और मदिरा पीकर उनसे शक्ति की भीख मांगते थे।

झोरा नायक भी उनके लिए जनप्रिय आदर्श था। वह था मुलतानी ठगों का नेता। उसकी आदर्श निष्ठा की चर्चा ठगों में कहावतों के रूप में होती थी। कहते हैं कि झोरा एक बार केवल अपने नौकर को लेकर शिकार की खोज में निकला था। देवी जी के आशीर्वाद से पहले ही दिन उसकी 'विसा', यानी अमीर ठगों की एक टोली से मुलाकात हो गयी। फिर घोड़े की पीठ पर सामान लादे गांव लौट आया। घर पर बैठ हिसाब लगाकर देखा कि इस अकेली यात्रा में ही उसकी कमाई हो गयी है, करीब छब्बीस लाख रुपये। चाहता, तो पूरी की पूरी रकम वह रख सकता था। लेकिन आदर्श पुरुष झोरा के दिल में ऐसा पाप नहीं आया। उसने गिरोह के सभी लोगों को बुलाकर, सभी को वह रुपया बराबर हिस्से में बांट दिया। ऐसे व्यक्ति की पूजा किये बिना क्या कोई ठग रह सकता है?

इनकी बात दीगर है। अलाउद्दीन के बाद मुसलिम भारत में ठगों का अगला उल्लेख मिलता है सम्राट अकबर के राज्यकाल में (१५५६-१६०५) उस बार पकड़े गये थे पांच सौ ठग, और कहा जाता है कि सभी इटावा जिले के थे।

खैर, राजधानी से भगाये गये ठग विभिन्न गिरोहों में बंट कर उस मुलतानी जमाने में चारों ओर फैल गये थे। कई सौ साल के बाद उनको खदेड़ कर एक जगह बटोरते हुए कम्पनी के कर्मचारियों ने आश्चर्य से खोज की थी कि उनके आदि गोत्र कुल जमा सात थे—(१) बाहलीन, (२) भिन, (३) मुजसोत, (४) काबुनी, (५) हुलार, (६) गानू और (७) तुंदिल। भारत के विभिन्न इलाकों में विभिन्न वर्ग के कितने ठग थे, उनका आदि स्रोत इन्हीं सात परिवारों में था।

दिल्ली के बाद इनमें से पांच परिवारों ने आगरा में डेरा जमाया—घर बसाया। दूसरे इलाकों के ठगों के पास इनका नाम है—अगौरिया। कोई शक नहीं कि बाद के युग में अवध के किसी गांव से ठग चुनकर निकालने में सारा गांव ही उजड़ने लग गया था। स्लीमैन ने लिखा है : अवध का जनपद कुल जमा चौदह सौ छः मील था। उसके हर मील पर उस समय ठग थे। केवल पथ ही के किनारे-किनारे उनके 'बिल' या कब्र थे छः सौ चौहत्तर।

एक दल चला गया दक्खिन—आर्काट। ये ही सबसे पुराने घराने के थे। दूसरे दलों के साथ पोशाक और चाल-चलन में उन लोगों का काफी फर्क है। आर्काट के ठग आमतौर पर धारीदार लुंगी पहनते थे और कम्पनी के सिपाहियों की तरह छोटा जैकेट। बाबूगीरी के प्रतीक के तौर पर उनमें से हरेक के हाथ में बेंत की एक छड़ी होती थी।

रास्ते पर जब वे शिकार की खोज पर उतरते थे, तो हर दलपति के साथ उसका निजी बावर्ची, हुक्काबरदार और तरह-तरह के अनगिनत नौकर-चाकर होते थे। वे सिर्फ अपने हाथों से रुमाल का प्रयोग करते थे। बाकी सारा काम तनख्वाह पर पले नौकरों के जिम्मे था। वे ही तम्बू गाड़ते थे, रसोई पकाते थे, गाय-घोड़े की देख-भाल करते थे, माल-असबाब ढोते थे। लेकिन ऐसी-ऐसी रईसी के बावजूद उत्तर भारत के ठगों के निकट आर्काटियों की कोई मर्यादा नहीं थी। हिन्दुस्तानी ठग कहते थे, कि "वे दरअसल बड़े नीची जाति के हैं। उनके घर हम अपनी बेटी नहीं ब्याह सकते।"

सातवां गुट-मुलतानी। उनकी विशेषता यह थी कि वे कहीं भी स्थायी रूप से वास नहीं करते थे। बीवी-बच्चे, नाते-रिश्तेदार समेत सारा कुनबा बैलगाड़ी पर लाद कर सड़कों पर ही घूमता रहता था। जी में आ गया, तो कहीं पर एक गांव ही बसा देते थे। ऐसे सौ परिवार एक बार हिंगोली में बस गये थे।

लेकिन वह नियम नहीं, व्यतिक्रम था। मुलतानियों में नियम था—आज यहां, तो कल वहां। शेर के पीछे जैसे लकड़बग्घे चलते हैं, इनके पीछे-पीछे चलते थे बिंजारी। मुलतानी उतने धर्मप्राण नहीं होते थे। मौका पाते ही वे नारी-हत्या तो करते ही थे, बच्चे चुराने में भी उन्हें खास दिलचस्पी होती थी क्योंकि कहते थे कि वे उस समय का बाजार नजर में रखकर इस सिद्धांत पर पहुंचे थे कि सोने-चांदी से इनकी कदर ज्यादा थी। खास तौर पर अगर वह बच्ची हो, तो बिंजारी नजदीक ही थे। नकद दाम चुकाकर चुराये बच्चे को

पु न र्यौ व न



शक्ति का आदिस्रोत
हिमालय निःसृत शिलाजीत

प्राचीन काल में ऋषि-मुनियों की खोज। दुर्गम हिमालय की कन्दराओं में छिपा-बिखरा दुर्लभ शिलाजीत। आधुनिक औषधि विज्ञान की कसौटी पर खरा—शीलाजीत। मानव मात्र के लिए सुदीर्घ, स्वस्थ और सक्रिय जीवन की कुंजी।

शिलाजीत का असर इतना ज़ोरदार कि बुढ़ापा देर से आये; देह तंतुओं का क्षय घटाये; नस-नस में नयी ताकत जगाये; पेशियां मज़बूत बनाये।

शिलाजीत—अनगिनत वैज्ञानिकों द्वारा जांचा-परखा गया। रूसी फार्माकोपिया में इसे ही ''माइमिउ'' कहा गया।

डाबर शिलाजीत—प्राचीन आविष्कार और आधुनिक शोध का अपूर्व संगम। इसके हर कैप्सूल में विशुद्ध शिलाजीत की सारी खूबियां प्राकृतिक रूप में विद्यमान।

डाबर शिलाजीत स्वयं आजमायें,
जो आपके तन-मन में जगाये नयी शक्ति,
नयी स्फूर्ति।

डाबर शिलाजीत—उत्कृष्टतम आयुर्वेदिक औषधि : डाबर के 107 सालों के लगातार शोध और अनुभव का सफल परिणाम्।



Dabur
शिलाजीत
हिमालय शिलानिःसृत
पुनर्यौवन शक्ति

Dabur इंडिया लिमिटेड हर्षा भवन ब्लॉक ई कनाट प्लेस नई दिल्ली 110001

Response 22009

गोद ले लेंगे। दिल्ली, आगरा, लखनऊ, हैदराबाद, पूना, लाहौर—हर नगरी की विलासपुरी में इनका बाजार था।

इन्हीं सब कारणों से मुलतानियों की एक शाखा ने बुद्धिमानी से अपने को 'ठग' से पूरे तौर पर 'मेखफंसा' बनने में आपत्ति का कोई कारण नहीं देखा था। मेखफंसाओं का प्रतिष्ठाता खोरा नायक शुरू में मुलतानी ठग ही था।

इन चंद सम्प्रदायों के अलावा उनके कुछ स्थानीय घराने भी थे। उनमें से खास तौर से उल्लेख योग्य है मालव और राजपूताने का 'मुसिया सम्प्रदाय', अवध का 'जुमालदेही' सम्प्रदाय और आदि मुलतानी 'चिगुरिया'।

राजपूताने के मुसियाओं की पदवियां थीं—नायक, घोरी आदि। आर्कटिओं की तरह उनमें भी बुबुयानी की कदर थी। दलपति कीमती पालकी पर बैठ कर, प्रतिष्ठाली व्यापारी के रूप में 'व्यापार' करने निकलते थे। कभी-कभी वे तत्कालीन रुपया-बेहाराओं जैसी पोशाक भी पहनते थे।

ये बेहारा उन दिनों भारतीय-व्यापार जगत में एक खास सम्प्रदाय थे। भूमिपथ पर उन दिनों रेल नहीं थे। बहुत सारे इलाकों में अच्छी सड़कें तक नहीं थीं। नियमित योग-सूत्र के अलावा दूर-दूर की कोठियों के साथ व्यापार करना संभव नहीं था। सूरत और बम्बई के व्यापारियों के मददगार उन दिनों अकेले ये बेहारा थे। सैकड़ों मील पैदल चलकर एक इलाके का सामान दूसरे इलाके के महाजन की गद्दी तक पहुंचा देते थे, और वहां से कमर में रुपया खोंस कर फिर वे अपनी गद्दियों पर लौट जाते थे। बम्बई से जयपुर, सूरत से इंदौर—उनके पैरों के सहारे वाणिज्य का रथ चलता था। ईमानदारी और वफादारी में वे अब भी पश्चिम भारत में कहावत के रूप में मशहूर हैं।

'मुसिया' लोग जिस तरह इन बेहराओं का भेष बना लेते थे, अवध के 'जुमालदेही' भी मुसियाओं की तरह व्यापारियों की सज-धज में निकल पड़ते थे। हर दल के साथ चार-पांच बावर्ची भी रहते थे। सिर पर पगड़ी, बदन पर फूलकढ़ा कुरता, हाथों में बनारसी तमाकू का हुक्का। देखकर मुलतानी कहते थे—वाह रे इनकी तड़क-भड़क। मानो बादशाह सलामत शिकार पर निकले हैं।

स्लीमैन से एक बिजारी ने कहा था, "उनको देख कर हमें तकलीफ होती है। दादा रे दादा—सिर पर इतनी लम्बी पगड़ी, मानो ठग नहीं, मजदूर हों।"

लेकिन चाल-ढाल और बरताव में उन्नीस-बीस होने पर भी विशाल भारत की अन्तः प्रकृति की ही तरह उनकी इन आवारा बेघर-बार, बेपरवाह संतानों के वैचित्र्य जीवन के अन्तराल में एक अटूट ऐक्य सूत्र था। हिन्दू हो, मुसलमान हो, 'चिगुरिया' हो, चाहे 'जुमालदेही' हो—वे सभी ठग थे।

स्लीमैन और उनके सहचरों ने हिसाब लगाकर देखा था—अवध के ठगों में दस में से नौ जन्म से मुसलमान थे और एक हिन्दू। दोआब में हिन्दू बहुमत में थे। वहां मुसलमानों की संख्या पांच में एक के अनुपात में थी। नर्मदा के दक्षिण में फिर मुसलमानों का बहुमत था। संख्या में चार में तीन अनुपात में थे। राजपूताना में इनकी संख्या कम थी—चार में एक के अनुपात के बराबर थी। बंगाल, बिहार, उड़ीसा और बम्बई में दोनों सम्प्रदायों का अनुपात बराबर था।

लेकिन यह भी फालतू बात है। धर्म से वे किसी भी सम्प्रदाय के क्यों न हों—वे ठग थे। कहीं उनका नाम था। 'फांसुड़े', तो कहीं 'फांसीगीर', कहीं 'आरितुलकर', तो कहीं 'तन्ताकालेद'। लेकिन किसी भी नाम से वे लोगों में परिचित हों—वे ठग थे। उनका हथियार एक था, भाषा एक थी, जीवन एक था, पेशा एक था और धर्म भी एक ही था।

ठग धर्म एक अजीब किस्म का समन्वयवाद था। ऐसा करिश्मा इतिहास में अज्ञात नहीं, जहां दो विपरीत, अपरिचित और दूर देश के धर्मों में परस्पर की निकटता, संघर्ष और सम्पर्क के कारण किसी विस्मयकारी तीसरी भावना को जन्म दिया है। भारत के लौकिक इतिहास में भी इसकी कुछ मिसालें हैं। लेकिन हिन्दू-मुसलमान की युग्म साधना ने ठगों में जैसा अन्तरंग रूप ले लिया था, वैसा शायद कहीं और संभव नहीं हुआ।

इतिहासकार कुछ भी कहें, हजार-हजार ठगों ने अदालत में खड़े होकर गर्व से ऐलान किया था कि वे 'मां भवानी' और 'कालीमाई' की संतान थे। उनका शौर्य तीर्थ बंगाल का कालीघाट था। कालीघाट के बाद उनका दूसरा तीर्थ था—विंध्याचल की भवानी का मंदिर।

दूसरा मंदिर मिर्जापुर से चंद मील पश्चिम में है। कहा जाता है कि वर्षा के अंत में रास्ते का काम खत्म कर दक्षिण के सारे ठग वहां एकत्र होते थे। यह सुनकर ही फेनी पार्कास १८४४ ई० में वहां मंदिर देखने गयी थी। छोटा-सा मंदिर। मिसेज पार्कास ने लिखा है: 'मूर्ति काले पत्थर की बनी है। विशाल आंखें। आंखों का सफेद हिस्सा चांदी के वर्क से ढंका हुआ। ...सिर पर जूही की कई मालाएं लटक रही हैं। वे केशों का रूप लिए हुए हैं। ...कुल मिलाकर चार फुट ऊंची मूर्ति है। ...जाहिर है कि कुदरती तौर पर मुझे ठग याद आ रहे थे। लेकिन मुंह से कहने की हिम्मत नहीं पड़ी। पानी में रहकर मगर से बैर मोल लेना अक्लमंदी नहीं।' फेनी ने अपनी पुस्तक में मंदिर और मूर्ति, दोनों ही के दो चित्र दिये हैं।

लेकिन विंध्याचल की भवानी के मंदिर से भी ठगों के लिए अधिक आकर्षक था कलकत्ते का कालीघाट। वे कहते थे कि उन्हीं के आशीर्वाद से, उन्हीं के आसरे वे इस रहस्यमय जीवन के पथिक हैं—अंधेरे के राही। कालीघाट की जननी ने उनके हाथों में फांसी दे दी है, तभी वे फांसीगीर हैं—ठग हैं।

किस प्रकार उन जैसे अभागों के सिर पर भवानी का आशीर्वाद बरसा, वह कहानी भी हर ठग को रटी हुई थी:

उन दिनों संसार में महादानव रक्तबीज का आविर्भाव हुआ था। उसके उपद्रव से सारा संसार बेहाल था, सृष्टि नष्ट हो जाने के रास्ते पर थी। जगदम्बा काली जी उससे लड़ने के लिए उतरीं। लेकिन रक्तबीज के सामने वे भी लाचार हो गयीं, क्योंकि रक्तबीज के खून के हर बूंद से फिर तत्काल एक महाबली राक्षस का जन्म हो जाता था। थकी-मांदी, त्रस्त-पस्त और झुंझलाई भवानी चिन्तित हो उठीं। उसी क्षण उनकी देह से निकलते पसीने से दो अनुचरों का आविर्भाव हुआ। वे मनुष्य थे। भवानी ने अपने हाथ का रुमाल उनके हाथों में देकर कहा, "बेटे, यही तुम्हारा हथियार है। तुम लोग दुश्मनों का सफाया शुरू कर दो।" उन लोगों ने उस पीले कपड़े में दो फंदे बनाये। फिर मां को प्रणाम कर, वे लड़ाई के मैदान में उतरे। देखते ही देखते रक्तबीज का आखिरी वंशज भी धरती चूमने लगा।

ठगों का कहना है कि लड़ाई के अन्त में दोनों भक्त मां को फिर उनका रुमाल लौटाने गये थे। लेकिन भवानी ने कहा, "नहीं बेटे, यह हथियार मुझे अब नहीं चाहिए। रुमाल मैंने तुम्हीं लोगों को दे दिया। जो लोग धर्म के विपरीत हैं, जो लोग दुश्मनों के जाये हुए हैं, इसकी सहायता से तुम लोग उनका विनाश करोगे और संसार को साफ-सुथरा रखोगे।"

ठग और भी कहते हैं, "कलियुग की शुरुआत तक मां भवानी हर हत्याकांड के समय उनके साथ-साथ रहती थीं। ओट में रह कर स्वयं उनके कार्य में सहायता करती थीं। उस समय कब्र की जरूरत नहीं पड़ती थी। फांसी लगाकर ही उनका काम खत्म हो जाता था, लाश का जिम्मा मां पर था।

लेकिन एक दिन एक बेवकूफ ठग ने खून के अन्त में पीछे पलटकर देखने में जो गड़बड़ी की, उसी से ठगों के जीवन में सर्वनाश आ गया। भवानी उस समय खून किये हुए शव का नैवेद्य ले रही थीं। ऐसे ही समय अप्रत्याशित ढंग से भक्त से आंखें मिल जाने से देवी उस पर क्रुद्ध हो उठीं। क्रोधित देवी प्रसाद छोड़ कर उठ खड़ी हुईं और बोलीं, "अब से मुर्दों का जिम्मा भी तुम्हीं लोगों पर है।"

ठग उनके पैरों को पकड़कर रोने-धोने लग गये। देवी का क्रोध शांत हुआ। वे फिर प्रसन्न हो गयीं। अपना एक दांत निकाल कर उनके हाथों में देते हुए कहा, "यह रहा तुम लोगों का फावड़ा। सोच मत करो।" फिर सोने की एक पसली निकाल कर कहा, "यह रही तुम लोगों की छुरी। फावड़े से कब्र खोदो, छुरी से काटकर लाश को कब्र में गाड़ो। कोई चिन्ता नहीं रहेगी।"

तभी से रुमाल की तरह फावड़ा, छुरी भी आशीर्वाद-पूत हथियार है। तभी से ठग भवानी के नाम पर पागल हैं।

कौतूहली अंग्रेज ने जानना चाहा—"साहब खां, क्या तुम मुसलमान हो?"

"जी हुजूर। हम दक्खिनवाले ज्यादातर ठग मुसलमान ही हैं।"

"तुम लोगों की देवी कौन है ?"

"जी, मां भवानी। माई काली।"

"तुम लोगों में क्या मुसलमानी ढंग से ही शादी ब्याह, खान-पान होता है ?"

"जी।"

"तुम्हारे पाक शरीयत में क्या कोई भवानी नाम से है ?"

"नहीं।"

"तो तुम लोग उनकी पूजा क्यों करते हो ?"

"वाह! वह तो हमारी देवी है ?"

नासिर जमादार से पूछा गया। एक ही जवाब।

अब दूसरे सवाल। अफसर ने जानना चाहा, "मान लिया कि देवी ने आदेश दिया है। लेकिन तुम लोग भूत-प्रेत में तो विश्वास करते होगे ? मुर्दों की आत्माएं क्या तुम्हारा पीछा नहीं करतीं ?"

"नहीं," जवाब दिया नासिर ने, "वे हम से नहीं भिड़ते।"

"लेकिन दूसरे आदमी जब खून करते हैं, तब ?"

"तब बेशक प्रेत उनको पकड़कर उन्हें सताते हैं," नासिर ने आकिल की



ठग ऐसे भी लापता करते थे अपने शिकार को

तरह बताया, "कभी-कभी एक साथ पचास आत्माएं आकर उन पर हमला कर देती हैं और तब कातिल उनके सताने से पागल तक हो जाते हैं।"

"तुम लोग क्यों नहीं होते ?"

"हम लोग क्यों हों ? हम लोग क्या देवी के हुक्म के बिना कभी खून करते हैं ? देवी जिन्हें भेज देती है, हम लोग क्या उनके सिवा किसी और की जान कभी लेते हैं ?"

कल्याण सिंह ने भी सहमति प्रकट की। बोला, "देवी अगर साथ रहती हैं, तभी भूत-प्रेत हमारे नजदीक नहीं फटकते, हुजूर।"

दुर्गा ने कहा, "इसके अलावा प्रेत बनते कौन हैं ? जो लोग नरक जाते हैं। देवी के निर्देश से हम जिनकी हत्या करते हैं, वे सब फौरन स्वर्ग चले जाते हैं। हमें सताने के लिए उन्हें फुर्सत कहां ?"

सभी की जबान पर एक ही बात, "देवी ! देवी ! देवी !"

लिहाजा 'जय भवानी' का यह मंत्र लेकर भारत भर में हिन्दू-मुसलमान की विस्मयकारी सम्मिलित एक साधना शुरू हो गयी—खून, खून, खून। राजस्थान के रेगिस्तानी इलाकों में, पंजाब में, सिंधु नदी के तट पर, उत्तर में गंगा-जमुना का विशाल प्रान्तर घेर कर, दक्षिण में नर्मदा-गोदावरी की घाटी भर में—सारे भारत के पथ-पथ पर खामोशी से डग भरते हुए हजारों खूनी घूमने लगे, और घूमते रहे—सालों, सदियों। उनके काले-काले दुबले हाथों में पुरखों के खून के तजरबे थे, उनके शांत नयनों के अन्तराल में सैकड़ों वर्षों की सफलता का इतिहास था।

कम्पनी की हुकूमत में वह इतिहास क्रमशः अधिकाधिक कलंकित होता रहा, क्योंकि बहुत दिनों के बाद भारत फिर से स्वाभाविक बनता जा रहा था। रजवाड़ों की आजादी बेशक छिनी जा रही थी, लेकिन राह-रास्तों पर प्रजा की आजादी बढ़ गयी थी। नायक-शून्य स्वेच्छाचारी उस सेना की मनमाना लूट-पाट दिन ब दिन असहनीय होती जा रही थी। हर ओर कम्पनी का शासन फैल रहा था।

इसके अलावा फौज की आवाजाही से सड़कों में भी काफी तरक्की हुई थी। आदमी अब सड़क से डरता नहीं था। व्यापारी घोड़ों की पीठ पर माल लादे वाणिज्य करने निकलते थे, सुदूर दक्षिण से तीर्थयात्रियों की मंडली उत्तर आती थी, कम्पनी के दरबार में नौकरी की खोज में गांव के गरीब टोली बनाकर शहर आते थे। सड़कों पर अब काफी लोग रहते थे। जाहिर है कि बहुत सारे ठग भी रहते थे। कम्पनी की मशाल की रोशनी उन दिनों उन्हें अंधियारे में रहने को मजबूर करती थी। रोशनी के आकर्षण से घर से निकले लोग अपनी अनजाने राह के किनारे गड़े हुए तम्बुओं की ओर जाते। पेड़ तले बिछी चटाइयों पर बैठते तमाकू पीते। दिन की थकान तमाकू के धुएं के साथ उड़नछू हो जाती। सांझ मनोरम बनती जाती। अचानक भूखे सांप की तरह खामोश उनकी गर्दनों पर जालिम मौत टूट पड़ती। हर सांझ को सैकड़ों वृक्षों के नीचे भवानी का आदेश उच्चारित होता, मौत का संदेश—'तमाकू लाओ।'

हालांकि ताज्जुब की बात है कि भारत को तब भी इस बात का पता नहीं था। उसके निश्चिन्त उदासीन बेलौस चेहरे की ओर देखने से ऐसी घटना की कल्पना नहीं की जा सकती थी।

एक आदमी ने इस पर विचार किया था।

वे एक ठग थे—फिरंगी ठग। भारत के इतिहास में उनका नाम है विलियम हेनरी स्लीमैन। समसामयिक योरोपियन उन्हें पुकारते थे 'ठग स्लीमैन' कहकर।

सदियों के अन्त में भारत के विभिन्न राज्यों के भवानी-शिष्य जिस समय अनगिनत प्राणों की भेंट लिये, भक्ति से विनम्र चित्त लिये, सैकड़ों मील पैदल चलते हुए कालीघाट की यात्रा कर रहे थे, उस समय चितपुर रोड के निकट लालदीघि के दक्षिण तट पर फोर्ट विलियम कालेज के एक निर्जन कक्ष में एक उन्नीस वर्षीय अंग्रेज नौजवान एक भ्रमण-कथा पुस्तक में रमा बैठा था।

सिर्फ चंद महीना पहले वे देश की धरती पर पधारे थे। लेकिन इस देश के बारे में बचपन से ही उनकी गहरी दिलचस्पी थी। क्योंकि कार्नवाल के जिस परिवार में उनका जन्म हुआ था, इंग्लैंड के एक सैनिक परिवार के रूप में वह सदा से सुपरिचित रहा था।

पिता कैप्टन फिलिप स्लीमैन सैनिक थे। आठ भाइयों में तीन नौसेना में थे और एक भूसेना में। पांचवें पुत्र विलियम ने बचपन में ही मन ही मन तय कर लिया था कि वे भी सैनिक बनेंगे और अन्य कहीं नहीं, अपना सैनिक जीवन वे सपनों के देश हिन्दुस्तान की धरती पर बिताएंगे। यह सपना उन दिनों किसी भी उच्चाभिलाषी तरुण के लिए कुछ भी अस्वाभाविक नहीं था।

सिर्फ दस वर्ष पहले श्रीरंगपत्तम का युद्ध हुआ था। कम्पनी का शासन तब स्थायी राज्य का रूप लेने लगा था। धन-दौलत, रोमांच—हिन्दुस्तान उस समय अभियात्री के लिए स्वर्ग-राज्य ही था। इस देश के नाम पर हर अंग्रेज नौजवान उन दिनों दीवाना था। फिर भी एक फिलिप-पुत्र विलियम की बात खास तौर से इसलिए करनी पड़ रही है कि दूसरों से उसके स्वप्न में कुछ फर्क था। यह बालक 'पैगोडाट्री' नामक रुपये के दरख्त के ख्वाब में ही मशगूर नहीं था, इतिहास के अनुरागी छात्र के तौर पर अनदेखी भारत की धरती से भी वह मन ही मन मुहब्बत करने लगा था।

कलकत्ते में पैर धरने के बाद ही उसके मुंह से धड़ाधड़ हिन्दुस्तानी भाषा सुनकर, फोर्ट विलियम के बूढ़े कर्नल उसका मुंह ताकते रह गये। फिर जरा हिल-डुल कर बैठते हुए, वह पूछ बैठे थे, "कौन औट हीयर ?"

"जी सर !" कार्नवाल के खालिस अंग्रेज विलियम ने सगर्व उत्तर दिया था।...

इस बीच वे बारासत का प्रशिक्षण खत्म कर १५ नम्बर नेटिव इनफैन्ट्री के

सैनिक के रूप में युद्धक्षेत्र से लौट आए थे। अवध-नेपाल और उत्तरी भारत का काफी इलाका इस बीच वे देख चुके थे। रास्ते में हिन्दुस्तानी भाषा के साथ उर्दू, फारसी, पोस्तु और गुरखाली आदि कई भाषाएं भी उन्होंने सीख ली थीं। अचानक हुक्म आया कि बैरकपुर लौटना है। विलियम के लिए बैरकपुर से अधिक आकर्षक थी नेपाल की सरहद। फिर भी कम्पनी का हुक्म था। मन ही मन उन्होंने निश्चय किया, कि अगर जाना ही पड़ा, तो इस बार काम में वक्त लगाएंगे।

यही तमन्ना लेकर बैरकपुर से कभी वह लालदीघि के किनारे फोर्ट विलियम कालेज की लायब्रेरी में आए थे। वहां दो दिन आने-जाने के बाद ही बड़े कर्नल ने खुद आकर, पन्द्रह महीने के लिए लैंग्वेज-क्लास में उन्हें भर्ती करा दिया था। विलियम वहां अरबी और फारसी भाषा सीखने लगे। मौका मिलते ही पन्ना उलटते-उलटते एक ऐसी जगह पर आकर आंखें टिक गयीं कि उससे आगे बढ़ना नामुमकिन हो गया। कौन हैं ये ? कहां रहते हैं ये ? तो ऐसे विचित्र पेशेवाले लोग अब भी इस देश में मौजूद हैं ? सवाल पर सवाल आकर उन्हें घेरे ले रहे थे। स्लीमैन फिर से पहली पंक्ति पर लौट गये।

भ्रमण-कथा के लेखक थे एम० थिवेनाट नामक एक फ्रांसीसी पर्यटक। सत्रहवीं सदी में वे भारत आये थे। इस पुस्तक में उस समय के भारत का आंखों देखा विवरण था।

कालीघाट का तीर्थ कर, संतुष्ट ठग जब हल्के दिल लेकर, चितपुर की सड़क पर टोलियों में अपने-अपने घर लौट रहे थे, लालदीघि के एक कोने में हाथ से खींचनेवाले पंखे के नीचे बैठा, नौजवान स्लीमैन आश्चर्यचकित आंखों से पढ़ता जा रहा था :

'दिल्ली और आगरे के बीच की जिस सड़क की चर्चा कर रहा हूं, जनपथ के रूप में वह कोई बुरी नहीं। लेकिन वहां शेर, सांप और डाकू हैं। खास तौर पर किसी अजनबी राहगीर के लिए रास्ते में किसी के नजदीक जाना खतरे से खाली नहीं है। क्योंकि संसार के सबसे चालाक डाकुओं का कार्य क्षेत्र यही है। संसार में ऐसे कुशल और शातिर कातिल नहीं मिलेंगे। मुसाफिर पहुंच के अंदर आते ही, वे एक फांसी चला देते हैं। उनका निशाना गजब का होता है। फांसी सीधे जाकर गले में पड़ता है। साथ ही दूसरा सिर पकड़कर वे बटोही को धरती पर गिरा देते हैं। आंख झपकते ही सब कुछ खत्म।

'कभी-कभी शिकार को वे एक-दूसरे अनोखे ढंग से धोखा देते हैं। चलते-चलते बटोही देखेगा कि रास्ते के किनारे खड़ी एक सुंदर रमणी रो रही है। बीहड़ जंगल के सुनसान रास्ते पर अकेली बेबस नारी को देखकर कौन है, जो ठिठक कर खड़ा न हो जायेगा ? जाहिर है, कि पथिक उसकी तरफ जायेगा। वह रमणी रोती-घिघियाती अपनी दुखभरी दास्तान सुनाएगी। हमदर्दी से बटोही की आंखें भी नम हो जाएंगी। अब वह पूरी कहानी सुनना चाहेगा। धीरे-धीरे दोनों में सामयिक घनिष्ठता हो जाएगी। रमणी के अनुरोध पर बटोही उसे अगले गंज या शहर तक पहुंचा देने को तैयार हो जाएगा। साथिन को पीछे बिठाकर वह फिर घोड़े पर सवार हो जाएगा। चंद मिनटों में ही हसीना अपनी असली सूरत अख्तियार कर लेगी। कमर से खामोशी से फांसी निकाल कर अपने उपकारी के गले में पहना देगी। उसके संगी-साथी भी नजदीक होंगे। वे दौड़कर बाकी काम तमाम कर देंगे।...'

जितनी बार स्लीमैन इसे पढ़ते, उतनी बार उनके दिमाग में सवाल कौंध जाता—अब भी क्या ये मौजूद हैं—ये अजनबी कातिल ? कलकत्ते में, बैरकपुर में, बारासात में, बेगम जानसन की बैठक में, सिपाहियों की बैरक में, शहर के सीवान के हाटों में जो भी बुजुर्ग मिल जाता, उसी से स्लीमैन पूछ बैठते, "क्या आज भी इस देश में थिवेनट के जमाने के वे डाकू जिंदा हैं—सत्रहवीं सदी के वे कातिल ?"

लेकिन वे बावरे जैसे नाहक ही भटकते फिरते थे। स्लीमैन के इस सवाल का जवाब किसी को भी मालूम नहीं था। न तो कम्पनी के पुराने अफसर जानते हैं और न बैरकपुर के हिन्दुस्तानी बाशिन्दे।...

कई साल के बाद इस सवाल का जवाब उनको खुद फोर्ट विलियम कालेज की लायब्रेरी में मिल गया था—इस बार भी पुराने कागजों के ढेर में पड़ी एक बेजान पांडुलिपि से।

कलकत्ते में उतरने (१८०६) के आठ साल बाद की बात है। सैनिक के रूप में तारा—मिर्जापुर, दिनापुर, गोरखपुर, विभिन्न जगहों में घूमते हुए सगौर व गुरखा युद्ध (१८१४-१६) से निबटकर स्लीमैन उन दिनों इलाहाबाद में थे। उन दिनों के अस्थिर भारत में कम्पनी के आदमियों को कोई विशेष आराम नहीं था। आज यहां, तो कल वहां।

स्लीमैन भी उस समय व्यस्त पथिक थे। वे थे दिलेर सिपाही, लेकिन राह-रास्ते जहां कहीं अनजान लोगों की भीड़ उन्हें दिख जाती, बस वहीं वह गौर से देखने लगते। कर्नल पूछते, "हिन्दुस्तानियों के इस काफिले में देखने लायक क्या मिल गया तुमको ?"

पकड़े जाने से लज्जित होकर स्लीमैन सिर झुका कर जवाब देते, "पार्डन मी, सर। मैं थिवेनट के देखे हुए कातिलों को ढूंढ रहा था।"

बहुत ढूंढा उन्होंने। कभी गांव-रास्ते पेड़ तले बैठे लोगों के चेहरे पर, कभी गेहूं के खेतों में टोलियों में जो लोग काम कर रहे होते, उनकी बांहों में, कभी फेरीघाट की भीड़ में, हुक्के के धुएं में, हाट से लौटती जनता की मंडली में, हसीनाओं की आंखों में। लेकिन वे कहीं भी नहीं मिले।

अन्त में इलाहाबाद। सैकड़ों मील लम्बे रास्ते पर, सैकड़ों गांव-गंज में जो नहीं मिला, अन्त में इलाहाबाद की पुरानी कचहरी कोठी की एक आलमारी ने वही जवाब उनके हाथों में दे दिया—थिवेनट से अधिक ताजा और प्रामाणिक विवरण।

स्थानीय कलेक्टर पुराने मित्र थे। छावनी से वे सैनिक कभी-कभी उनके दफ्तर आते, और अलस तिपहरी को बातचीत में गुजार कर फिर अपनी छावनी में लौट जाते। बातों-बातों में उस दिन थिवेनट का जिक्र छिड़ गया। कलेक्टर ने कहा, "मैंने भी सुना है, इस तरह का कुछ था जरूर।"

"कहां ?" साथ ही स्लीमैन ने उनका हाथ दबाया।

"मुमकिन है कि वह किसी किताब के पन्नों में हो।" आंखें मूंदकर मित्र कलेक्टर ने कुछ देर तक सोचा। फिर कहा, "तुम उस आलमारी पर जरा उलट-पुलट कर देखो। जहां तक याद है, शायद वह किताब अभी तक यहीं पड़ी है।"

स्लीमैन फौरन काम में लग गये। कागज का पहाड़ उलटते-पुलटते वह अनमोल दौलत हाथ लग गयी। किताब नहीं, एक पांडुलिपि। लेखक डा० रिचर्ड शेरवुड। परिचय पंक्ति से पता चला कि वे मद्रास के सेंट जार्ज अस्पताल के सर्जन थे। सारी रचना दरअसल एक रिपोर्ट थी। उसकी विषय वस्तु थी—फांसीगीर या आरितुलकर या तान्नाकेलेर या बारलू बान्दुलू नामक एक अजीब खूनी सम्प्रदाय। लम्बी-चौड़ी रिपोर्ट थी। लेकिन रचनाकाल हाल का था—अभी १८१६ ई० का ही। स्लीमैन वहीं खड़े-खड़े उसे पढ़ने लगे।

डॉ० शेरवुड ने लिखा था कि १७९९ ई० में श्रीरंगपत्तम के पतन के बाद बंगलोर के पथ पर करीब एक सौ फांसीगीरों का एक गिरोह पकड़ा गया था। योरोपियों से यही उनकी पहली मुलाकात थी। उत्तर में दिल्ली और दक्षिण में त्रिवांकुर में भी एक बार और दो गिरोह पकड़े गये थे, लेकिन बंगलोरवाला गिरोह ही सबसे अधिक उल्लेखनीय है। उनको हालांकि अन्ततः सबूत के अभाव में छोड़ दिया गया था। लेकिन डॉ० शेरवुड ने उनसे कुछ तथ्य बटोर लिये थे। क्योंकि शायद कभी उनकी जरूरत पड़ जाय।

स्लीमैन हर्ष से विभोर हो उठे। उनके हाथ में वह पांडुलिपि कांपने लगी मानो टोलियों में फांसीगीरों की कतार भाग रही हो। रिपोर्ट के अंत में डॉ० शेरवुड ने भविष्य के लिए और भी कुछ संचित कर दिया था। परिशिष्ट के रूप में फांसीगीरों की भाषा के भी कुछ नमूने पेश किये गये थे।

स्लीमैन से रहा नहीं गया। रिपोर्ट को बंद करते हुए उन्होंने मित्र से कहा, "बहुत-बहुत धन्यवाद। आज के लिए यह मैं लिये जा रहा हूं। कल वापस मिलेगी।" ●

—क्रमशः

[चित्रांकन चित्रकार की कल्पना से तथा छायांकन राजस्थान पुरातत्व विभाग के सौजन्य से]

—मंदिर का बाघ—

(पृष्ठ ६० का शेष)

की चढ़ाई पर सबसे ज्यादा बोझ लेकर चढ़ना और अन्य मजदूरों का दिशा-निर्देशन करते हुए अपने लोकगीतों से हिमालय के शिखरों को गुंजायमान बनाना उसके प्रिय शौक थे। शरीर से हट्टा-कट्टा और मन से पूर्णतया जीवन्त था बालासिंह। उस दिन त्रिशूल की तलहटी में अलाव के चारों ओर बैठे मजदूरों ने बालासिंह के नेतृत्व में देर रात तक गाया-बजाया।

दूसरे दिन अचानक ही बालासिंह की तबीयत खराब हो गयी। हमेशा चहकने वाला बालासिंह उस दिन एकदम चुपचाप सबसे पीछे चल रहा था। जिम कार्बेट को दूसरे मजदूर भी बहुत ही उद्विग्न और भयभीत प्रतीत हुए।

"क्या हुआ तुम्हें?" जिम कार्बेट ने बालासिंह से पूछा।

"बताने से क्या होगा साहब?" बालासिंह हताश स्वर में बोला, "आपको विश्वास नहीं होगा।"

"मैंने तुम्हारे ऊपर कभी अविश्वास किया है?"

"नहीं।"

"तो फिर बताओ, तुम्हें अचानक यह क्या हो गया है?"

"आप नहीं मानते तो सुनिए। रात में जब अलाव के चारों ओर बैठे हुए हम लोग गा-बजा रहे थे, तभी त्रिशूल का दानव मेरे खुले मुंह में घुस गया। मैंने उसे बाहर निकालने की भरसक कोशिश की, पर सफल न हो सका और वह गले से फिसलकर पेट में जा पहुंचा। उस समय आग तेजी से जल रही थी। उसकी रोशनी में मेरे साथियों ने मेरी कोशिश को नाकाम होते देखा, तो उन्होंने भी जोर-जोर से चिल्लाकर और टीन-कनस्तर पीटकर दानव को मेरे अंदर से निकाल भगाने की कोशिश की, पर...," बालासिंह सिसक पड़ा, "दानव निकला नहीं।"

बालासिंह के साथी मोतीसिंह और अन्य मजदूरों ने भी उसके कथन की पुष्टि की।

"इस समय कहां है दानव?" जिम कार्बेट ने हैरान होकर पूछा।

"यहां," बालासिंह अपने पेट पर हाथ रखते हुए पूरे विश्वास से बोला, "मैं उसे चलता हुआ महसूस कर रहा हूं।"

जिम कार्बेट ने नैनीताल से डाक्टर को बुलवाया और बालासिंह के पेट की जांच करने को कहा। जैसे ही डाक्टर को पता चला कि बालासिंह के पेट में त्रिशूल का दानव घुसा हुआ है, वह उछलकर बालासिंह से दूर हट गया।

"मुझे अफसोस है, मैं इस केस में कुछ नहीं कर सकता।" जिम कार्बेट को उसका भयग्रस्त और टका-सा जवाब मिला।

अब जिम कार्बेट के पास बालासिंह को वापस उसके गांव भेजने के अलावा और कोई चारा न था। कार्बेट ने आवश्यक खर्च देकर बालासिंह को दो गांववालों के साथ रवाना कर दिया। तीन हफ्ते बाद उन दोनों आदमियों ने वापस लौटकर जिम कार्बेट को जो रिपोर्ट दी, वह और भी अधिक चौंकानेवाली थी।

उन्होंने बताया कि वे दोनों बालासिंह को लेकर लम्बी यात्रा करने के बाद रात में गांव पहुंचे थे। बालासिंह के 'बीमार' होने की खबर सुनकर उसके परिजनों और इष्ट मित्रों ने उसे घेर लिया था। उसी समय अचानक ही बालासिंह ने उन लोगों के आगे घोषणा की थी कि त्रिशूल का दानव छुटकारा पाकर वापस त्रिशूल शिखर पर लौटना चाहता है और दानव के अनुसार यह तभी संभव होगा, जब बालासिंह मर जाये। इतना कहने के तुरंत बाद बालासिंह लेटकर मर गया।

उक्त घटना को घोर अंधविश्वास कहा जा सकता था। पर चम्पावाट के बाघ के शिकार के दौरान डाक बंगले में हुए अलौकिक अनुभव और निर्जन पड़े थाक गांव से आती हुई चीखों के पीछे कौन-सी अदृश्य शक्ति थी, जिम कार्बेट अंत तक नहीं जान सके। मंदिर के बाघ का शिकार करने में मिली निरंतर असफलता के पीछे छिपे रहस्य तक भी वे पहुंच नहीं पाये।

उन दिनों पनार क्षेत्र में आदमखोर तेंदुए ने भीषण आतंक मचा रखा था। इसी तेंदुए का शिकार करने के लिए जिम कार्बेट को नियुक्त किया गया था। एक दिन जिम कार्बेट को खबर मिली कि अल्मोड़ा से दबीधुरा जानेवाली सड़क के किनारे तेंदुए ने एक आदमी को मार डाला था।

जिम कार्बेट तुरंत दबीधुरा जा पहुंचे। दबीधुरा नैनीताल से लोहारघाट जानेवाली संकरी सड़क पर स्थित था। वहां एक सुंदर मंदिर, जो आस-पास के लोगों के लिए तीर्थस्थान का महत्व रखता था। मंदिर के पुजारी से जिम कार्बेट को पता चला कि उन्हें गलत खबर दी गयी थी। तेंदुए ने रात के अंधेरे में मंदिर के चबूतरे पर सोये हुए उस चरवाहे को अपना शिकार बनाने की कोशिश तो की थी, पर चरवाहा पास जल रहे अलाव की जलती लकड़ी खींचकर अपनी रक्षा करने में सफल हो गया था।

जब शाम होने पर वह बूढ़ा पुजारी उठने को उद्यत हुआ, तो जिम कार्बेट ने पूछा कि क्या वह यहां पर कुछ ऐसे जीवों का शिकार कर सकते हैं, जिनसे उनके आदमियों के लिए मांस की व्यवस्था हो सके।

"हां, मंदिर का बाघ है।" पुजारी ने उत्तर दिया।

"मैं आपका बाघ नहीं मारना चाहता।" जिम कार्बेट के मुंह से निकला ही था कि पुजारी हंसकर बोला, "यदि आप मंदिर के बाघ को मारने की कोशिश करते भी हैं, तो मुझे कोई एतराज न होगा। परंतु उसका शिकार करने में कोई भी कभी सफल न हो पायेगा, न आप, न कोई और।"

आगे चलकर पुजारी का यह कथन अक्षरशः सच साबित हुआ। जिम कार्बेट कुछ दिनों के लिए पनार के आदमखोर तेंदुए को भूलकर इस बाघ का शिकार करने में जुट गये। बाघ अनेक बार उनके सामने आया, अनेक बार उन्होंने उस पर फायर झोंके, पर गोलियां उसे कभी छू कर भी न निकलीं। जिम कार्बेट जैसे सिद्धहस्त शिकारी और अचूक निशानेबाज के लिए यह सर्वथा नया और चिरस्मरणीय अनुभव था।

अगले दिन कार्बेट को पता चला कि उस बाघ ने एक दुधारू गाय को मार डाला था। कार्बेट तुरंत ही घटनास्थल पर जा पहुंचे। मृत गाय के स्वामी ने बताया कि उसने वहां अपने पन्द्रह पशु बांध रखे थे। रात में बाघ ने वहां पहुंचकर उनमें से एक गाय को मार डाला था।

मृत गाय के आस-पास बाघ के छिपने के लिए उपयुक्त कोई जगह नहीं थी। इसलिए यह निश्चित था कि वह वापस आयेगा। जिम कार्बेट ने डाकबंगले से अपनी नयी राइफल मंगवा ली।

पहाड़ी नदी के किनारे पेड़ पर अपना अड्डा जमाने से पहले कार्बेट ने गाय के मालिक को समझा दिया कि उसके घर से किसी भी तरह की आवाज नहीं आनी चाहिए, अन्यथा बाघ भाग जायेगा।

फिर धीरे-धीरे रात उतर आयी। पूरब से चांद निकलने में अभी देर थी। कार्बेट अपनी राइफल पकड़े हुए आंखों पर जोर डालकर नीचे जमीन की ओर ताक रहे थे। वह बाघ ही था, जो गाय के अस्थि-पंजर के चारों ओर घूमता हुआ गुर्रा रहा था। उसके शिकार को खानेवाले गिद्धों के प्रति उसकी गुर्राहट जारी थी। अभी कुछ ही मिनट गुजरे थे कि एकाएक शांति छा गयी। चांद निकल आया था। कार्बेट ने उसकी रोशनी में देखा, बाघ का कहीं पता नहीं था।

तभी अचानक उनकी नजर पेड़ के नीचे गयी। बाघ पेड़ की छाया में ठीक उनके नीचे खड़ा हुआ था। राइफल की नली और बाघ के सिर के बीच की दूरी कोई ज्यादा नहीं थी। कार्बेट ने उत्तेजना से सूख आये अपने होंठों को गीला किया और आहिस्ता से ट्रिगर दबा दिया। पर यह क्या? फायर तो हुआ ही नहीं। कार्बेट को लगा कि राइफल नयी होने की वजह से कारतूस मैगजीन से चैम्बर में नहीं पहुंचा। उन्होंने जैसे ही लीवर को जोर से खींचा, एक तेज खटका हुआ और बाघ छलांग लगाकर गायब हो गया।

अगले दिन सुबह जब कार्बेट आदमखोर तेंदुए की तलाश में जंगल छानकर डाकबंगले लौटे, तो वहां एक परेशानहाल व्यक्ति मौजूद था। उसने बताया कि पिछली शाम घाटी के दूसरी ओर, जहां वह अपने जानवर चरा रहा था, बाघ ने उसकी एक गाय को मार डाला था।

अपराह्न एक बजे जिम कार्बेट उस व्यक्ति के साथ उस ओर चल पड़े। साथ में उनके दो आदमी भी थे, जो मचान बनाने का सामान लिये हुए उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। जहां पर बाघ ने गाय को मारा था, वहां से गाय के घसीटे जाने के निशान और खून की बूंदें दो सौ गज दूर स्थित उस गहरे खंदक तक चली गयी थीं, जो घनी झाड़ियों से घिरा हुआ था। खंदक की तली में पानी झिलमिला रहा था। खंदक के ऊपरी किनारे पर एक पन्द्रह फुट गहरा गड्ढा था। बाघ ने अपने शिकार को इसी गड्ढे के अंदर छिपा दिया था।

बाघ के वापस लौटने से पहले ही किसी ऐसे पेड़ की तलाश जरूरी थी, जिस पर कार्बेट बैठ सकते। मृत गाय से तीस गज दूर एक बौना पेड़ था, जिसकी बैठने योग्य शाखा की जमीन से ऊंचाई मात्र छह फुट थी। उन तीनों व्यक्तियों के कड़े विरोध के बावजूद कार्बेट ने उसी पेड़ को बैठने के लिए चुना, क्योंकि अन्य कोई उपयुक्त पेड़ वहां था ही नहीं।

चार बजे कार्बेट ने उन तीनों व्यक्तियों को यह आदेश देकर वापस कर दिया कि वे उस झोपड़ी में पहुंचकर उनकी प्रतीक्षा करें, जिसके पास स्थित पेड़ पर वे पिछली रात बैठे थे। कार्बेट को विश्वास था कि बाघ के आने की खबर उन्हें सांभर, काकड़ या लंगूरों से जरूर मिल जायेगी, क्योंकि जंगल में इनकी बहुतायत थी। पर कार्बेट का अनुमान गलत निकला। बाघ उनकी तरफ से न आकर खंदक के दूसरे किनारे से होता हुआ अपने शिकार पर पहुंच गया।

कार्बेट बाघ के बाहर आने का इंतजार करने लगे। अभी पन्द्रह मिनट ही बीते थे कि कार्बेट की निगाह एक विशालकाय रीछ पर पड़ी, जो मस्ती में झूमता हुआ उधर ही चला आ रहा था। अचानक वह रीछ रुक गया। फिर खंदक की ओर मुड़ा और जमीन पर लेट गया। पल भर बाद वह उठा और सिर हिलाता हुआ हवा में सूंघने लगा। रीछ को मांस और बाघ की गंध मिल गयी थी। अगले ही पल वह जमीन से चिपककर बाघ की ओर बढ़ने लगा। हालांकि उस डरावने हिमालयी रीछ का शरीर चीतों की तरह इस काम के उपयुक्त नहीं था, फिर भी वह पूरे कौशल से सांप की तरह सरकता हुआ दो सौ गज दूर स्थित अपने लक्ष्य की ओर बढ़ा चला जा रहा था।

रीछ छाया की तरह खंदक के मुहाने पर जा पहुंचा। उसने अपने पैर पीछे की ओर सिकोड़े, फिर जोरदार चीख के साथ बाघ के ऊपर छलांग लगा दी। रीछ तो शायद कर्कश स्वर में इसलिए चीखा था कि बाघ डरकर भाग जायेगा। पर हुआ इसका उलटा। भोजन में बाधा पड़ने पर बाघ इतनी जोर से गरजा कि रीछ की चीख उसकी दहाड़ में दब गयी। फिर शुरू हुई भीषण लड़ाई।

यह लोमहर्षक युद्ध तीन या चार मिनट चला। जब बाघ को यकीन हो गया कि उसने रीछ को उसकी धृष्टता की सजा दे दी है, तो वह एक ही छलांग में कार्बेट के ठीक सामने आ पहुंचा। उसके पीछे चीखता-चिल्लाता रीछ भी दौड़ा चला आया।

कार्बेट ने अभी राइफल सीधी ही की थी कि बाघ ने उनकी ओर उछाल मारी। बीस फुट चौड़े कटाव को पार करता हुआ वह उनके पांवों पर गिरने ही वाला था कि उन्होंने फायर कर दिया। बाघ उनके पीछे स्थित पेड़ से जा टकराया। एक तेज गुर्राहट के साथ वह कुछ दूर तक लुढ़कता चला गया। फिर सन्नाटा छा गया। कार्बेट ने अपने हिसाब से बाघ की पीठ पर गोली मारी थी। गोली बाघ का हृदय छेदती निकल गयी है और वह मर गया है—ऐसा कार्बेट ने सोचा।

राइफल का जबर्दस्त धमाका भी बाघ के पीछे लगे उस पगलाये रीछ को न डरा पाया। वह बाघ की तरह छलांग लगाकर उस कटाव को न पार कर पाने की वजह से उसके अंदर कूदकर दूसरी ओर आ निकला। कार्बेट का जी तो नहीं कर रहा था कि बाघ से टक्कर लेनेवाले उस जीव की हत्या करें, पर उस पगलायी आफत को जिंदा छोड़ना मुसीबत मोल लेने के बराबर था। वह अभी उनसे कुछ फीट की दूरी पर था कि उन्होंने दुनाली राइफल की बायीं नाल उसके ऊपर खाली कर दी। गोली उसके चौड़े माथे पर लगी। बेचारा रीछ वहीं ढह गया।

कार्बेट ने सोचा था कि बाघ मर गया था। पर जब उनकी निगाह सन्न खड़े बाघ पर पड़ी, तो उनकी हैरानी का ठिकाना न रहा। उन्होंने जब तक राइफल को पुनः लोड किया, तब तक बाघ पहाड़ी पर चढ़कर उनसे चालीस गज दूर जा पहुंचा। अभी एक ही नली लोड हो पायी थी, पर अब कार्बेट के पास ज्यादा वक्त नहीं था। उन्होंने निशाना लिया और फायर कर दिया। बाघ पलटकर गिर पड़ा और लुढ़कने लगा। फिर वह उठ खड़ा हुआ और पूंछ हवा में लहराते हुए भाग निकला। गोली बाघ को न लगकर उसके मुंह से कुछ इंच दूर स्थित चट्टान पर लगी थी और उसके प्रत्यावर्तित बल ने बाघ का संतुलन बिगाड़ दिया था। कार्बेट फिर चूक गये थे।

अगले दिन उन्हें एक वनरक्षक से पता चला कि बाघ ने एक दूसरी गाय को मार डाला था। वह व्यक्ति अपने पिता के गठिया के इलाज के लिए कार्बेट द्वारा मारे गये रीछ की चर्बी लेने आया था। कार्बेट उस व्यक्ति के साथ घटनास्थल की ओर चल पड़े। डाकबंगले से दो मील दूर संकरी घाटी में बाघ ने उस गाय को मारा था।

जब कार्बेट उस व्यक्ति के साथ चलते हुए घाटी के तल पर पहुंचे, तो उन्हें एक जगह सूखी पत्तियों और टहनियों का एक बड़ा-सा ढेर दिखाई पड़ा। हालांकि मृत गाय का शरीर कहीं से भी नहीं नजर आ रहा था, पर वे समझ गये कि यह कारस्तानी बाघ की ही थी। चालाक बाघ ने अन्य हिंस्र पशुओं की नजरों से अपने शिकार को भली-भांति छिपा रखा था। संयोगवश कार्बेट ने अपने मार्गदर्शक को इस तथ्य से अवगत नहीं कराया।

वे अभी इधर-उधर नजरें दौड़ा ही रहे थे कि उन्हें वहां से चालीस गज दूर पहाड़ी के नीचे फैली झाड़ियों में बाघ दिख गया। उनकी निगाह अभी उस पर पड़ी ही थी कि अभी तक उनकी ओर मुंह करके लेटे हुए बाघ ने करवट बदल ली। अब उन्हें बाघ के सिर और कंधे का जरा-सा हिस्सा दिखाई पड़ रहा था। उन्होंने तय किया कि वहीं जमीन पर बैठकर बाघ के खड़े होने का इंतजार किया जाये। अभी वे अपनी योजना अमल में ला भी न पाये थे कि बायीं ओर झाड़ियों में हलचल हुई। उन्होंने देखा कि एक मादा रीछ अपने बच्चों के साथ लुकती-छिपती हुई बाघ के शिकार की ओर बढ़ी चली आ रही थी। शायद उसने बाघ को शिकार छिपाते हुए देख लिया था और अब बाघ की गैरमौजूदगी में उसका माल हड़पने आ रही थी।

वनरक्षक की निगाह मादा रीछ पर पड़ी, तो वह विस्मित होकर चिल्ला पड़ा, "देखो साहब, भालू...भालू!"

उसकी आवाज ने बाघ को चौंका



वे अभी इधर-उधर नजरें दौड़ा ही रहे थे कि उन्हें वहां से चालीस गज दूर पहाड़ी के नीचे फैली झाड़ियों में बाघ दिख गया। उनकी निगाह अभी उस पर पड़ी ही थी कि अभी तक उनकी ओर मुंह करके लेटे हुए बाघ ने करवट बदल ली।

दिया। वह उछला और बीस गज चौड़ी खुली जगह से होता हुआ दूसरी ओर को भागा। कार्बेट ने राइफल को उसकी ओर मोड़ कर ट्रिगर दबाया ही था कि वनरक्षक समझा कि साहब ने देखा नहीं है कि भालू किधर है और गलत दिशा में फायर कर रहे हैं। वनरक्षक बाघ को नहीं देख पाया था। उसने कार्बेट के हाथों को पकड़कर रीछों की ओर घुमा दिया। गोली एक पेड़ के तने से जा टकरायी। बाघ फिर बच निकला। कार्बेट झुंझलाये हुए देखते रह गये। उधर वनरक्षक भागते हुए रीछों की ओर देखता हुआ उत्तेजित आवाज में चिल्लाये जा रहा था—"साहब, मारो...मारो...।"

दूसरे दिन जब सुबह-सुबह कार्बेट घटनास्थल पर पुनः पहुंचे, तो उन्होंने अपनी आशा के अनुरूप पाया कि बाघ तो अपने शिकार पर नहीं लौटा था, पर मादा रीछ ने अपने बच्चों के साथ लौटकर शिकार का सफाया कर दिया था। अब वहां मात्र हड्डियों का ढेर मौजूद था, जिन्हें एक बड़ा-सा गिद्ध नोच रहा था।

कार्बेट डाकबंगले पर लौटे, तो एक दूसरे व्यक्ति से बाघ द्वारा एक और गाय के मारे जाने की खबर सुनी। खबरची होशियार था। उसने डाकबंगले के फर्श पर कोयले के टुकड़े से नक्शा खींचकर उन्हें घटनास्थल के बारे में विधिवत समझा दिया। नहाने-खाने के बाद वे अपराह्न में बाघ की तलाश में अकेले निकल पड़े।

कल के घटनास्थल से पांच मील दूर थी वह जगह, जहां बाघ ने आज शिकार किया था। कल की घटना से सतर्क बाघ उस वजनी गाय को शिकार-स्थल से दो-तीन सौ गज दूर पहाड़ी के ऊपर ले गया था। बीच रास्ते में मृत गाय की टांग बलूत के दो पेड़ों के बीच इस तरह से फंस गयी थी कि बाघ उसे निकाल नहीं सका था। फलतः उसने टांग को काटकर वहीं छोड़ दिया था। इसी सूत्र के सहारे कार्बेट बाघ के शिकार तक जा पहुंचे। बाघ वहां नहीं था।

लम्बी चढ़ाई चढ़ने से प्यास लग आयी थी। गला सूख रहा था। बायीं तरफ एक गहरी खंदक थी। कार्बेट पानी की तलाश में उसी नाले में उतर पड़े। लगभग एक मील जाने के बाद एक तेज मोड़ आया। कार्बेट का दिल उछल पड़ा। उनसे बीस गज की दूरी पर बाघ लेटा हुआ था। पास में ही पानी का एक गड्ढा मौजूद था। प्यास बुझाने के बाद बाघ मीठी नींद में सो गया था। उसका पिछला हिस्सा कार्बेट की ओर था, शेष भाग दाहिनी ओर मोड़ में छिपा हुआ था।

कार्बेट और बाघ के बीच सूखी टहनियों का ढेर था। उनके आगे बढ़ने से बाघ के जाग जाने का खतरा था। इसलिए वे वहीं बैठकर उस अवसर की प्रतीक्षा करने लगे, जब बाघ उनके सामने आता।

अभी कुछ ही मिनट बीते थे कि बाघ उठकर नाले के दूसरी ओर निकल गया। कुछ ही क्षणों बाद लगभग सौ गज दूर से काकड़ की आवाज आयी। काकड़ विपरीत दिशा में भाग निकला। उसके पीछे एक सांभर की भी आवाज गूंजी। बाघ जा चुका था।

शाम घिर आयी थी। कार्बेट को यकीन था कि बाघ अपने शिकार पर वापस आयेगा। वे शिकार के दाहिनी तरफ दस गज दूर पूर्व में स्थित एक बलूत के पेड़ पर चढ़कर बैठ गये। थोड़ी ही देर में चन्द्रमा निकल आया। ज्योत्सना से जंगल का वह खुला टुकड़ा भर उठा।

कार्बेट ने अभी तक बाघ को देखा नहीं था। उन्होंने अपने सामने गौर से देखने के बाद दायीं ओर सिर घुमाया ही था कि बाघ नजर आ गया। वह पुट्ठों के बल अपने शिकार के पास बैठा हुआ उन्हीं की ओर देख रहा था। जैसे ही उसने कार्बेट को अपनी ओर देखते पाया, उसके कान चौड़े हुए, फिर पूर्ववत अपनी स्थिति में आ गये।

कार्बेट आहिस्ता-आहिस्ता राइफल का मुंह उसकी ओर घुमाने लगे। बाघ के कान फिर चौड़े हो गये। वह बड़े गौर से उनकी गतिविधि पर नजर रखे हुए था। कार्बेट ने राइफल उठायी ही थी कि बाघ लपककर पीछे अंधेरे में लुप्त हो गया। वह एक बार फिर जीत गया था। अब उसके लौटने की संभावना नहीं के बराबर थी। इंतजार करना व्यर्थ था।

इस मंदिर के बाघ ने हालांकि किसी मनुष्य के जीवन को क्षति नहीं पहुंचायी थी, पर वह पशुपालकों के लिए आतंक बना हुआ था। चार दिनों में चार गायें लगातार मार चुका था वह। इन बुधारू पशुओं की हत्या करके वह गरीब लोगों की आजीविका को ही चौपट किये दे रहा था। खेती वहां नहीं के बराबर थी। लोग दूध-घी बेचकर ही अपना गुजर-बसर करते थे। इसलिए इस बाघ का शिकार जरूरी हो गया था। पर उसके ऊपर असावधानी से फायर करना भी ठीक नहीं था, अन्यथा वह घायल होकर नरभक्षी बन सकता था। इन सब बातों पर विचार करके कार्बेट ने रात में उसका पीछा करना ठीक नहीं समझा।

अब सवाल यह था कि शेष रात कहां बितायी जाये? रात के समय आठ मील चलकर डाकबंगले पहुंचना दुष्कर कार्य था। तभी उन्हें जानवरों के गले की घंटियां सुनायी पड़ीं। वे उन्हीं आवाजों की टोह लेते हुए चल पड़े। कुमाऊं क्षेत्र में लोग जंगलों के बीच खुली जगहों में जानवरों के मजबूत बाड़े बना लेते थे, जिनमें सामूहिक रूप से गायें-भैंसे बंधी रहती थीं।

वह एक ऐसा ही बाड़ा था, जो मजबूत और काफी ऊंची बाड़ से घिरा हुआ था। कार्बेट बाड़ के ऊपर चढ़कर दूसरी ओर कूद गये और दो सोती हुई गायों के बीच उनके गर्म शरीरों से सटकर सो गये।

सुबह जब वे बाड़े से निकल कर उस जगह पर पहुंचे, तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि मृत गाय ज्यों की त्यों पड़ी हुई थी। बाघ वापस नहीं लौटा था। वे गाय के शरीर को गिद्ध-चीलों और अन्य जानवरों से बचाने के उद्देश्य से टहनियों से ढंककर डाकबंगले की ओर लौट पड़े।

निरन्तर असफलता के कारण और बहुत कुछ अपने मुख्य उद्देश्य (आदमखोर का शिकार) से विरत रहने के कारण कार्बेट ने तय किया कि वे इस बाघ का शिकार करने का विचार त्यागकर दूसरे दिन नैनीताल लौट जायेंगे। पर वे ऐसा न कर सके, क्योंकि उसी समय एक आदमी वहां आ पहुंचा और बोला, "सलाम साहब, बाघ ने मेरी भी एक गाय को मार डाला है।"

आदमियों और रीछों के हस्तक्षेप से परेशान होकर बाघ ने इस बार शिकार का जो स्थल चुना था, वह दबीधुरा पहाड़ के सुदूर पूर्वी कोने पर स्थित था और उस जगह से, जहां वह पिछली रात पेड़ पर बैठे थे, कई मील दूर था।

पहाड़ के पास ही वह दलदली जमीन थी, जहां बाघ ने गाय को मारा था। शिकार को निकट ही स्थित एक घास भरे भूखण्ड के किनारे तक घसीटकर छोड़ दिया था। वहां से कुछ दूरी पर बलूत का विशाल पेड़ था। कार्बेट ने उसी के ऊपर बैठने का निश्चय किया। उनके साथ आये आदमी मचान बनाने की तैयारी करने लगे। उधर कार्बेट आस-पास बाघ की तलाश में



इस मंदिर के बाघ ने हालांकि किसी मनुष्य के जीवन को क्षति नहीं पहुंचायी थी, पर वह पशुपालकों के लिए आतंक बना हुआ था। चार दिनों में चार गायें लगातार मार चुका था वह। इन बुधारू पशुओं की हत्या करके वह गरीब लोगों की आजीविका को ही चौपट किये दे रहा था।

निकले। उन्हें विश्वास था कि बाघ वहीं कहीं छिपा होगा। पर चप्पा-चप्पा छान मारने के बावजूद बाघ उन्हें कहीं नजर नहीं आया।

उस पेड़ की शाखाओं को लोगों ने इस तरह काट-छांट की थी कि उसके तने पर अनेक छोटी-छोटी डालियां फूट पड़ी थीं, जिनसे उस पर आसानी से चढ़ा जा सकता था। लेकिन पेड़ के ऊपर से ठीक नीचे कुछ देख पाना कठिन था। बीस फुट ऊपर वह डाल थी, जो जमीन के उस टुकड़े की ओर फैली हुई थी, जहां बाघ का शिकार पड़ा हुआ था। अपराह्न चार बजे कार्बेट ने अपने आदमियों को यह आदेश देकर वापस कर दिया कि वे गांव पहुंचकर उनके लौटने का इन्तजार करें। फिर वे पेड़ के ऊपर चढ़कर बैठ गये।

जब कुछ देर बाद उन्होंने शिकार की ओर निगाह डाली, तो बाघ झाड़ियों के बीच से झांक रहा था। वह जमीन पर लेटा हुआ था और उसकी आंखें कार्बेट के ऊपर जमी हुई थीं। धीरे से उसने एक पंजा आगे बढ़ाया, फिर दूसरा पंजा, फिर आहिस्ता से खिसकता हुआ शिकार के पास पहुंच गया। वह कई क्षणों तक उसी तरह लेटा रहा, फिर पूर्ववत कार्बेट के ऊपर निगाहें जमाये हुए उसने गाय की पूंछ काटकर एक तरफ डाल दी और खाने लगा। तीन दिन से यानी रीछ के साथ हुई भिड़न्त के दिन से उसने शायद कुछ खाया नहीं था। बेहद भूखा था वह।

कार्बेट को उस अवसर की तलाश थी कि बाघ उनके ऊपर से नजरें हटाता और वे राइफल उठाकर कंधे से लगा लेते। पर बाघ खतरे से भली-भांति वाकिफ था। वह उसी तरह उनकी ओर आंखें गड़ाये हुए जल्दी-जल्दी खाता रहा। जब वह आठ-दस किलो मांस पेट में उतार चुका, तो कार्बेट को लगा कि अब मौका आ गया है।

उन्होंने राइफल को मुश्किल से छह इंच ऊपर उठाया ही था कि बाघ तेजी से झाड़ियों के अन्दर खिसक गया। वे राइफल को कंधे से लगाकर बाघ के बाहर आने का इन्तजार करने लगे। काफी देर बाद अचानक उन्हें पेड़ के नीचे गुर्राहट सुनाई पड़ी। बाघ झाड़ियों का चक्कर काटकर उनके नीचे आ पहुंचा था और पेड़ के तने पर जोर-जोर से पंजे मारता हुआ गुर्रा रहा था।

घनी शाखाओं की वजह से बाघ दिखाई नहीं पड़ रहा था। उस पर गोली चलाना संभव नहीं था। उसको सामने लाने के लिए कार्बेट को एक नया प्रयोग सूझ गया। उन्होंने राइफल को रखकर दोनों हथेलियों को मुंह से सटाकर इतने जोर की चीख मारी कि बाघ भाग खड़ा हुआ।

यह बाघ को मारने का उनके द्वारा किया गया आखिरी प्रयास था, जो कि पहले की तरह निष्फल सिद्ध हुआ था। जब वे वापस लौटने लगे, तो उन्हें पुजारी का कथन याद आ रहा था—"साहब, यदि आप इस बाघ को मारने की कोशिश करें भी, तो मुझे कोई एतराज न होगा। पर न तो आप इसे मार पायेंगे, न ही कोई और।"

पुजारी का कथन एकदम सच साबित हुआ था। जिम कार्बेट के दबीधुरा पहुंचने के साथ ही बाघ सक्रिय हुआ था। पांच दिनों में पांच गायें मार डाली थीं उसने। पांच दिनों में कार्बेट ने आठ बार देखा था उसे और चार बार उसके ऊपर गोली चलायी थी। फिर भी वह बच निकला था। खरोंच तक नहीं आयी थी उसे। तो क्या सचमुच मंदिर की अदृश्य शक्ति उसकी रक्षा कर रही थी? पुजारी के कथन में जो आत्मविश्वास भरा हुआ था, उसकी वजह यही थी क्या?

जिम कार्बेट के पास इन सवालों का कोई जवाब नहीं था। पहली बार ऐसी घटना घटी थी, जो उन्हें आजीवन याद रही और अपनी असफलता का कारण वे खोज नहीं पाये। बाद के वर्षों में वे कई बार दबीधुरा गये, पर उन्होंने कभी नहीं सुना कि किसी ने मन्दिर के बाघ को मारने में सफलता हासिल की हो।

एक बार जिम कार्बेट शिकार की तलाश में एक जंगली रास्ते के किनारे बैठे हुए थे। वह रास्ता जंगल में स्थित उस मन्दिर की ओर जाता था, जिसे 'बरम का थान' कहते थे। बरम गांव और वन का देवता होता है, जो कि वनवासियों की रक्षा करता है और अपने अधिकार-क्षेत्र में आनेवाले जंगल के जन्तुओं के शिकार की इजाजत नहीं देता। वह जंगल जिसके ठीक बीचों-बीच 'बरम का थान' स्थित था, जंगली जीवों से भरा हुआ था और शिकार करने वालों के लिए प्रिय शिकार-स्थल था। पर कार्बेट ने अपने लम्बे शिकारी जीवन के दौरान एक भी घटना ऐसी नहीं सुनी थी, जब 'बरम का थान' के आस-पास किसी जन्तु का शिकार किया गया हो।

उस दिन कार्बेट उस शेर के शिकार पर निकले थे, जो कि गांव की कई भैंसों का भक्षण कर चुका था। उन्होंने 'बरम के थान' से एक मील दूर अपने छिपकर बैठने की जगह चुनी थी।

अपराह्न के चार बज रहे थे। वे एक झाड़ी के पीछे छिपे हुए थे। घंटे भर बाद उधर से ही एक सांभर के बोलने की आवाज आयी, जिधर से उन्हें शेर के आने की आशा थी। कुछ देर बाद कुछ और करीब से एक काकड़ के चीखने का स्वर आया। शेर उसी रास्ते पर चला आ रहा था, जिसके किनारे वे घात लगाये हुए छिपे थे।

वह विशालकाय शेर था। कार्बेट को वह दो सौ गज दूर से ही दिखाई पड़ गया। वह मस्त चाल से चला आ रहा था। वह अभी उनसे लगभग सौ गज दूर था, तभी उन्हें पत्तियों की सरसराहट सुनाई पड़ी। उन्होंने देखा कि रास्ते के समीप का वह जामुन का पेड़, जिसकी डालियां दूसरे पेड़ को छू रही थीं, अनायास अपने उस पड़ोसी पेड़ के ऊपर झुकने लगा था। धीरे-धीरे वह पेड़ पूरा का पूरा अपने पड़ोसी पेड़ के ऊपर लद गया। कुछ देर तक तो वह दूसरा पेड़ पहले पेड़ का बोझ संभाले रहा, फिर अचानक ही दोनों एक तीसरे जामुन के पेड़ पर जा गिरे। फिर तीनों पेड़ एक साथ अर्रा कर धराशायी हो गये।

पेड़ों के साथ-साथ कार्बेट शेर पर भी नजर रखे हुए थे। जब पहले पेड़ की पत्तियां झरझरायी थीं, शेर तभी जहां का तहां ठहर गया था। उन तीनों पेड़ों के गिरते ही शेर वापस मुड़ा और जिधर से आया था, उधर ही लौट गया।

हैरान रह गये कार्बेट। वे तीनों पेड़ कैसे गिर पड़े थे, यह उनकी समझ में न आया। न तो आंधी-तूफान आया था, न ही वर्षा हुई थी। तीनों पेड़ नये और मोटे तनों वाले थे। फिर वे गिरे भी तो इस तरह से कि पूरा रास्ता ही अवरुद्ध हो गया था। शेर उनसे मात्र सत्तर गज दूर रह गया था, तभी अदृश्य शक्ति ने उन पेड़ों को उखाड़ फेंका था।

एक घटना उन दिव्य ज्योतियों के दर्शन की है, जिन्हें कार्बेट ने तल्ला देस के नरभक्षी के शिकार के दौरान पूर्ण गिर में देखा था। इन ज्योतियों के दर्शन उन्होंने अप्रैल की एक रात में किया था। जिम कार्बेट के अनुसार, ये ज्योतियां (जिनकी संख्या पांच थी) एक साथ नहीं प्रकट होती थीं। सभी ज्योतियां दो फुट ऊंची थीं। वे हवा से प्रभावित नहीं होती थीं और बिना हिले-डुले बिना धुएं के बराबर जलती थीं। वे एक स्थान से हटकर दूसरे स्थान पर पहुंच जाती थीं।

सब मिलाकर वह सब क्या था—इसकी व्याख्या जिम कार्बेट आजीवन नहीं कर पाये।

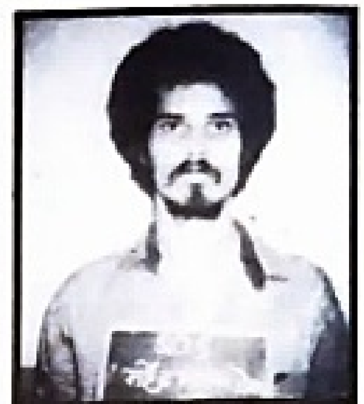
●

(जिम कार्बेट की कृति 'दि टेम्पल टाइगर' के आधार पर)



अपशकुन !...जरूर सासूजी आयी होंगी...पिछली बार भी ऐसा हुआ था...!

पांच घंटे का घमासान



महेन्द्र विडोवा डोलस

महेन्द्र सरल

बम्बई पुलिस की अपनी स्वीकारोक्ति है कि हर साल अपराधों की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। लोखण्डवाला काम्पलेक्स के लोग कहते हैं कि जब से यहां पुलिस चौकी आयी है, तभी से हर तरह के अपराध होने लगे हैं। यह किस बात का संकेत है?

म्बई महानगर के उपनगर 'अंधेरी' के भी कई उपनगर स्थापित हो गये हैं और पिछले कुछ वर्षों में 'लोखण्डवाला काम्पलेक्स' एकाएक ख्याति की सूची में ऊपर पहुंच गया है। पहले वहां छोटे-छोटे बंगले बना कर बेचे गये, फिर छोटे-बड़े फ्लैट भी बनाये गये। चार-चार, छह-छह मंजिली इमारतों के बीच में छोड़ी गयी सड़क आखिर संकरी नजर आने लगी। यातायात, धकापेल, शोर-शराबा हर घड़ी का नजारा हो गया।

इस घनी बस्तीवाले इलाके में एक बिल्डिंग का नाम 'स्वाति' है। शनिवार १६ नवम्बर १९९१ को सुबह रोजमर्रा की तरह उस बिल्डिंग में रहनेवाले अपने-अपने काम पर चले गये। गहमागहमी में ठहराव-सा आ गया था कि एकाएक वहां के और आस-पास के निवासियों ने देखा कि पुलिस जीपें और एक पुलिस बस वहां आ पहुंची है। बड़ी फुर्ती से सिपाही और अफसर लोग उतर कर 'स्वाति' के चारों तरफ फैलते जा रहे हैं।

पुलिस ने तमाशा देखनेवालों को खदेड़ कर दूर-दूर तक की सड़क साफ कर दी। हर बिल्डिंग में खबर करायी गयी कि तमाम खिड़की-दरवाजे बंद कर लो। किसी ने बाहर झांकने की कोशिश की, तो जान जा सकती है। अफसर लोग इशारों से आदेश दे रहे थे, ताकि अगर कोई उनको देख रहा हो और उनके आदेश सुन रहा हो, तो उसके पल्ले कुछ न पड़े।

कुछ सिपाही, जिन्हें कमाण्डो शैली की शिक्षा दी गयी है, लपकते हुए दबे पांव 'स्वाति' के जीने पर चढ़ गये। वे चार मंजिली बिल्डिंग में चुपचाप जाकर हर फ्लैट के दरवाजों की कुण्डियां बाहर से बंद कर आये। तब तक लगभग ५० पुलिसकर्मियों की टुकड़ी ने बाकी किलेबंदी कर ली। उन्हें तल मंजिल के एक फ्लैट पर हमला बोलना था। उस फ्लैट के दो दरवाजे थे।

पुलिस अधीक्षक अरुण पटनायक ने देखा कि फ्लैट के दोनों ओर खुलनेवाले दरवाजों के सामने कारें खड़ी हुई थीं। एक स्लेटी रंग की मारुति थी, दूसरी एक और कार थी। दूसरे मुख्य प्रवेश द्वार के सामने लाल रंग की जीप खड़ी थी। दोनों तरफ खास कमाण्डो को तैनात किया गया।

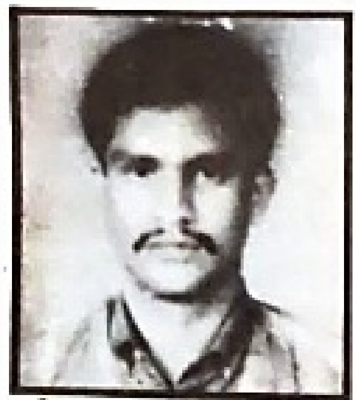
अरुण पटनायक ने अपना दल लेकर चलने से पहले उत्तर क्षेत्र के अतिरिक्त पुलिस आयुक्त आफताब अहमद खां को टेलीफोन पर पूरी सूचना पहुंचा दी थी। किसी मुखबिर ने उन्हें खबर दी थी कि इस समय 'स्वाति' में तमाम शातिर बदमाशों का अड्डा जमा हुआ था। उनमें महेन्द्र (माया डोलस) के अलावा दिलीप बुवा भी मौजूद थे। महेन्द्र पर २० हत्याओं के अभियोग और दिलीप पर १२ हत्याओं के, जिनमें एक कांसटेबिल की हत्या भी शामिल थी। शातिर बदमाशों से निपटने के लिए साधारण सिपाही काफी नहीं होते। इसलिए आतंक शमन दल के निरीक्षक मुहम्मद अब्दुल काबी और उनके कमाण्डो को भी साथ लिया गया था।

अतिरिक्त आयुक्त आफताब अहमद खां को हाल ही में बड़ौदा काण्ड का श्रेय भी मिला हुआ था, जिसमें उन्होंने इसी आतंक विरोधी दल को साथ लेकर सिख आतंकवादियों का सफाया कर डाला था। यह तैयारी भी ठीक उसी स्तर की थी। उस समय बम्बई के संयुक्त आयुक्त इनामदार भी हर कदम पर साथ रहे थे।

पूरी सावधानियां बरतने के बाद उपनिरीक्षक शुभराव घराल और निरीक्षक काबी ने दरवाजे पर दस्तक



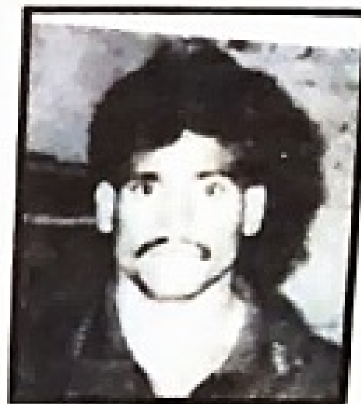
दिलीप यादव



सुनील सावंत (वांछित)



सुनील पाटे (वांछित)



सदा भीमराव पावले (वांछित)

दी। अंदर जमा हुए शातिर लोगों को भी भनक जरूर पड़ गयी थी। उन्होंने भी तैयारी कर ली थी। दरवाजा खुलते ही अंदर से दनादन गोलियां चलीं और घरात के सीने और काथी के कंधे को फोड़ती हुई निकल गयीं। दोनों वहीं गिर गये। यह हालत तब हुई, जबकि वे दोनों बुलेटप्रूफ साधन लगाये हुए थे।

अब पुलिस को डबल काम करना पड़ा—बदमाश निकलकर भागने न पायें और अपने जख्मी साथी उठा कर अस्पताल भी पहुंचा दिये जायें। अंदर से आयी गोलियों की बौछार के जवाब में बाहर से पुलिस ने भी उसी रफ्तार से गोलियां बरसायीं। दरवाजा फौरन बंद हो गया। दोनों जख्मी अफसरों को अस्पताल के लिए रवाना किया गया। साथ ही साथ वायरलेस से और अधिक पुलिस और हमले के उपकरण मंगाये गये। फायर बिग्रेड को बुलाया गया कि उसकी सीढ़ी से चढ़कर बिल्डिंग की छत पर जाने की जरूरत पड़ सकती है।

उधर लाउडस्पीकर पर धमकी पहुंचायी गयी कि जितने भी लोग फ्लैट के अंदर हैं, चुपचाप आत्मसमर्पण कर दें, वरना मारे जायेंगे। पुलिस ने बिल्डिंग को घेर लिया है। आस-पास की बिल्डिंगवाले लोगों को भी सावधान किया गया कि बाहर का तमाशा देखने के लिए खिड़की-दरवाजे हरगिज न खोलें, वरना गोली उन्हें भी लग सकती है। पड़ोसी घरों वाले लोग अभी तक इस गोलीबारी को दीपावली के पटाखे ही समझ रहे थे।

बदमाशों वाले फ्लैट के अंदर से भी जोरदार आवाज सुनाई पड़ी—"हमें कमिश्नर खां से बात करनी है, उन्हें बुलाओ।"

जवाब पहुंचा, "हां, मैं कमिश्नर खां ही बोल रहा हूं। चुपचाप सरेंडर कर दो, वरना बेमौत मारे जाओगे। किसी के बच निकलने का कोई चांस नहीं है। किसी मुगालते में मत रहना।"

इधर लाउडस्पीकरों पर बातें हो रही थीं, उधर दो शातिर बदमाश फ्लैट से खिसककर ऊपर की मंजिल की तरफ दौड़े और बाहर से बंद किये कुण्डों को खोलकर दरवाजों को जोर-जोर से भड़भड़ाने लगे—"मेहरबानी करके दरवाजा खोलो। हम प्यास से मरे जा रहे हैं। बारूद से हमारा गला सूख गया है। जल्दी करो, नहीं तो हमारा दम निकल जायेगा।"

एक जगह उनका काम नहीं बना, तो और ऊपरवाली मंजिल पर वही गुहार लगायी। फ्लैट के अंदर के लोगों और महिलाओं का कलेजा मुंह को आ गया। किसी की हिम्मत नहीं हुई कि दरवाजा खोलता। कोई बहकावे में आकर दरवाजा खोल देता, तो पुलिस की उलझनें बेहद बढ़ जातीं। शातिर लोग अपने ऊपर दया करनेवालों को बंधक बना लेते और फिर पुलिस को ललकारते कि उनका रास्ता साफ करो, वरना उन लोगों को मार डालेंगे।

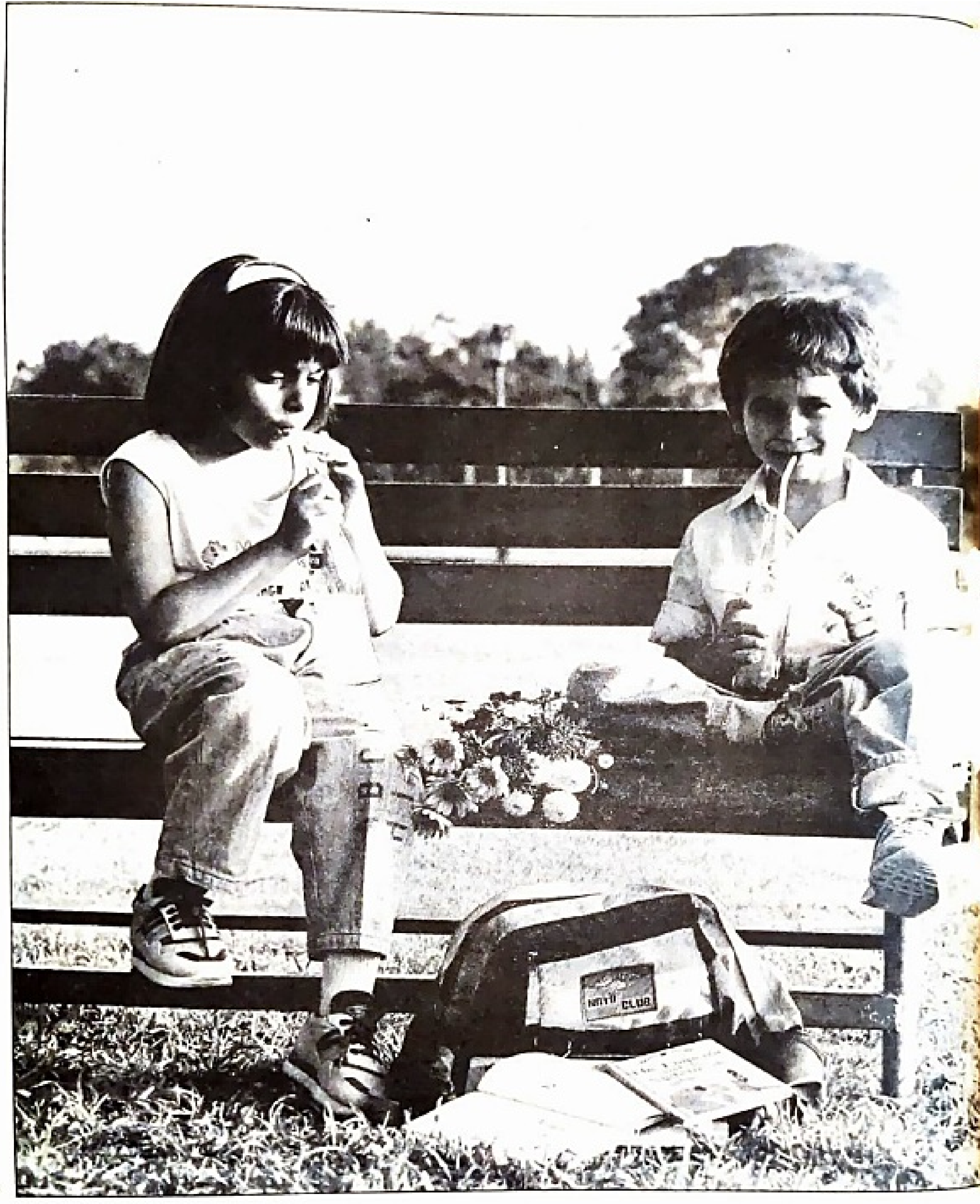
गोलियों की पहली बौछार में ही पुलिस को अंदाजा हो गया था कि बदमाशों के पास ए०के० ४७ राइफलें हैं। इसलिए वायरलेस से मुख्य कार्यालय में खबर करके अतिरिक्त दल और उत्तम हथियारों की मांग की गयी। लगभग एक घंटे तक कोई भी दल न आगे बढ़ा, न पीछे हटा। तब तक ५०० बंदूकधारी सिपाहियों और कमाण्डो का दल वहां आ पहुंचा। हेड आफिस से अपराध शाखा के आयुक्त रामदेव त्यागी भी आ गये और हमले की कार्रवाई अपने हाथ में ले ली।

इस बीच बदमाश भी खामोशी से हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठे थे। उन्होंने भी एक योजना बना ली। अनिल पवार नामक बदमाश को दनादन गोलियां चलाने को कहा गया और उसी हबड़-तबड़ में महेन्द्र यानी माया डोलस और दिलीप बुवा ने भयंकर दिलेरी का परिचय दिया। वे लपककर ऊपर वाले एक खाली फ्लैट में पहुंचने में कामयाब हो गये। यह फ्लैट भी इसी गिरोह के एक आदमी का था। उसका नाम गोपा राजवानी था।

इस ऊंचे स्थान से माया डोलस और दिलीप बुवा ने पुलिस पर नया हमला किया। एक तरह से पुलिस दुश्मनों की इस व्यूह रचना के लिए तैयार नहीं थी और उपनिरीक्षक पिंपलकर घायल हो गया। उसके भी कंधे में गोली लगी। उसे आड़ में घसीटकर तुरंत अस्पताल के लिए रवाना किया गया। इस मौके पर पुलिस को यह जरूरत महसूस हुई कि फायर बिग्रेड के अलावा उन्हें एक मोबाइल अस्पताल को भी साथ लाना चाहिए था।

नये कोणों से गोलियां चलती देखकर पुलिस को भी अपनी व्यूह रचना में परिवर्तन करना पड़ा। आक्रमण के लिए तीन दल बनाये गये और आस-पास की बिल्डिंग की छतों पर उन्हें पहुंचाया गया, जहां से गोपा राजवानी के फ्लैट पर निशाने लिये जा सकें। वहां पहुंचते ही सर्वप्रथम उन्होंने खिड़कियों के कांच फोड़े। दरवाजों पर गोलियां लगीं, तो वे भी टूट-टूटकर लटक गये।

बदमाशों का दल थोड़ी-थोड़ी देर



में अपनी व्यूह रचना में परिवर्तन लाता रहा। उन्होंने जब देखा कि पुलिस का ध्यान ऊपर वाले फ्लैट की ओर लगा हुआ है, तो पांडुरंग कुलकर्णी और अनिल खूबचंदानी नीचे वाले फ्लैट से निकलकर तीर की तरह उस तरफ कूदे, जिधर जीप खड़ी हुई थी। मगर बिल्डिंग के द्वार तक ही पहुंचे थे कि पुलिस की गोलियों ने उनके शरीरों को छलनी बना दिया। वे दोनों वहीं ढेर हो गये। उन्हें उठा कर अस्पताल ले जानेवाला भी कोई नहीं था।

पांडुरंग और अनिल सुरक्षित भाग सकें, इसमें मदद करने के लिए फ्लैट के अंदर से विजय चकोर और गोपाल पुजारी गोलियां बरसाते रहे थे। उन गोलियों से एक निरीक्षक इकबाल शेख और एक कांसटेबिल दलवी भी जख्मी हो गये। इस तरह दो दुश्मन खत्म करते-करते पुलिस के सात जवान जख्मी हो गये थे। ऊपर वाले फ्लैट से फायर करने में बदमाशों को बहुत अड़चनें आ रही थीं। डोलस और बुवा उस ऊपर वाले फ्लैट से निकलकर बिल्डिंग की छत पर पहुंचे कि वहां से उन्हें फायर करने में आसानी रहेगी। मगर वहां तो पुलिस की बन्दूकें पहले से निशाना जमाये थीं। दनादन गोलियां चलीं और देखते ही देखते वे दोनों भी लुढ़क गये।

यह पुलिस की दूसरी विजय थी। अब पैदल सिपाहियों को आदेश हुआ कि वे नीचे वाले फ्लैट का दरवाजा तोड़ दें। किवाड़ों पर धड़ाधड़ चोटें की गयीं। अंदर से चकोर और पुजारी गोलियां चलाते रहे, मगर दरवाजे को टूटने से नहीं रोक सके। तब तक दोनों बदमाशों की गोलियां खत्म हो गयीं। वे बाहर भी नहीं भाग सके। तुरंत ही उन्हें उसी स्थल पर शूट कर दिया गया। अंदर जाने पर पुलिस को सातवां बदमाश पहले से मरा पड़ा मिला। खून से लथपथ शवों के अतिरिक्त पुलिस को तीन ए०के० ४७, नौ पिस्तौलें, स्वचालित बंदूकों के कारतूस और काफी संख्या में बंदूक की गोलियां भी मिलीं। उन्हें उपयोग करने का मौका ही बदमाशों को नहीं मिल सका होगा।

फायरिंग बंद हो जाने के बाद जब वातावरण में कुछ शांति हुई, तनाव



श्रीकांत मानी देसाई (वांछित)



संजय वसंत मेहेर (वांछित)

गिरोह के सदस्यों की कुल संख्या का पुलिस को भी ठीक पता नहीं है। मगर यह बात निश्चित रूप से सही है कि यह गिरोह दाऊद इब्राहीम का ही है।... दाऊद इब्राहीम खुद तो गिरफ्तारी से बचने के लिए दुबई चला गया, मगर उसके चेले-चांटे यहां रह गये और उनकी मदद से वह कारनामे करता ही रहा है।

खत्म हुआ, तो इक्के-दुक्के लोगों ने खिड़कियों की दरारों से झांक कर देखा। पुलिस ने सड़कों पर दूर-दूर तक रोक लगा रखी थी। लोग अपने दफ्तरों और काम की जगहों से लौट रहे थे। उन्हें रोक दिया गया था। उस तनावपूर्ण वातावरण और दनादन चलती गोलियों से एक युवती घबराकर बेहोश हो गयी। उसे अपने घर जाने का मौका नहीं मिल पा रहा था।

जिस 'स्वाति' को एक दिन के लिए युद्ध भूमि में बदला गया था, उसी में एक फ्लैट में अभिनेत्री रूपा गांगुली रहती हैं, जो 'महाभारत' की द्रौपदी के नाम से पहचानी जाती हैं। इन तमाम बिल्डिंगों में आज के मापदण्ड से साधारण आर्थिक स्तर के लोग रहते हैं। उनमें अगर कोई मामूली-सी कार खरीद लेता, तो बाकी लोगों की नजर में उसका स्तर एकदम बढ़ जाता था। ऐसे लोखण्डवाला के खण्ड में जब कई-कई मारुति कारें और बढ़िया जीप खड़ी दिखाई देने लगी, तो पड़ोसियों को लगा था कि इधर कोई बड़ा आदमी आ गया है।

यह 'बड़ा आदमी' अभी महीना भर पहले ही आया था। उसकी जीप और एक मारुति कार युद्ध के दौरान वहां खड़ी देखी गयीं। बाद में जब उनकी तलाशी हुई, तो उनमें से दो ए०के० ४७ और कुछ रिवाल्वर मिले। फ्लैट के अंदर जो कारतूस मिले थे, वे वैसे ही थे, जैसे हाल ही में हुए कुर्ला उपनगर की गोलीबारी में काम आये थे। वह वारदात भी इसी दल ने की थी।

इस क्षेत्र में पहले कोई पुलिस चौकी भी नहीं थी। हाल ही में ओशिवारा थाना के अंतर्गत एक चौकी वहां स्थापित की गयी। उस क्षेत्र के लोगों का कहना है कि जब से चौकी आयी है, तभी से वहां संदिग्ध लोगों का आना-जाना शुरू हो गया। 'स्वाति' का यह फ्लैट रेखा रामनाथ नामक महिला के नाम अंकित था। वह वहां पर कभी-कभी ही दिखाई पड़ती थी।

बम्बई महानगर के समीप ठाणे जिले के कल्याण क्षेत्र के पास सिंधी शरणार्थियों का एक उपनगर बस गया है—उल्हासनगर। गोपा राजवानी वहीं रहता था और उसी का यह दूसरा फ्लैट था, जिसमें से इन शातिर बदमाशों ने गोलियां चलायीं। रेखा भी उसी उल्हासनगर क्षेत्र से यहां आकर रहने लगी थी। फिलहाल वह लापता है। मगर पुलिस को विश्वास है कि वह जल्दी ही गिरफ्त में आ जायेगी। इस रेखा के घर में एक टेलीफोन कनेक्शन भी था। बम्बई में कई लाख टेलीफोन कनेक्शन हैं। मगर पुलिस की नजरों में यह नम्बर खास तौर पर तब आया, जब एक भवन निर्माता (ठेकेदार) ने पुलिस को यह नम्बर दिया कि कुछ आतंकवादी और फिरौती से रुपया वसूल करनेवाले गिरोह के लोग उसके पास आये थे। उसके बच्चे को उड़ा ले जाने और ठेकेदार को खत्म कर डालने की धमकी दी थी—"रुपया देना मंजूर हो तो उस नम्बर पर खबर देना। तुम्हारी जान बख्श दी जायेगी।"

पुलिस ने डाइरेक्टरी से पता मालूम किया और उसके आस-पास अपने भेदिये छोड़ दिये। पता चला कि दिलीप बुवा उस फ्लैट में काफी आता-जाता था और रहता भी था। दो मारुति और एक जीप हमेशा उसके लिए तैनात रहती थी। इतनी जानकारियां इकट्ठी हुईं, तो पुलिस को विश्वास हो गया कि यह रेखा महोदया भी इस गिरोह की एक सदस्या होंगी।

गिरोह के सदस्यों की कुल संख्या का पुलिस को भी ठीक पता नहीं है। मगर यह बात निश्चित रूप से सही है कि यह गिरोह दाऊद इब्राहीम का ही है। महेन्द्र यानी माया डोलस इस गिरोह का खास मारपीट करनेवाला माना जाता था। देखने में वह साधारण-सा था। सिर के बाल घने और उलझे हुए थे। यही हुलिया पुलिस को शुरू-शुरू में मालूम हुआ था। यह व्यक्ति शीव क्षेत्र के एनटाप हिल पर योजनाबद्ध अपराध करनेवालों में काफी कुख्यात था। शीव से आगे चेम्बूर क्षेत्र के एक गांव का मूल निवासी था वह।

दाऊद इब्राहीम खुद तो गिरफ्तारी से बचने के लिए दुबई चला गया, मगर उसके चेले-चांटे यहां रह गये और उनकी मदद से वह कारनामे करता ही रहा है। उसके खासमखास चेले मिलिंद बाला-बालकर और छोटा राजन ने पट्टी पढ़ा कर डोलस को अपने दल में शामिल किया था। मगर बाद में जब दल में फूट पड़ी और गिरोह दो टुकड़ों में बंट गया, तो एक गिरोह दूसरे गिरोह के खून का प्यासा हो गया। १९८८ से लेकर अब तक इन गिरोहों की मार-काट में आपस की ही ३९ वारदातें पुलिस के रिकार्ड में आयी हैं। इन वारदातों में ५३ हत्याएं अब तक हुई हैं।

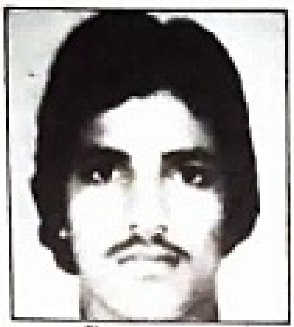
रामा नायक दाऊद का खास लड़ाकू साथी था। उसके दल में छोटा

बाबू, फिलिप, पंढारे, पाल न्यू मैन, अशोक जोशी, सदा पावले और अर्जुन गावली थे। इन सभी साथियों को लेकर रामा नायक ने अपनी सेना तैयार की। अब दाऊद की टीम में बचे छोटा राजन, सुभाष सिंह ठाकुर, राघू शेट्टी, अनिल परब यानी रोबिन, दिलीप बुवा यानी कोहक, नरेश आहूजा, संजय रागड़, शरद शेट्टी, भाई ठाकुर और महेन्द्र उर्फ माया डोलस।

इन दोनों दलों में इस बात की होड़ लग गयी कि कौन अपना प्रभुत्व दूसरे पर जमाने में कामयाब हो जाता है। आम लोगों का खयाल है कि पुलिस ने इन दोनों गुटों की फूट से फायदा उठाने के लिए रामा नायक दल को अपना मुखबिर बना लिया था। अलबत्ता पुलिस इससे कतई इनकार करती है।

सन् १९८८ में २७ अप्रैल को एक करोड़ सत्ताइस लाख रुपये का सोना आने वाला था। रामा नायक और उसके साथी माल लेने के लिए गये। पुलिस को दूसरे दल के माध्यम से सूचना मिल गयी। छापे के दौरान रामा नायक मारा गया। यह वारदात पुरानी बम्बई के बंदरगाह बसई में हुई थी। इसके तुरंत बाद बम्बई की बदनाम बस्ती डोंगरी में भी मारपीट हुई। पास के भायखला क्षेत्र में गोली चली और उसमें सतीश राजे मारा गया। सतीश तस्करों के माल को इधर-उधर पहुंचाने का काम संभाला करता था।

रामा नायक और सतीश राजे की मौत से महेन्द्र यानी माया डोलस का पलड़ा बढ़ गया। विरोधी पक्ष के कमजोर पड़ने की खुशियां मनायी गयीं। इससे विरोधी दल के सीने में ईर्ष्या की आग सुलग उठी। फिर तो परेल में जोरदार झड़प हुई। उसमें अशोक जोशी और उसके चार साथी मारे गये। गिरगांव क्षेत्र का गुण्डा लीडर सुनील सावंत यानी सौतिया ने अलग ही अपना आतंक फैला लिया। ये दोनों (माया और सौतिया) खुद सामने आकर नहीं लड़ते थे, मगर मदद हर तरह की पहुंचाया करते थे। तीसरी वारदात पनवेल में हुई। उसमें मारपीट करनेवाले थे सुभाष सिंह ठाकुर, संजय रागड़, अनिल परब, नरेश आहूजा और छोटा राजन।


सुभाष सिंह ठाकुर (वांछित)


नरेश नक्कर (वांछित)

रोज-रोज के इन हमलों से पुलिस कमिश्नर राममूर्ति बेहद परेशान हो गये। आखिर उन्होंने खुला आदेश दिया कि इन अपराधियों को 'जिन्दा या मुर्दा' लाया जाये। अपराध शाखा ने तमाम वारदातों के तौर-तरीकों से वे तथ्य निकाले, जो हर वारदात में एक शैली के थे।

इन दो गिरोहों की कहानी आसानी से खत्म होने वाली नहीं थी। नयी-नयी भर्ती होती जाती थी और नये-नये स्वार्थ टकराते जाते थे। किरण वालावालकर अब तक माया डोलस का विश्वासपात्र व्यक्ति था। मगर उसने चुपचाप गावली (विरोधी दल) का साथ देना शुरू कर दिया, तो डोलस ने वालावालकर के दो साथियों को तत्काल इस धरती से उठा दिया। वालावालकर ने भी बदला लिया। उसने डोलस के चचेरे भाई और दो अन्य साथियों को मार डाला। पुलिस सूत्रों का कहना है कि माया डोलस ने अपने चचेरे भाई को खुद ही मारा था, क्योंकि उसको (घर की सम्पत्ति को लेकर) भाई से झगड़ा हुआ था।

अपराध जगत के लोग एक जगह जमकर नहीं रह सकते। वे अपनी जगहें बदलते रहते हैं। अब डोलस घाटकोपर में आकर रहने लगा। घाटकोपर और अंधेरी उपनगरों के बीच में साकीनाका क्षेत्र है। वहां एक नृत्य समारोह में डोलस शामिल था। पुलिस खबर पाते ही वहां पहुंची और उसे गिरफ्तार कर लिया। उसे बम्बई से दूर औरंगाबाद के कारागार में ले जाकर रखा गया।

जब अदालत की तारीख पड़ती, तो उसे अदालत लाया जाता। ऐसे ही एक चक्कर में वह अदालत से जेल ले जाया जा रहा था, तभी रस्सी में बंधा होने के बावजूद सिपाही को जख्मी करके वह भाग गया। भागने में मदद की थी दिलीप बुवा ने। फिर तो ये दोनों बदमाश शहर के सबसे खतरनाक हत्यारे बन गये। अपनी फीस लेकर ये किसी भी व्यक्ति की हत्या करने में नहीं हिचकते थे। दिलीप बुवा को तो पुलिसवाले सनकी पागल कहते थे। उसने भायखला में एक दिन बिना बात ही गोली चलाकर तीन अनजान और निर्दोष व्यक्तियों को मार डाला था। उसने अपने साथियों के लिए लाल रंग के कपड़े की वर्दी बनवायी और एक सेना खड़ी करने की तैयारी कर डाली। पिछले जून महीने में दामदी चाल नामक बिल्डिंग में उन लाल वेशधारियों ने हमला किया। अनाप-शनाप गोलियां चलायीं। इस वारदात में डोलस और एक नया हत्यारा डेनी नेपाली भी थे। उसके बाद वे भायखला पहुंचे और वहां भी गोलियां चलायीं। फिर एलफिंस्टन पुल और उसके बाद चेम्बूर में भी वैसा ही आतंक फैलाया।

पुलिस का एक जासूस था चम्पक मारवाड़ी। उसने पुलिस को खबर दी थी कि 'दाऊद कम्पनी' का माल आ रहा है। वहां पर कस्टम अधिकारियों को लेकर पुलिस पहुंची। माल जब्त कर लिया गया। इससे खुन्नस खाकर डोलस और बुवा ने चम्पक मारवाड़ी की हत्या कर दी। इतने पर भी वे चैन से नहीं बैठे और कांजुर मार्ग उपनगर में जाकर उसके पांच अन्य व्यक्तियों और एक स्त्री का कत्ल कर दिया।

रोज-रोज के इन हमलों से पुलिस कमिश्नर राममूर्ति बेहद परेशान हो गये। पुलिस की बदनामी बढ़ती जा रही थी। आखिर उन्होंने खुला आदेश दिया कि इन अपराधियों को 'जिंदा या मुर्दा' लाया जाये। पुरस्कारों की भी घोषणा की। अपराध शाखा ने तमाम वारदातों के तौर-तरीकों से वे तथ्य निकाले, जो हर वारदात में एक शैली के थे। अपराधियों के फोटोग्राफ इकट्ठे किये गये। उनकी प्रतियां तमाम थानों में पहुंचायी गयीं। खबर देनेवाले को पुलिस संरक्षण और पुरस्कार देने की घोषणा भी की गयी।

इन कोशिशों से कोई खास फायदा नहीं हुआ, मगर कुछ सूचनाएं पुलिस को मिलीं। एक टिप लेकर जब पुलिस पार्टी नेशनल पार्क बोरिवली (उपनगर) पहुंची, तो गोपाल नामक गुण्डा पुलिस की गोली से मारा गया। वह उस क्षेत्र का रुपया ऐंठने और डराने-धमकाने वाला शातिर था। इसी संदर्भ में एक और सुराग मिला कि सैयद टोपे नामक फिरौती वसूल करनेवाला शातिर बदमाश डोलस से मिलने उसके मझगांव वाले अड्डे पर जानेवाला था। वह 'दाऊद कम्पनी' का खास आदमी था। वह अपने दो शागिर्दों को भी साथ ले गया। तीनों के पास पिस्तौलें थीं। पुलिस ताक में पहले से ही मौजूद थी। उन्होंने सैयद को पहचान लिया। सैयद ने भी पुलिस के आदमियों को सादे वेश में होने के बावजूद पहचान लिया। फौरन फायरिंग शुरू कर दी। वह घनी आबादी वाला क्षेत्र था। पुलिस गोलियां चलाने में हिचकती रही कि कहीं कोई नागरिक न मारा जाये। भागदौड़ और पीछा करने का ड्रामा हुआ। आखिर सैयद गोली खाकर गिर गया। साथ के लोग भाग गये। उन भागनेवालों में एक संभवतः संजय रागड़ था। पुलिस की सूची में उसका भी नाम और फोटो है।

थोड़े ही अंतराल में 'दाऊद सेना' के दो सिपाही मारे गये, इससे उनमें भगदड़ मच गयी। संजय रागड़ और आहूजा एकदम गायब हो गये। बाद में पता चला कि वे दुबई पहुंच गये थे।

हेमा
की





"तुम सब कुछ समझते हो," किसन सिंह चिढ़कर बोले, "अक्टूबर '८८ में जब घटना घटी थी, तब तुम अविवाहित थे। फिर तीन साल में तुमने चार बच्चे कैसे पैदा कर लिये?"

"तीन साल में नहीं साहब, मेरा बड़ा बच्चा तेरह-चौदह साल का है। मेरी शादी हुए भी पन्द्रह साल हो गये।"

किसन सिंह उसकी बातों से ऊब गये थे और उन्हें गुस्सा आ रहा था। उन्हें लग रहा था कि यदि वह ऐसे ही जवाब देता रहा, तो वह बर्दाश्त नहीं कर पाएंगे। इसलिए उन्होंने उससे पूछताछ करना बंद कर दिया।

मुकदमा लूटपाट, हत्या और हत्या के प्रयास का था। अभियुक्त तीन थे—अनुपम प्रकाश, विवेक यादव और संजय स्वामी। अक्टूबर १९८८ में जब वारदात हुई थी, तब इन तीनों में से किसी की भी उम्र २३ साल से ज्यादा नहीं थी।

मुकदमे की विवेचना थाना कविनगर पुलिस ने की थी। पुलिस तीन साल तक तीनों में से किसी मुल्जिम को पकड़ नहीं पायी थी। तीन साल बाद १८ सितम्बर '९१ को अनुपम प्रकाश अचानक अदालत पर हाजिर होकर जेल चला गया। वही मुख्य अभियुक्त था। उसी से पूछताछ करने किसन सिंह मेरठ जेल में गये थे। लेकिन अनुपम प्रकाश ने उनसे जिस तरह की बातें की थीं, उससे वह संशय में पड़ गये थे।

मुद्दई का नाम था—शिवकुमार मित्तल। जब वह गाजियाबाद में तैनात थे, तब उन्हीं के घर वारदात हुई थी। मौजूदा समय में शिवकुमार मित्तल की नियुक्ति देहरादून में थी। शिवकुमार मित्तल कुछ मदद कर सकते थे। किसन सिंह ने उनके अधिवक्ता चौधरी रुक्कन सिंह तेवतिया से उन्हें बुलाने को कहा। तेवतिया ने मित्तल को फोन किया। वह दूसरे दिन ही गाजियाबाद आ गये।

शिवकुमार मित्तल ने किसन सिंह तालान को बताया कि घटना के समय अनुपम प्रकाश की उम्र २१ वर्ष थी। मौजूदा समय में वह २४ साल से ज्यादा का नहीं होना चाहिए। उन्होंने यह भी बताया कि अनुपम प्रकाश की शादी नहीं हुई है।

"इसका मतलब तो यह हुआ कि मेरठ जेल में जो व्यक्ति इस केस में बंद है, वह अनुपम प्रकाश नहीं है।" किसन सिंह तालान ने चौंकते हुए कहा, तो शिवकुमार बोले, "अनुपम के बाप के पास पैसा है, वह कुछ भी करा सकते हैं।"

शिवकुमार मित्तल के पास घटना के समय की एक अखबारी कटिंग थी। उसमें समाचार के साथ अनुपम प्रकाश, विवेक यादव और संजय स्वामी के फोटो छपे थे। मित्तल साहब ने वह कटिंग किसन सिंह तालान को दी। अखबार में छपे हुए फोटो को देखकर तालान साहब को पूरा विश्वास हो गया कि मेरठ जेल में जो अभियुक्त बंद है, वह अनुपम प्रकाश नहीं है।

असली अनुपम प्रकाश का पता लगाने के लिए आइए, एक नजर घटना पर डालें।

मालवीय रोड, बुलंदशहर के निवासी शिवकुमार मित्तल लोक निर्माण विभाग में इंजीनियर थे। सन् १९८८ में जब घटना घटी, तब उनकी नियुक्ति गाजियाबाद में थी और वह सपरिवार राजनगर के सेक्टर-१ आर की कोठी नं० ११ में रहते थे। उनके परिवार में पत्नी नीना मित्तल, बेटों शलभ और गौरव सहित कुल चार प्राणी थे।

तीन अक्टूबर की बात है। शिवकुमार मित्तल अपने एक सहकर्मी जूनियर इंजीनियर जयप्रकाश अग्रवाल के साथ अपने घर में बैठे थे। उस समय उनकी पत्नी श्रीमती नीना मित्तल और दोनों बेटे भी घर में ही थे। उसी समय तीन युवक उनसे मिलने आये। शिवकुमार मित्तल को देखते ही उनमें से एक युवक बोला, "अंकल, मुझे पहचानते हैं आप?"

"हां। भला हम तुम्हें क्यों नहीं पहचानेंगे? तुम अनुपम प्रकाश हो न?" शिवकुमार मित्तल ने गर्मजोशी से कहा और तीनों युवकों को भीतर ले गये। श्रीमती नीना मित्तल उन सबके लिए चाय ले आयीं। चाय के दौरान बातों का सिलसिला शुरू हुआ, तो अनुपम ने अपने दोस्तों के नाम विवेक और संजय स्वामी बताये। अनुपम ने बताया कि विवेक उसके मामा का लड़का है और



बलबीर सिंह से पूछताछ

शादीशुदा है। वह बात को आगे बढ़ाते हुए बोला, "अंकल, एक छोटी-सी समस्या आ गयी है, जिसे सुलझाने में आप ही हमारी मदद कर सकते हैं। इसी लिए पिताजी ने हमें आपके पास भेजा है।"

"हां बोलो, क्या बात है? हमसे हो सकेगा, तो हम जरूर मदद करेंगे।" शिवकुमार मित्तल ने आश्वासन दिया, तो अनुपम बोला, "अंकल, बात यह है कि विवेक की अपने मां-बाप से लड़ाई हो गयी है। अब तक वह अपनी ससुराल में रह रहा था। लेकिन अब ससुराल से अलग रहना चाहता है। अगर आपके पास कोई खाली कमरा हो, तो कुछ दिन के लिए इसे दे दीजिए। यह अपनी पत्नी के साथ यहां रह लेगा।"

अनुपम की बात सुनकर शिवकुमार मित्तल थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोले, "बेटा, हमारे पास कोई कमरा खाली नहीं है। अलबत्ता गैरेज के ऊपर बनी एनेक्सी जरूर खाली पड़ी है। तुम चाहो तो देख लो। तुम्हारे पापा ने कहा है, तो उनकी बात तो रखनी ही पड़ेगी।"

"नहीं अंकल, अभी हम लोग जा रहे हैं। फिर किसी दिन आयेंगे तो देख लेंगे।" अनुपम बोला। उस दिन वे लोग खाना खाकर वापस चले गये।

अनुपम प्रकाश के पिता का नाम राम प्रकाश था। वह बिक्रीकर विभाग में उपायुक्त थे और उन दिनों मेरठ में तैनात थे। राम प्रकाश और शिवकुमार मित्तल की दोस्ती सन् १९८० में तब हुई थी, जब वे दोनों गाजियाबाद में तैनात थे।

जून १९८० में शिवकुमार मित्तल की साली शिखा सिंघल की शादी थी। मित्तल साहब शादी के समारोह में भाग लेने हापुड़ गये थे। राम प्रकाश जिले के बिक्रीकर उपायुक्त थे और शिखा के पिता व्यापारी। अतः उन्होंने राम प्रकाश को विशेष अनुरोध के साथ शादी में शामिल होने के लिए बुलाया था। शादी के इसी समारोह में मित्तल और राम प्रकाश का परिचय हुआ। बातों के दौरान पता चला कि राम प्रकाश का इकलौता बेटा अनुपम प्रकाश और शिवकुमार मित्तल का बेटा गाजियाबाद के होली चाइल्ड स्कूल में साथ-साथ और एक ही कक्षा में पढ़ते थे।

राम प्रकाश और शिवकुमार मित्तल का एक-दूसरे के घर आना-जाना शुरू हो गया। पत्नियां और बच्चे भी एक-दूसरे के घर आने-जाने लगे। कुछ समय बाद राम प्रकाश का तबादला कानपुर हो गया और शिवकुमार मित्तल का मेरठ। अलग-अलग शहरों में तबादले हो जाने के बाद भी दोनों परिवारों में संपर्क और सम्बन्ध बना रहा।

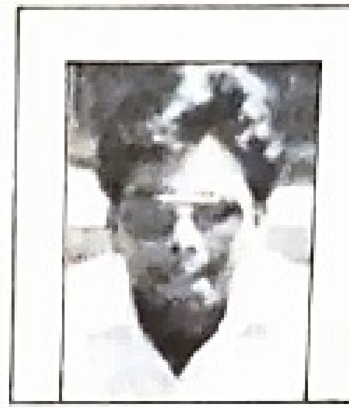
कुछ दिन मेरठ में रहने के बाद शिवकुमार मित्तल का तबादला अलीगढ़ हो गया था और वहां से सन् १९८४ में वह फिर गाजियाबाद लौट आये थे। इसी तरह राम प्रकाश भी कई जिला मुख्यालयों में रहने के बाद मेरठ पहुंच गये थे। तब तक राम प्रकाश और शिवकुमार मित्तल के परिवारों की मुलाकातें काफी कम हो गयी थीं।

३ अक्टूबर १९८८ को अनुपम प्रकाश सालों बाद शिवकुमार मित्तल के घर आया था।

शिवकुमार राजनगर की जिस कोठी में रहते थे, उससे डेढ़ सौ मीटर की दूरी पर ही आर १/३ में उनका आफिस था।



शिवकुमार मित्तल



अनुपम प्रकाश

११ अक्टूबर '८८ को शिवकुमार मित्तल सुबह दस बजे ही अपने आफिस चले गये थे। उनके जाने के लगभग एक घंटा बाद अनीता और सरिता आ गयीं। ये दोनों शिवकुमार मित्तल की छोटी बहन विजयरानी की लड़कियां थीं। उनके पिता श्रीकृष्ण गुप्ता पंजाबी बाग, दिल्ली में रहते थे और फतेहपुरी में बालाजी फाइनेंस कम्पनी के नाम से कम्पनी चलाते थे। २१ वर्षीया अनीता और १६ वर्षीया सरिता, दोनों ही बी०ए० पास थीं। जनवरी १९८८ में अनीता की शादी राजनगर निवासी अगम अग्रवाल से हुई थी, जबकि सरिता अविवाहित थी।

सरिता पिछले कई दिनों से अपनी बहन अनीता के पास रह रही थी। ११ अक्टूबर को सरिता और अनीता को दिल्ली जाना था। अनीता को यह मालूम था कि शलभ दशहरे की छुट्टियों में गाजियाबाद आया हुआ है। दिल्ली लौटने से पहले दोनों बहनें शलभ से मिलना चाहती थीं, इसलिए मामा के घर चली आयी थीं।

लगभग सवा ग्यारह बजे जब शलभ, गौरव, अनीता, सरिता और नीना मित्तल लॉबी में बैठे बात कर रहे थे, तो डोरबेल बजी। नीना ने दरवाजे पर जाकर देखा। अनुपम अपने उन्हीं दोस्तों के साथ आया था, जो तीन अक्टूबर को उसके साथ आये थे।

नीना मित्तल उन तीनों को अंदर ले आयीं और ड्राइंग रूम में बैठाकर चाय पिलायी। जब वे तीनों जाने लगे, तो नीना उन्हें छोड़ने दरवाजे तक गयीं। जाते समय अनुपम बोला, "आण्टी, विवेक अभी दो चार दिन में शिफ्ट कर लेगा। इससे पहले यह और भाभी किसी दिन आकर एनेक्सी देख जाएंगे।" पलभर रुककर अनुपम फिर बोला, "आण्टी, आप लोग कभी मेरठ आइए न।"

"कभी क्यों, हम तो अभी १३ अक्टूबर को मेरठ आ रहे हैं। अपने मम्मी-पापा से कहना, लंच हम उन्हीं के साथ करेंगे।" नीना मित्तल ने कहा तो अनुपम के चेहरे का रंग उड़ गया, शायद इसलिए कि पापा का नाम लेकर उसने जो झूठ बोला था, उसके खुल जाने का डर पैदा हो गया था।

उन लोगों को विदा करके नीना मित्तल अंदर आ गयीं और अनीता तथा सरिता से बातें करने लगीं।

अभी दस मिनट ही गुजरे थे कि दरवाजे की घंटी फिर बजी। नीना मित्तल ने दरवाजे पर जाकर देखा, तो अनुपम अपने दोनों दोस्तों के साथ खड़ा था। नीना मित्तल कुछ पूछतीं, इससे पहले ही अनुपम बोला, "आण्टी, आप एनेक्सी आज ही दिखा दीजिए। खाली एनेक्सी देखने के लिए भाभी क्या आएंगी। परसों विवेक शिफ्ट कर लेगा।"

अनुपम भरोसे का लड़का था। नीना मित्तल उन तीनों को अंदर ले गयीं। इस बार न जाने क्या हुआ कि उन्हें देखते ही दोनों पामेरियन कुत्ते जोर-जोर से भौंकने लगे। इससे पहले जब वे तीनों आये थे, तब दोनों कुत्ते बिल्कुल नहीं भौंके थे। उन्हें भौंकते देख अनुपम बोला, "आण्टी, मुझे कुत्तों से बहुत डर लगता है। आप दस मिनट के लिए इन्हें कमरे में बंद करा दीजिए।"

नीना मित्तल ने गौरव से कहकर दोनों कुत्तों को कमरे में बंद करा दिया। लेकिन इसके बावजूद वे चुप नहीं हुए। नीना मित्तल ने कुत्तों के भौंकने की परवाह नहीं की और एनेक्सी की चाबी लेकर उन तीनों के साथ ऊपर चली गयीं।

वह जब ताला खोलकर एनेक्सी के अंदर पहुंचीं, तो अनुपम और उसके दोनों साथियों ने उन्हें घेर लिया। अनुपम तेवर बदलते हुए बोला, "माल कहां है आण्टी?"

"माल...कैसा माल? क्यों मजाक करते हो?" नीना ने चौंककर पूछा। तभी अनुपम अपनी पैंट के अंदर से लोहे की छड़ निकालते हुए बोला, "हम माल ही लेने आये हैं आण्टी।"

नीना मित्तल अपने बचाव का कोई उपाय कर पातीं, इससे पहले ही अनुपम ने उनके सिर पर छड़ से वार कर दिया। वह चीखते हुए फर्श पर गिरीं, तो अनुपम ने दो-तीन वार और किये। संजय स्वामी और विवेक ने तब तक चाकू निकाल लिये थे। उन्होंने नीना मित्तल पर चाकुओं से वार किये।

लहूलुहान नीना मित्तल को मृत समझकर उन लोगों ने उनके शरीर से सोने के सारे आभूषण उतार लिये। टाप्स तो उन्होंने बेदर्दी से खींचे कि नीना मित्तल के कान फट गये।

ऊपर वारदात करने के बाद सबसे पहले अनुपम नीचे उतरा। उसके हाथ में लोहे की राड उस वक्त भी थी, जिसे उसने दोनों हाथ पीछे करके छुपा रखा था। अनीता, सरिता, शलभ और गौरव उस वक्त भी लॉबी में बैठे बातें कर रहे थे। अनुपम सीढ़ियों से नीचे उतरते ही बोला, "शलभ, आण्टी जी फिसलकर बेहोश हो गयी हैं। जरा उन्हें उठाने में मदद करो।"

शलभ घबराकर दौड़ा। लेकिन जैसे ही वह अनुपम के पास पहुंचा, उसने उसके सिर पर भी राड से भरपूर वार कर दिया। ठीक उसी समय विवेक और संजय सीढ़ियों से नीचे आ गये। उन दोनों के हाथों में खून सने चाकू थे। राड के वार ने शलभ के सिर का कचूमर निकाल दिया था। वह बेहोश होकर वहीं फर्श पर ढेर हो गया।

अनीता, सरिता और गौरव ने यह भयावह दृश्य देखा, तो तीनों की घिग्घी बंध गयी। वे चीख-चिल्ला पाते, इससे पहले उन पर राड और चाकुओं से वार होने लगे। पलभर में ही सरिता और अनीता भी फर्श पर ढेर हो गयीं। गौरव को मौका मिला, तो वह बेडरूम की ओर भागा। अनुपम प्रकाश ने उसका पीछा किया और उसे बेडरूम में ही ठिकाने लगा दिया।

तीनों हत्यारों ने जब सोच लिया कि नीना, सरिता, अनीता, शलभ और गौरव मर गये हैं, तो निश्चिंत होकर आलमारियों की तलाशी लेनी शुरू की।

अभी वे तलाशी ही ले रहे थे कि शलभ को होश आ गया। वह उठकर दरवाजे की ओर भागा। अनुपम ने उसे बाहर निकलते देखा, तो वह चीखा, "विवेक, भागो, शलभ जिंदा है और बाहर भाग गया है।"

आनन-फानन में वे तीनों बाहर की ओर भागे। तब तक शलभ दरवाजे से बाहर निकल गया था। उन तीनों ने उसका पीछा करने की कोशिश की। अभी वे लोग उसके पीछे पन्द्रह-बीस कदम ही दौड़े थे कि उधर से शिवकुमार मित्तल आते दिखाई पड़े।

शलभ ने अपने पापा को आते देखा, तो वह जोरों से चीखा, "पापा, इन लोगों ने हम सबको मारा है। पकड़िए इन्हें।"

शिवकुमार मित्तल उन तीनों के पीछे दौड़े, तो वे डाक बंगले की ओर भाग गये। शिवकुमार मित्तल मधुमेह के रोगी थे। यह इत्तफाक ही था उस दिन वह अपनी दवाई साथ ले जाना भूल गये थे। दवाई लेने ही वह घर आये थे।

शलभ की हालत देख शिवकुमार बुरी तरह घबरा गये थे। वह उसके साथ अंदर पहुंचे, तो अनीता और सरिता लॉबी में और गौरव को बेडरूम में लहूलुहान पाया। नीना मित्तल एनेक्सी में उसी हालत में पड़ी मिलीं।

तब तक शोर सुनकर मित्तल साहब के आफिस के लोग तथा पड़ोसी आ गये थे। आनन-फानन में सभी घायलों को सर्वोदय नर्सिंग होम ले जाया गया। डा० कंसल और डा० मलिक ने घायलों को देखने के बाद बताया कि अनीता और सरिता की मृत्यु हो गयी थी। गौरव और नीना मित्तल की हालत गम्भीर थी। उन्हें तुरंत दिल्ली के सर गंगाराम अस्पताल ले जाना पड़ेगा। शलभ को सर्वोदय नर्सिंग होम में ही भर्ती कर लिया गया।

तुरंत एम्बुलेंस का इंतजाम करके नीना और गौरव को दिल्ली भेजा गया।

दो डाक्टर भी साथ गये।

शिवकुमार मित्तल की ओर से इस मामले की रिपोर्ट थाना कविनगर में दर्ज हुई। रिपोर्ट में अनुपम, विवेक और संजय स्वामी को नामजद किया गया था।

घटना दिन-दहाड़े हुई थी और बहुत गम्भीर थी। अतः वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक उदयन परमार ने इसमें खास दिलचस्पी लेते हुए कविनगर थाना इंचार्ज आर०सी० शर्मा को हिदायत दी कि तीनों मुल्जिम अड़तालीस घंटों के अंदर गिरफ्तार हो जाने चाहिए। आर०सी० शर्मा उसी समय से कार्रवाई में लग गये।

उधर पुलिस केस होने की वजह से नीना मित्तल और गौरव को दिल्ली के अस्पतालों में भर्ती नहीं किया गया। फलस्वरूप समय पर सही चिकित्सा न मिलने के कारण उसी दिन साढ़े छः बजे गौरव की भी मृत्यु हो गयी। बाद में जब पुलिस रिपोर्ट दिल्ली पहुंची, तो बेहोश नीना मित्तल को शाम सात बजे गुरु तेगबहादुर अस्पताल में भर्ती किया जा सका। नीना मित्तल जैसे-तैसे बच तो गयीं, लेकिन अपंग होकर।

अड़तालीस घंटों तक भी जब तीनों में से कोई भी अभियुक्त पुलिस के हाथ नहीं लगा, तो पुलिस ने कोर्ट से आर्डर लेकर १४ अक्टूबर को उनके घरों की कुर्की कर ली। लेकिन कुर्की के बावजूद तीनों में से किसी भी मुल्जिम ने अदालत में आत्मसमर्पण नहीं किया।

समय गुजरता रहा और तीनों हत्यारे खुले घूमते रहे। शिवकुमार मित्तल कभी वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, कभी क्षेत्राधिकारी, तो कभी थाना इंचार्ज से मिलते रहे। आश्वासन सभी ने दिये, लेकिन मुल्जिमों तक हाथ किसी के नहीं पहुंचे।

आर०सी० शर्मा के बाद इस केस की जांच प्रीतम सिंह ने की। उनके बाद आर०एन० शुक्ला ने और फिर रामअवतार शर्मा ने। लेकिन अनुपम, विवेक और संजय स्वामी में से किसी भी अभियुक्त को ये थानेदार ढूंढ नहीं सके। जांच पूरी करके पुलिस ने ६ मार्च '८६ को इस मुकदमे में चार्जशीट लगा दी।

चार्जशीट लगने के बाद भी न तो कोई मुल्जिम अदालत में पेश हुआ और न ही पुलिस ने उनमें से किसी को गिरफ्तार किया।

पुलिस बेशक चुप थी, लेकिन उपायुक्त राम प्रकाश चुप नहीं थे। चुप रहते भी कैसे, इकलौते बेटे का मामला था। शिवकुमार मित्तल के अनुसार, उन्होंने उनके पास समझौते के लिए दस लाख की आफर भी भेज दी थी। लेकिन मित्तल साहब ने साफ कह दिया, "मैं अपने बच्चों की लाशों को दस करोड़ में भी नहीं बेचूंगा। अपनी जमीन-जायदाद बेचकर दस लाख मैं भी दे सकता हूं। तुम अनुपम को मेरे हवाले कर दो।"

राम प्रकाश स्वयं आकर शिवकुमार मित्तल से मिले। उन्होंने मित्तल साहब से कहा, "आपके दिल का दर्द जानता हूं मैं। मुझे यह भी मालूम है कि मेरा लड़का गलत है। पुलिस उसे गोली भी मार दे, तो मुझे कोई दुख न होगा। दुख तो यह है कि सारी इज्जत धूल में मिली, बेटियों की शादियां भी रुकी पड़ी हैं। समझ में नहीं आता, स्थिति को कैसे संभालूं।"

मित्तल साहब समझ गये कि राम प्रकाश क्या कहना चाहते हैं। अतः उन्होंने कह दिया, "अनुपम को पुलिस के हवाले कर दो। इज्जत और स्थिति दोनों संभल जायेंगी।"

लेकिन राम प्रकाश चुपचाप लौट गये। सीधी अंगुली से घी नहीं निकला, तो धमकियों का सिलसिला शुरू हुआ। लेकिन शिवकुमार मित्तल ने हथियार नहीं डाले।

अनुपम, विवेक और संजय स्वामी की गिरफ्तारियों के सिलसिले में शिवकुमार पुलिस उच्चाधिकारियों से निरन्तर मिलते रहते थे। उन्हें अपनी व्यथा-कथा सुनाते रहते थे। लेकिन आश्वासनों के अलावा किसी ने भी उन्हें न्याय दिलाने की कोशिश नहीं की। देखते-देखते तीन साल गुजर गये। इस बीच मित्तल साहब का तबादला देहरादून हो गया था।

इसी बीच उत्तर प्रदेश में सरकार बदली और गाजियाबाद में तेज-तर्रार एवं ईमानदार ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक शैलजाकांत मिश्र की नियुक्ति हुई। मित्तल साहब देहरादून से गाजियाबाद जाकर शैलजाकांत मिश्र से मिले और उन्हें केस की पूरी जानकारी दी।

सारी बातें जानने के बाद मिश्र जी बोले, "आप निश्चिंत होकर घर जायें। समझ लीजिए, आज से कार्रवाई शुरू हो गयी। दस-पन्द्रह दिन में परिणाम आपके सामने आ जायेगा।"

शैलजाकांत मिश्र ने उसी दिन थाना कविनगर के इंचार्ज आर०पी० दुबे को बुलाकर हिदायत दी कि वह जल्दी से जल्दी अनुपम, विवेक और संजय स्वामी को गिरफ्तार करें।

आर०पी० दुबे किसी भी मुल्जिम को गिरफ्तार नहीं कर पाये, पर इतना जरूर हुआ कि अनुपम १८ सितम्बर '८१ को अदालत पर पेश होकर जेल चला गया। उसे सी०जे०एम० आर०एस० यादव की अदालत में पेश कराया था अधिवक्ता परमात्मा शरण गौड़ ने। अदालत ने अनुपम प्रकाश को एक अक्टूबर '८१ तक ज्युडीशियल कस्टडी में मेरठ जेल भेज दिया।

अनुपम अदालत पर पेश होकर कब जेल गया, थाना कविनगर की पुलिस को इसकी भनक तक न लगी। केस के जांच अधिकारी ने उसका कोई बयान दर्ज नहीं किया था। दस दिन जब परमात्मा शरण गौड़ ने अनुपम की जमानत के लिए अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के न्यायालय में प्रार्थनापत्र दिया, तो कविनगर पुलिस को पता चला कि अनुपम प्रकाश अदालत पर पेश होकर जेल जा चुका है।

यह बात जब वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक शैलजाकांत मिश्र को पता चली, तो उन्होंने इस मामले में ढील बरतने के कारण आर०पी० दुबे को लाइन हाजिर कर दिया और उनकी जगह थाना कविनगर का नया इंचार्ज नियुक्त किया किसन सिंह तालान को। उन्हें ही इस मामले की जांच की जिम्मेदारी भी निभानी थी। शैलजाकांत मिश्र ने नगर पुलिस अधीक्षक रामसिंह को निर्देश दिया कि वह इस मामले में पूरी दिलचस्पी लेकर किसन सिंह तालान का दिशा निर्देशन करें।

किसन सिंह ने जब इस केस के अभियुक्तों की फाइल देखी, तो वह यह देखकर ताज्जुब में रह गये कि उस फाइल से न केवल उन तीनों के फोटो गायब थे, बल्कि उनके बारे में और भी बहुत सी महत्वपूर्ण जानकारियां गायब थीं।

इन्हीं सब बातों को लेकर एक अक्टूबर को किसन सिंह ने पुलिस अधीक्षक रामसिंह से विचार-विमर्श किया। उसी दिन अभियुक्त अनुपम का ज्युडीशियल रिमांड खत्म हो रहा था और उसे अदालत पर पेश किया जाना था। रामसिंह ने तालान को निर्देश देते हुए कहा, "आप आज ही अदालत में प्रार्थनापत्र देकर अनुपम को रिमांड पर ले लें। कल और परसों छुट्टी है। अगर आज रिमांड नहीं मिला, तो फिर सोलह दिन गुजर जायेंगे और रिमांड लेने की अवधि खत्म हो जायेगी।"

पुलिस अधीक्षक से बात करके किसन सिंह अदालत पहुंचे। तब तक एक बज गया था। किसन सिंह ने रिमांड के लिए प्रार्थनापत्र दे दिया।

जेल से आने वाले मुल्जिम अधिकांशतः लंच के बाद ही पेश होते हैं। लेकिन उस दिन लंच के बाद भी अनुपम को जेल से नहीं लाया गया। पता चला कि अनुपम को जेल से बुलाने के लिए कोई संदेश ही नहीं भेजा गया था। यह जानकर किसन सिंह चौंके। उस दिन अनुपम के ज्युडीशियल रिमांड की अवधि पूरी हो

(शेष पृष्ठ १२० पर)

अनुपम, विवेक और संजय स्वामी की गिरफ्तारियों के सिलसिले में शिवकुमार पुलिस उच्चाधिकारियों से निरन्तर मिलते रहते थे। उन्हें अपनी व्यथा-कथा सुनाते रहते थे। लेकिन आश्वासनों के अलावा किसी ने भी उन्हें न्याय दिलाने की कोशिश नहीं की। देखते-देखते तीन साल गुजर गये।



अभियुक्त बलविन्दर सिंह

एयर इंडिया के विमान में बम

पुष्कर पुष्प

पहली दिसम्बर की सुबह। एयर इंडिया के बोइंग ७४७ सम्राट अकबर ने जिस समय दिल्ली के इंदिरा गांधी अन्तरराष्ट्रीय विमान पत्तन के तल नं० ४७ को छुआ, उस समय सात बजे थे। मद्रास से रवाना होकर दिल्ली और लंदन होते हुए न्यूयार्क की उड़ान पर निकला विमान अपने निश्चित समय से पौन घंटा बाद दिल्ली पहुंचा था।

दिल्ली से ईंधन-पानी, रास्ते के लिए भोजन और यात्रियों को लेने के बाद उसे आठ बजकर पांच मिनट पर लंदन के लिए उड़ान भरनी थी। पौन घंटा लेट होने की वजह से विमान में जल्दी-जल्दी में ईंधन-पानी भरा गया।

एयर इंडिया के इस बोइंग में मद्रास से कुल ७२ यात्री आये थे। ३२६ देशी-विदेशी यात्रियों की आमद दिल्ली में हुई। इस तरह विमान में ३९८ यात्रियों और १८ कर्मचारियों का सफर निश्चित हो गया।

विमान के उड़ान भरने में पन्द्रह मिनट का समय शेष था। अधिकांश यात्रियों ने अपनी सीटें संभाल ली थीं। विमान में भोजन की व्यवस्था संभालने वाली भारतीय होटल निगम की कम्पनी शेफ एयर की गाड़ी खाने के कण्टेनर लेकर थोड़ी देर से जरूर आयी थी, फिर भी खाने के कण्टेनर समय से विमान में चढ़ा दिये गये थे। शेफ एयर का कैटरिंग इन्चार्ज बलविन्दर सिंह निगाह स्वयं खाने के कण्टेनर लेकर आया था। भोजन कक्ष में कण्टेनर चढ़वाने के बाद वह उन्हें व्यवस्थित कर रहा था। तभी विमान की टंकी ठीक करने आये तकनीशियन एस०डी० ठाकुर की निगाह एक कण्टेनर में रखे कैरीबैग पर पड़ गयी। उस कण्टेनर में खाने की लगभग पचास ट्रे थीं, जिनके बीच में वह

यदि विमान ने उड़ान भर ली होती और बम आकाश मार्ग में फटता, तो पेट्रोल की वजह से विमान में आग लग जाती और ४१६ लोगों की मृत्यु उस अग्नि-ताण्डव में हो जाती

एयर इंडिया का बोइंग ७४७ विमान 'एम्परर अकबर'



कैरीबैग था। एस०डी० ठाकुर को कोई संदेह तो नहीं हुआ, अलबत्ता उस कैरीबैग का वहां रखा होना अजीब-सा लगा। उन्होंने बलविंदर सिंह निगाह से पूछा, "यह कैसा थैला है? आपका है क्या?"

"नहीं, मेरा तो नहीं है," बलविंदर सिंह चौंकते हुए बोला, "यह यहां कैसे आ गया?"

एस०डी० ठाकुर कुछ और बोलते, इससे पहले ही बलविंदर सिंह ने एक अन्य विमान कर्मचारी बिस्से और इंजीनियर अनिल को बुला लिया। कण्टेनर में रखे कैरीबैग को देखकर इंजीनियर अनिल ने शक जाहिर किया, "कहीं बम तो नहीं है? सुरक्षा अधिकारी को बुलाओ।"

बलविंदर सिंह फौरन सुरक्षा अधिकारी भूपेन्द्र सिंह को बुला लाया। कैरीबैग देखकर भूपेन्द्र को भी बम होने का संदेह हुआ। उन्होंने तत्काल कैरीबैग के ऊपर एक गीला तौलिया डलवा दिया।

संभावित खतरे को ध्यान में रखते हुए यात्रियों और कर्मचारियों को नीचे उतरना जरूरी था। बम की खबर से अफरातफरी मच सकती थी। भूपेन्द्र सिंह ने समझदारी से काम लेते हुए यात्रियों से कहा, "कृपया आप लोग पांच मिनट के लिए नीचे उतर आयें। सुरक्षा की वजह से हम लोग यात्री बैगों की एक्सरे जांच कराना चाहते हैं।"

थोड़ी देर में विमान खाली हो गया। तब तक बम निरोधक दस्ते को सूचना भेज दी गयी थी।

बम निरोधक दस्ते ने आते ही कैरीबैग को चेक किया। निःसंदेह उसमें बम था। कैकरभरे टार्च, पेट्रोल और गैस के कण्टेनर बिजली के तारों और साढ़े बारह वोल्ट की बैटरी से बने टाइम डिवाइस रहित उस बम को निरस्त कर दिया गया।

विमान में बम मिलने की सूचना मिलते ही पश्चिमी दिल्ली के अतिरिक्त पुलिस आयुक्त ए०के० सिंह, हवाई अड्डा पुलिस उपायुक्त ए०के० सेठ, अपराध शाखा के उपायुक्त रामाश्रय तिवारी, एयर इंडिया के प्रबन्ध निदेशक योगेश देवेश्वर, अपराध शाखा देवनगर की टीम तथा दूसरी सुरक्षा एजेंसियों के लोग भी विमानतल पर पहुंच गये।

सुरक्षात्मक दृष्टि से विमान की आगे की उड़ान रोक दी गयी और उसे जांच के लिए मुख्य रनवे से दूर की एक पट्टी पर ले जाकर खड़ा कर दिया गया। विदेशी और दिल्ली से बाहर के यात्रियों की परेशानी को देखते हुए उन्हें सेण्टूर, ताज मानसिंह और मौर्या शेरेटन आदि पांच सितारा होटलों में ठहरा दिया गया।

बम विशेषज्ञों ने बोइंग ७४७ में मिले बम की जांच की, तो पता चला कि वह बम न तो ज्यादा शक्तिशाली था और न ही उससे कोई बड़ा विस्फोट होने की संभावना थी। अलबत्ता खाने की गर्मी से वह फट जरूर सकता था। फट जाना तो पेट्रोल की वजह से विमान में आग लग जाती। यदि बम फटने की घटना आकाश मार्ग में घटती, तो कनिष्क दुर्घटना की तरह किसी भी यात्री का बचना नामुमकिन था। उस स्थिति में सौ करोड़ का विमान तो नष्ट होता ही, साथ ही ४१६ लोगों की जान भी जाती।

उस दिन साढ़े आठ बजे की फ्लाइट से प्रधानमंत्री पी०वी० नरसिम्हा राव अपनी कराकस यात्रा से लौटनेवाले थे। सुरक्षात्मक दृष्टि से अन्तरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था की गयी थी। कई सुरक्षा टीमें हवाई अड्डे पर मौजूद थीं। इसके बावजूद बम विमान तक पहुंच गया, यह ताज्जुब की ही बात थी।

स्थिति का विश्लेषण करने से यह बात स्पष्ट हो गयी थी कि विमान तक बम एयर इंडिया या शेफ एयर के कर्मचारियों की मिलीभगत से ही पहुंचा था। इस संदर्भ में सुरक्षा अधिकारी भूपेन्द्र सिंह से रिपोर्ट मांगी गयी, तो उन्होंने तीन कर्मचारियों पर संदेह व्यक्त किया। इन कर्मचारियों में शेफ एयर का कैटरिंग इन्चार्ज बलविंदर सिंह भी शामिल था।

मामले की जांच का काम अपराध शाखा की देवनगर ब्रांच को सौंप दिया गया। इस ब्रांच के सहायक आयुक्त पी०एस० तोमर ने अपनी टीम के साथ जांच शुरू की। शुरुआती दौर में एयर इंडिया और शेफ एयर के कई कर्मचारियों से पूछताछ की गयी, लेकिन कोई नतीजा न निकला।

प्लास्टिक के जिस कैरीबैग में बम रखा मिला था, उस पर आरकेपुरम के सुमन टेलर्स का पता छपा हुआ था। कैरीबैग के ऊपरी छोर पर '३ एस ०५४' लिखा हुआ था। कोड नम्बर जैसी लगनेवाली यह संख्या हाथ से लिखी गयी थी।

बैग पर छपे पते से कोई सूत्र मिलने की संभावना थी। अपराध शाखा के अफसरों ने तुरंत आरकेपुरम के सुमन टेलर्स से संपर्क किया। सुमन टेलर्स ने बताया कि अब से लगभग एक साल पहले तक शेफ एयर की वर्दियां सिलने का अनुबंध उन्हीं के पास था। कैरीबैग के ऊपरी छोर पर लिखी संख्या को देखकर सुमन टेलर्स ने बताया कि '३एस' का मतलब तीन शर्ट है। ०५४ के बारे में उन्होंने केवल इतना ही बताया कि वह शेफ एयर के किसी कर्मचारी का कोड नम्बर होगा।

पूछताछ में सुमन टेलर्स ने यह भी बताया कि शेफ एयर का कर्मचारी बलविंदर सिंह निगाह भी एक साल पहले तक उन्हीं से कपड़े सिलवाता था। सुमन टेलर्स के रेकार्ड से यह बात भी पता चल गयी कि एक वर्ष पूर्व बलविंदर सिंह ने वहां तीन कमीजें एक साथ सिलवायी थीं।

यह जानकारी मिलने से बलविंदर सिंह निगाह संदेह के घेरे में आ गया।

अपराध शाखा के अफसरों ने शेफ एयर के अधिकारियों से पूछताछ की। पता चला कि ०५४ बलविंदर सिंह निगाह का ही कोड नम्बर है। इन बातों से यह स्पष्ट हो गया कि जिस कैरीबैग में बम मिला था, वह बलविंदर सिंह निगाह का ही था।

उसी रात अपराध शाखा ने बलविंदर सिंह को गिरफ्तार कर लिया। उससे सख्ती से पूछताछ की गयी। उसने स्वीकार कर लिया कि विमान में बम उसी ने रखा था। उसने बताया कि वह पिछले छः माह से अपने घर पर बम बनाने का प्रयास कर रहा था और यह बम उसने ही बनाया था।

अपराध शाखा के अफसरों ने बलविंदर सिंह के पश्चिमी दिल्ली, विकासपुरी स्थित घर पर छापा मारा। उसके घर से बम बनाने का सामान तथा कुछ अन्य आपत्तिजनक चीजें बरामद हुईं। पुलिस ने बलविंदर सिंह के विरुद्ध 'टाडा' और तोड़फोड़ अधिनियम के अन्तर्गत केस दर्ज करके उसे हिरासत में ले लिया।

बलविंदर सिंह का परिवार मूलतः जालन्धर का रहनेवाला था। उसके पिता शालिग्राम गृहमंत्रालय में सेक्शन आफिसर रहे थे। शालिग्राम बहुत सालों से दिल्ली में रह रहे थे। उन्होंने अपने पांचों बेटों और दोनों बेटियों को भी दिल्ली में ही पढ़ाया-लिखाया था। उनके तीसरे बेटे बलविंदर सिंह ने सन् १९७९ में दिल्ली के पूसा इंस्टीट्यूट से होटल प्रबन्ध में डिप्लोमा किया था। सन् १९८१ में उसे शेफ एयर में कैटरिंग सुपरवाइजर की नौकरी मिल गयी। दो साल तक शेफ एयर में नौकरी करने के बाद बलविंदर सिंह ने सेण्टूर होटल में नौकरी कर ली। लेकिन वहां एक साल से ज्यादा नहीं रह सका। सन् १९८४ में वह फिर शेफ एयर में लौट आया। इस बार उसे कैटरिंग इन्चार्ज बनाया गया था। शेफ एयर में नौकरी करते हुए ही बलविंदर सिंह ने सन् १९८६ में मधु से प्रेमविवाह किया था। उसकी तीन साल की एक बेटी थी—टीना।

बलविंदर सिंह का सम्बन्ध अवश्य ही किसी लड़ाकू संगठन से होगा और उसी के सहारे उसने विमान में बम प्लाण्ट किया होगा, इस बात की पूरी संभावना थी।

बलविंदर सिंह से पूछताछ की गयी। उसने बदल-बदल कर कई बयान दिये। सबसे पहले उसने बताया कि उसका इरादा विमान या किसी व्यक्ति को क्षति पहुंचाने का नहीं, बल्कि विमान में स्वयं ही बम रखकर और स्वयं ही उसका भण्डाफोड़ करके प्रचार पाने का था। ऐसा वह शेफ एयर के अधिकारियों की निगाह में हीरो बनने के लिए करना चाहता था, जिससे उसे शाबाशी मिले और तरक्की भी हो।

लेकिन अपराध शाखा के अधिकारियों ने उसकी इस बात पर विश्वास नहीं

किया। उससे पूछताछ जारी रही। दूसरी बार बलविंदर सिंह ने बताया कि उसे बम बनाने और विमान में रखने की जिम्मेदारी खालिस्तान लिबरेशन फोर्स की एक महिला जोगिन्दर कौर और उसके साथियों ने सौंपी थी।

बलविंदर के बयान के अनुसार, जोगिन्दर कौर ने इस काम के बदले उसे खालिस्तान लिबरेशन फोर्स का एरिया कमाण्डर बनाने तथा पांच लाख रुपये देने का आश्वासन दिया था। जोगिन्दर कौर कौन है और कहां की रहनेवाली है—इस सम्बन्ध में उसने बताया कि वह पिछले छः महीनों से उसके पास आ रही थी। वह पंजाब की रहनेवाली थी। पता उसे मालूम नहीं।

यह मामला एक महत्वपूर्ण और संवेदनशील जगह से सम्बन्धित था, अतः अपराध शाखा ने हर नजरिये से जांच की, ताकि सच्चाई के साथ-साथ सुरक्षा खामियों का भी पता चल सके।

सन् १९६९ में 'शेफ एयर' का गठन एयर इंडिया के लिए भोजन की व्यवस्था करने के लिए हुआ था। बाद में इस कम्पनी को भारतीय होटल निगम ने अधिगृहीत कर लिया था। शेफ एयर की बम्बई, श्रीनगर, राजगीर (बिहार) और दिल्ली में चार ब्रांच हैं। दिल्ली में इसका मुख्यालय सेण्टूर होटल में था और वहीं पर विमानों में सप्लाई करने के लिए भोजन भी तैयार होता था।

शुरू-शुरू में शेफ एयर से केवल एयर इंडिया के लिए ही भोजन सप्लाई होता था। बाद में इसके अच्छे काम को देखते हुए कुछ विदेशी एयरलाइंस भी शेफ एयर की सेवाएं लेने लगी थीं।

विमानों में सप्लाई होनेवाला भोजन सेण्टूर होटल की रसोई में तैयार होकर शेफ एयर की वैन से हवाई अड्डे जाता था। वैन में खाने के कण्टेनर होटल और एयर इंडिया के सुरक्षा कर्मियों की देखरेख में लादे जाते थे। कण्टेनर लादने के बाद वैन को सील कर दिया जाता था। यह सील हवाई अड्डे पर सुरक्षा कर्मचारियों की मौजूदगी में खोली जाती थी। चेकिंग के बाद खाने के कण्टेनर उसी गाड़ी से विमान तल पर भेजे जाते थे, जहां एक बार फिर चेकिंग होती थी। तीन जगहों पर जांच की प्रक्रिया से गुजरने के बाद ही खाने के कण्टेनर चढ़ाये जाते थे। इतने अवरोधों के बाद भी बलविंदर बम को विमान तक ले जाने में सफल हो गया था। यह आश्चर्य की बात थी।

जांच के दौरान पता चला कि होटल और एयर इंडिया के कर्मचारियों द्वारा जो जांच की जाती थी, वह महज एक औपचारिकता थी। सारा काम आपसी विश्वास पर ही चलता था। इसी लिए बलविंदर को विमान तक बम ले जाने में कोई परेशानी नहीं हुई थी।

३० नवम्बर की रात को कैटरिंग इन्चार्ज बलविंदर सिंह की ड्यूटी थी। वह पिछले कई दिनों से इस ताक में था कि कब मौका मिले। उस दिन ड्यूटी पर आते समय वह घर से पहले से ही तैयार बम कैरीबैग में डालकर ले आया था और उसे चुपचाप कैटरिंग कक्ष में छुपा दिया था।

एक दिसम्बर की सुबह जब बोइंग ७४७ के लिए शेफ एयर की वैन में खाने के कण्टेनर लादे जाने लगे, तो बलविंदर ने मौका देखकर बम वाला कैरीबैग एक कण्टेनर में रख दिया। उस दिन प्रमाणीकरण अधिकारी भी बलविंदर ही था, अतः उसे ऐसा करने में कोई परेशानी नहीं हुई। होटल के सुरक्षा कर्मचारियों ने जब वैन को सील किया, तो कण्टेनरों को चेक करने की कोई आवश्यकता नहीं समझी गयी।

वैन पर सील लगवाने के बाद बलविंदर लोडरों की टीम के साथ शेफ एयर की वैन को एयर पोर्ट ले गया। शेफ एयर के कर्मचारियों के पास एयरपोर्ट पास होते हैं। अतः वहां उनकी कोई खास चेकिंग नहीं होती थी। वैन की सील खोलकर कण्टेनरों को भी ठीक से चेक नहीं किया जाता था। यही वजह थी कि बलविंदर को विमान तक बम वाला कैरीबैग ले जाने में कोई परेशानी नहीं हुई।

बलविंदर अपनी योजना में पूरी तरह सफल हो भी जाता, यदि एस०डी० ठाकुर ने कैरीबैग न देखा होता। जब ठाकुर की नजर कैरीबैग पर पड़ गयी, तो बलविंदर भेद खुलने से घबरा गया और उसने शोर मचाना शुरू कर दिया। यहां तक कि इंजीनियर अनिल और सुरक्षा अधिकारी भूपेन्द्र सिंह को भी वह स्वयं ही बुला लाया। लेकिन इतना सब ड्रामा करने के बाद भी वह संदेह के घेरे में आ ही गया।

पूछताछ के बाद अपराध शाखा ने बलविंदर को तीस हजारी कोर्ट के अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट श्री के०सी० लोहिया की अदालत पर पेश किया। अभियोजन पक्ष के वकील आर०के० खन्ना ने अभियुक्त बलविंदर सिंह के रिमाण्ड के लिए प्रार्थनापत्र देते हुए अदालत से अनुरोध किया कि बलविंदर सिंह ने जो अपराध किया है, उससे ४१६ लोगों की जान जा सकती थी और सौ करोड़ रुपये की कीमत का विमान नष्ट हो सकता था। यदि ऐसा हो जाता, तो एयर इंडिया से लोगों का विश्वास उठ जाता, जिससे भारी विदेशी मुद्रा का नुकसान होता। श्री खन्ना ने अभियुक्त से पूछताछ के लिए अदालत से ४५ दिन का पुलिस कस्टडी रिमाण्ड मांगते हुए कहा कि अभियुक्त का सम्बन्ध किसी गहरी साजिश से हो सकता है, उस स्थिति में उसे दूसरे राज्यों में ले जाने की भी जरूरत पड़ सकती है।

मजिस्ट्रेट महोदय ने अभियोजन पक्ष की दलील को नजर में रखते हुए अभियुक्त बलविंदर सिंह को पन्द्रह दिन के पुलिस कस्टडी रिमाण्ड पर पुलिस को सौंप दिया।

इस बीच एक आपात निर्णय लेकर एयर इंडिया ने अपने विमानों में भोजन आपूर्ति का अनुबन्ध शेफ एयर से खत्म करके ताज कैटरिंग को सौंप दिया है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि कुछ अन्य एयर लाइंस ने भी भोजन आपूर्ति के अपने अनुबन्ध शेफ एयर से समाप्त कर दिये हैं।

यह सब बलविंदर सिंह की वजह से हुआ है। इसी क्रम में एयर इंडिया के सहायक निदेशक (सुरक्षा) एम०पी० बालानी और शेफ एयर के एक सुरक्षा अधिकारी जेड०ए० खान को निलम्बित भी किया गया है।

बहरहाल, भविष्य में ऐसी घटना न हो, इसके लिए सुरक्षा व्यवस्था की खामियों को दूर करना तो जरूरी है ही, साथ ही एयर लाइंस के सुरक्षा विभाग और हवाई अड्डे पर तैनात पुलिस के सुरक्षा कर्मियों में तालमेल भी जरूरी है। ●

मौत यूं भी आती है

हमारे संवाददाता द्वारा



इनकम टैक्स कमिश्नर एस०पी० गोयल

उस रात राउज एवेन्यू के किसी न किसी घर में हादसा होना ही था। गोयल साहब के यहां न होता, तो जिस किसी भी घर में भयंकर तनावग्रस्त अशोक घुस पाता, वहां होता ऐसा ही कोई हादसा

नमक मण्डी, अमृतसर में अपना घर था राजबलदेव का। तीन बेटे थे। लेकिन तीनों ही कसौटी से फिसल गये। दसवीं से आगे कोई नहीं पढ़ पाया। फिर भी दोनों बड़े बेटे कहने में थे। राजबलदेव जानता था कि खाली दिमाग शैतान का घर होता है। सो समय रहते ही दोनों को कपड़े बुनने की खड्डियों पर बैठा दिया। यही धंधा था उसके पास। बेटों के काम से आमदनी बढ़ी। खर्चे के अलावा चार पैसे जुटने भी लगे। खुशहाली भी आयी। धीरे-धीरे जब हालात पर पकड़ मजबूत हो गयी, तो राजबलदेव ने घर में बहू लाकर बड़े बेटे को खूंटे से बांध दिया।

सबसे छोटा बेटा अशोक आवारा निकला। दसवीं पास करने से पहले ही आवारा लड़कों की संगत में पड़कर उसने पढ़ाई से नाता तोड़ लिया था। राजबलदेव ने उसे भी खड्डी की उस जमीन पर बैठाना चाहा, जो पूरे परिवार की रोटी जुटाती थी। लेकिन ऊंचे सपनों की डोर से बंधा अशोक का मन और जिद्दी स्वभाव आड़े आ गये।

राजबलदेव को अपने दूसरे बेटे की गृहस्थी बसानी थी। उसी के लिए पैसा-पैसा जोड़कर पांच हजार रुपये इकट्ठे कर रखे थे। लेकिन शादी कहीं तय हो पाती, इससे पहले ही गाढ़ी कमाई वाले नोटों के बंडल पर अशोक का हाथ पड़ गया।

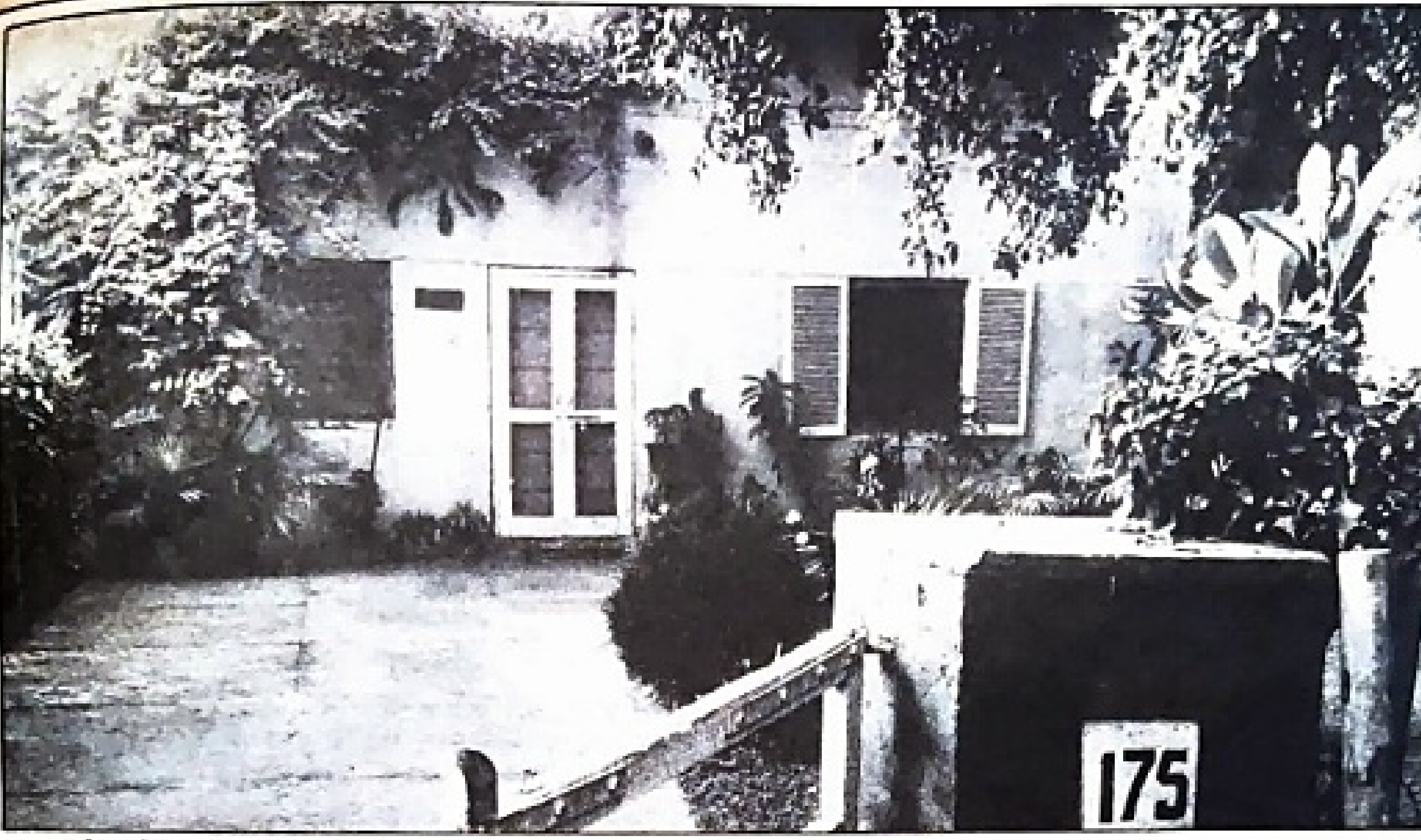
नासमझ मन था और अधकचरी सोच। पांच हजार के नोटों का बंडल अशोक को पचास हजार का सपना दिखा गया। चार अक्षर पढ़ने की बदौलत दिमाग में फालतू के फितूर भी थे। सोचा, रात-दिन बाप-भाइयों की झिड़कियां सुनने के बजाय कहीं दूर जाकर पांच हजार से व्यापार किया जाये, तो दस-बीस हजार बनते देर नहीं लगेगी। फिर पांच हजार लौटा देंगे और भाई की शादी में हजार-दो हजार पल्ले से भी खर्च करेंगे। पैसा होगा, तो सब इज्जत करेंगे।

नमक मण्डी में ही अशोक का एक दोस्त रहता था बलदेव राज। वह भी उसी की तरह आवारा और सपनों की उड़ान पर जीने वाला युवक था। अशोक ने बलदेव राज को नोटों की गड्डी दिखाकर पटाया, तो वह उसकी छाया बनने को तैयार हो गया। दोनों ने उसी दिन घर छोड़ दिया। यह मई '९१ की बात है।

बलदेव राज और अशोक ने अमृतसर से गाड़ी पकड़ी और लुधियाना पहुंचे। दो दिन लुधियाना में उन्होंने इधर-उधर निगाह दौड़ायी। तय हुआ कि केले का व्यापार किया जाये। तीसरे दिन से पुरानी मण्डी में खरीद-फरोख्त का काम शुरू हो गया। दोनों ही नये खिलाड़ी थे, व्यापार का तजुर्बा रत्ती भर नहीं था। शुरुआती दौर में मुनाफा तो नहीं हुआ, लेकिन नुकसान से भी बचे रहे। दिन भर की भागदौड़ और हो-हल्ले के बाद पांच हजार की रकम कभी खर्चे के पैसे दे देती, तो कभी मूल भी घट जाता।

इसे अपनी अनुभवहीनता का नतीजा मानकर कल के भरोसे अशोक और बलदेव राज केले का व्यापार करते रहे। वे थोक में केला खरीदकर आढ़तियों को बेचते। रात को किसी आढ़त में ही पड़कर सो जाते। खाना-पीना बाजार में चलता। खाली समय गुजारने और रहने के लिए आढ़तों में जगह की कोई कमी नहीं थी।

देखते-देखते पांच महीने बीत गये। इन पांच महीनों में अशोक की पांच हजार की रकम टूटते-टूटते मात्र १८०० रुपये रह गयी। पांच महीने



राजन एवेन्यू स्थित गोयल की सरकारी कोठी

घर से दूर रहने के कारण अशोक का मन एक तो पहले ही दुखी था, रकम डूबने से वह और भी परेशान रहने लगा। नोट बटोरने के सपने टूट बिखर गये थे। बची थी तो केवल आत्मग्लानि, जिसे लेकर वह घर लौटना नहीं चाहता था।

इन्हीं हालात में एक दिन अशोक ने बलदेव राज से कहा, "लुधियाना हमें फला नहीं है। चलो दिल्ली चलते हैं, वहीं कुछ करेंगे। सुना है, दिल्ली में बड़ा पैसा है।"

बलदेव राज ने भी दिल्ली के बारे में बहुत सारी बातें सुनी थीं। उसने हां कर दी। अशोक और बलदेव राज ने बचे हुए १८ सौ रुपये जेब में डाले और दिल्ली चले आये। यह पिछले सितम्बर की बात है।

दिल्ली में दोनों नये थे, अतः शुरू के तीन-चार दिन रेलवे स्टेशन के मुसाफिरखाने में ही गुजारे। उन्होंने दिल्ली में रहने का फैसला कर लिया। सबसे पहले रहने के लिए मकान की तलाश हुई। दिल्ली के गावड़ी गांव में डेढ़ सौ रुपये महीना पर कमरा मिल गया। चारपाई-बिस्तर से लेकर खाना पकाने के बर्तन तक खरीदना पड़ा। कमरे का किराया चुकाने और जरूरत का सामान खरीदने में हजार रुपये और निकल गये। शेष जो सात-आठ सौ रुपये बचे, उनमें से भी काफी रुपये पहले महीने में ही खर्च हो गये।

दिल्ली की सड़कों पर महीना भर धक्के खाने के बाद भी बलदेव राज और अशोक कोई काम न ढूंढ़ सके। जेब जवाब देने लगी, तो मजबूर होकर बलदेव राज ने रिक्शा चलाना शुरू कर दिया। उसने अशोक से भी कहा कि जब तक कोई रास्ता न निकले, तब तक वह भी रिक्शा पकड़ ले। लेकिन अशोक को मेहनत-मजदूरी के कामों से सख्त नफरत थी। उसने इनकार कर दिया।

बलदेव राज सुबह से शाम तक रिक्शा चलाता और अशोक कमरे में पड़ा रहता। इस बात को लेकर दोनों में कई बार कहा-सुनी भी हुई। बलदेव राज जब भी कुछ कहता, अशोक क्रोध से भन्ना उठता। अन्ततः बलदेव को चुप रह जाना पड़ता।

पन्द्रह दिन और गुजर गये उन लोगों को दिल्ली आये। जेब की रकम सब खत्म हो गयी थी। रोटी-पानी का जुगाड़ भी बलदेव राज की रिक्शा की कमाई से चल रहा था।

९ नवम्बर की सुबह जब बलदेव काम पर जाने लगा, तो उसने अशोक से कहा, "इस तरह खाली पड़े-पड़े जिंदगी चलनेवाली नहीं है। अगर काम नहीं कर सकते, तो तुम्हें घर लौट जाना चाहिए। मैं कब तक तुम्हारा बोझ उठा सकता हूं।?"

बलदेव की बात सुनकर अशोक ताव खाते हुए बोला, "तुम्हारे चक्कर में मैं बरबाद हो गया। अकेले कोई काम किया होता, तो इस तरह पैसा कभी न डूबता। खैर, जो हुआ, सो हुआ। कौन कहता है, मैं कुछ नहीं कर सकता?"

"कर सकते हो, तो करते क्यों नहीं? क्या जरूरत है सारे दिन कमरे में खाली पड़े रहने की?" बलदेव ने कहा, तो अशोक का पारा और भी चढ़ गया। उसने आंखें तरेर कर पूछा, "देखना चाहते हो, मैं क्या कर सकता हूं?"

"मुझे उस दिन का इंतजार रहेगा।" कहते हुए बलदेव बाहर जाने लगा, तो अशोक पीछे से चीखते हुए बोला, "अगले चौबीस घंटों में देख लेना मेरा करिश्मा। खुद पता चल जायेगा कि मैं क्या कर सकता हूं।"

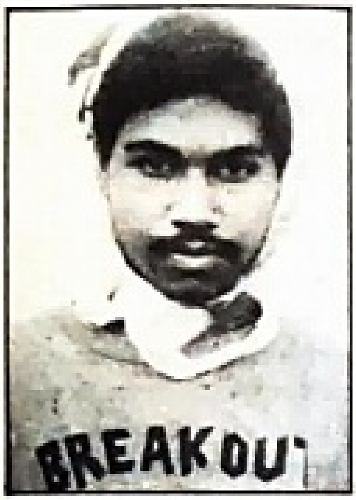
बलदेव ने उसकी बातों पर कोई खास ध्यान नहीं दिया और रिक्शा चलाने चला गया। अशोक तनाव में तो महीनों से था ही, बलदेव की बातों ने उसका गुस्सा और भी अधिक भड़का दिया। कमरे पर अकेला पड़ा वह दोपहर तक सोचता रहा कि क्या करे। वह ज्यों-ज्यों सोचता गया, तनाव बढ़ता गया। उसी तनाव में उसने ब्लेड लेकर बलदेव के और अपने सारे कपड़े काट डाले। इससे भी जब उसका तनाव कम नहीं हुआ, तो वह कमरे में रखे डेढ़ सौ रुपये जेब में डालकर बाहर निकल गया।

अशोक ने गावड़ी से लाल किले की बस पकड़ी। लाल किले पर उतरकर वह पैदल जमुना बाजार स्थित हनुमान मंदिर की ओर निकल गया। हनुमान मंदिर पर एक सज्जन भिखारियों को खाना खिला रहे थे। उसने भी उन सज्जन से पूड़ी-सब्जी लेकर खायी और कश्मीरी गेट की ओर से घूमते हुए फिर लाल किला आ गया।

लाल किला के सामने ही चांदनी चौक बाजार है। दिन छुपने तक अशोक चांदनी चौक में घूमता रहा। जब दिन छिप गया, तो वह गुरुद्वारा सीसगंज पहुंचा। गुरुद्वारे के पास स्थित खालसा भण्डार पर उसने दो खंजर पसंद किये। बेल्ट में फिट रहने-

वाले ये दोनों खंजर १४० रुपये के थे। जब अशोक पैसे चुकाने लगा, तो दुकानदार सरदारजी ने उससे पूछा कि वह दो खंजरों का क्या करेगा? इस पर अशोक ने बताया कि उसके भाई की शादी है, उसी के लिए वह दो खंजर खरीद रहा है। सरदारजी को १४० रुपये का बिल चुकाकर अशोक ने दोनों खंजर बेल्ट में लगाये और पैदल ही दरियागंज की ओर चल दिया। तब तक अंधेरा घिर आया था।

दरियागंज से आगे जयप्रकाश नारायण अस्पताल पहुंचकर अशोक ने एक दुकान पर बैठकर चाय पी। आधा घंटा आराम किया। फिर वह आगे निकल गया पैदल ही।



अभियुक्त अशोक कुमार

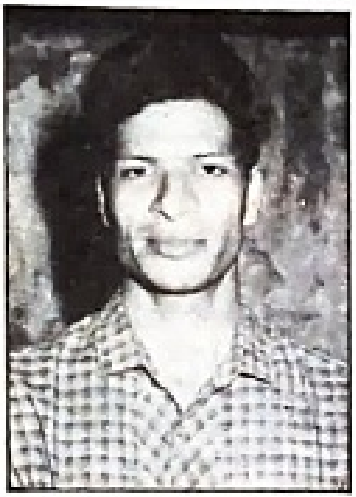
दरअसल अशोक को किसी ने बताया था कि नई दिल्ली इलाके में बड़े-बड़े अमीर लोग रहते हैं। एक-एक कोठी में कई-कई लाख का माल तिजोरियों में रखा रहता है। इसी बात को ध्यान में रखकर अशोक ने नई दिल्ली की किसी कोठी को निशाना बनाने का निश्चय किया था।

जयप्रकाश नारायण अस्पताल से कमला मार्केट, गोल चक्कर के पास से होते हुए अशोक पैदल ही राउज एवेन्यू, आईटीओ रोड पर पहुंचा और सड़क के किनारे-किनारे आईटीओ की ओर चल दिया। संयोग से उस दिन आसमान में बादल छाये हुए थे और हलकी-हलकी बूंदाबांदी हो रही थी।

आईटीओ चौराहे से मात्र आधा फर्लांग की दूरी पर स्थित राउज एवेन्यू में पहुंचा, तब रात के ग्यारह बज गये थे और सड़कों पर यातायात काफी कम हो गया था।

अशोक ने दो-तीन कोठियों में घुसने की कोशिश की, लेकिन कहीं कुत्तों के कारण, तो कहीं सुरक्षित गेट के कारण वह अंदर नहीं घुस सका।

राउज एवेन्यू की कोठी नं० १७५ का दरवाजा उस समय तक खुला हुआ था। उस कोठी में घुसना भी आसान था। मौका देखकर अशोक अंदर घुसा और लॉन से गुजरकर कोठी के पीछे की ओर निकल गया। पीछे की ओर सर्वेंट क्वार्टर थे और उसमें लाइट जल रही थी। उधर पकड़े जाने का भय था। अशोक ने घबराकर जल्दी-जल्दी में छुपने का स्थान खोजा, तो उसे कोठी के एक


अशोक को पकड़नेवाला सत्यवान

बाथरूम का बाहरी दरवाजा खुला मिल गया। जल्दी से वह उसी बाथरूम में जा छुपा और अंदर से कुण्डी चढ़ा ली। उस बाथरूम में भीतरी दरवाजा था, जो बेडरूम की ओर से बंद था। इसलिए अशोक अंदर नहीं जा सका था।

इस कोठी में इनकम टैक्स कमिश्नर एस० पी० गोयल का निवास था। इस कोठी में वह अपनी पत्नी राधा गोयल, बेटे मानवेन्द्र गोयल और बेटी टीनू के साथ सन् १९८४ से रह रहे थे। कोठी में कुल मिलाकर छह कमरे थे, जिनमें गोयल साहब का परिवार रहता था। आगे और पीछे लॉन था। पीछेवाले लॉन के पास तीन सर्वेंट क्वार्टर थे, जिनमें कोठी के नौकरों सत्यवान, बुद्धिसिंह और विवेक के परिवार रहते थे।

गोयल का इक्कीस वर्षीय बेटा मानवेन्द्र उन दिनों कानपुर में था।

उस दिन गोयल साहब एक पार्टी से रात ग्यारह बजे लौटे थे। एक दोस्त की कार उन्हें कोठी के सामने छोड़ गयी थी। गोयल दंपति को जल्दी सोने की आदत थी। अतः आते ही वह कपड़े बदलकर सो गये। गोयल दंपति उसी बेडरूम में सोये थे, जिससे लगे बाथरूम में अशोक छुपा बैठा था। उनकी बेटी गिरिजा उर्फ टीनू दूसरे बेडरूम में सोयी हुई थी।

रात में अशोक बड़ी देर तक बेडरूम की तरफ का दरवाजा खुलने का इंतजार करता रहा। लेकिन जब दरवाजा नहीं खुला, तो वह बाथरूम के कोने में ही बैठा-बैठा सो गया।

सुबह छह बजे गोयल साहब की आंख खुली। उन्होंने पत्नी राधा को जगाया और चाय बनाने को कहा। राधा हमेशा दूसरे कमरे का बाथरूम इस्तेमाल करती थीं। टायलेट जाने के बाद राधा गोयल ने अभी चाय का पानी चढ़ाया ही था कि उनके कानों में गोयल साहब के चीखने की आवाजें पड़ीं।

गोयल साहब की आंखों की रोशनी कुछ कम थी। राधा गोयल ने सोचा कि वह बाथरूम में फिसलकर गिर गये होंगे। वह चाय का पानी छोड़कर दौड़ी-दौड़ी बेडरूम में पहुंचीं। उस समय लाइट गयी हुई थी, लेकिन सुबह की हलकी रोशनी बेडरूम में आने लगी थी। उसी रोशनी में राधा गोयल ने बाथरूम के खुले दरवाजे में झांका, तो गोयल साहब फर्श पर पड़े दिखाई दिये। उस समय उनके मुंह से हलकी-हलकी अजीब-सी आवाजें निकल रही थीं। राधा गोयल बाथरूम में घुसने लगीं, तभी अशोक ने उन पर भी हमला कर दिया। राधा गोयल ने अशोक से उलझने की कोशिश की, तो उसने उनके भी गले और हाथों पर खंजरों से वार किये।

मम्मी-पापा की चीखें सुनकर दस वर्षीया गिरिजा की नींद टूट गयी। वह बेडरूम की ओर न जाकर सीधे सर्वेंट क्वार्टरों की ओर भागी। उसने सत्यवान को जगाकर बताया कि पापा बाथरूम में गिर गये हैं, उन्हें चोट लग गयी है। सत्यवान बुद्धिसिंह और विवेक को पुकारते हुए कोठी की ओर भागा। वह बेडरूम में पहुंचा, तो अशोक राधा गोयल से उलझा हुआ था। सत्यवान को देख वह बाथरूम से होता हुआ पीछे के दरवाजे से भाग निकला। सत्यवान ने उसका पीछा किया और कोठी के मुख्य दरवाजे के पास दबोच लिया।

अशोक ने सत्यवान पर भी खंजर से वार करने की कोशिश की, लेकिन पकड़ मजबूत होने के कारण वह सफल न हो सका। अपनी इस असफलता से खीझकर उसने सत्यवान को एक-दो जगह दांतों से काटा भी। लेकिन सत्यवान ने उसे नहीं छोड़ा। तब तक बुद्धिसिंह और विवेक भी आ गये थे। बुद्धिसिंह के हाथ में डंडा था। उसने अशोक के सिर में डंडा मारा। इससे उसका सिर घायल हो गया और उसने विरोध करना छोड़ दिया। उसके शांत होते ही सत्यवान, बुद्धिसिंह और विवेक ने उसे रस्सियों से बांधकर लॉन में डाल दिया।

शोर-शराबे की आवाज सुनकर पड़ोस की कोठी में रहनेवाले जैदी साहब जाग गये थे। उन्हें घटना की जानकारी मिली, तो उन्होंने पुलिस कंट्रोल रूम को फोन किया, जहां से यह सूचना थाना इन्द्रप्रस्थ इस्टेट पहुंची। थाना प्रभारी मजहर हुसैन दल-बल के साथ घटनास्थल पर आ पहुंचे। उन्होंने घायल एस० पी० गोयल, राधा गोयल और अशोक को जयप्रकाश नारायण अस्पताल भिजवाया। अशोक के पास से मिले दोनों खंजर पुलिस ने अपने कब्जे में ले लिये।

गोयल साहब बहुत बुरी तरह से जख्मी थे। उनके गले, हाथों और छाती पर खंजर के बीसों घाव थे। डाक्टरों ने उन्हें देखते ही मृत घोषित कर दिया। अशोक के सिर पर पट्टियां बंधवाकर पुलिस ने उसे हिरासत में ले लिया, जबकि राधा गोयल को अस्पताल में भर्ती करना पड़ा।

थाना इन्द्रप्रस्थ इस्टेट की पुलिस ने अशोक के विरुद्ध भा० दं० वि० की धारा ३०२/३०७/४६० के अन्तर्गत केस दर्ज करके जांच शुरू की। मध्य जिला के अतिरिक्त पुलिस उपायुक्त दीपक मिश्रा की मौजूदगी में अशोक से पूछताछ शुरू हुई। लेकिन वह चुप्पी साधे बैठा रहा।

अशोक के चेहरे पर दुख या पश्चाताप का कोई भाव नहीं था। उसने पुलिस को अपना नाम और अमृतसर का पता तो बता दिया था, लेकिन घटना के बारे में कुछ नहीं बताया। उसकी चुप्पी से पुलिस को संदेह हुआ कि कहीं उसका सम्बन्ध किसी डाकू संगठन से तो नहीं है। पुलिस की इस आशंका के दो कारण थे। एक तो यह कि हत्या इनकम टैक्स कमिश्नर की हुई थी, जो अमृतसर में भी तैनात रहे थे। दूसरे गोयल साहब की हत्या के पीछे हत्यारे का कोई भी उद्देश्य नजर नहीं आ रहा था। लेकिन अशोक से थोड़ी और पूछताछ के बाद पुलिस की यह धारणा बदल गयी।

पुलिस ने उसे तीस हजारी अदालत के मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट श्री नेपाल सिंह की अदालत पर पेश करके एक दिन के लिए जयप्रकाश नारायण अस्पताल पुलिस चौकी के इन्चार्ज ईश्वर सिंह को सौंप दिया गया। तब तक अशोक काफी सामान्य हो गया था।

ईश्वर सिंह ने अशोक से अपने ढंग से पूछताछ की, तो उसने सच उगल दिया। गावड़ी स्थित अपने कमरे से राउज एवेन्यू स्थित कोठी नं० १७५ तक पहुंचने का विवरण बताते हुए उसने आगे बताया, "बाथरूम में घुसने के बाद मैं यह सोचकर एक कोने में बैठ गया था कि बेडरूम की ओर से कोई दरवाजा खोलेगा, तो मैं उस पर हमला करके अंदर घुस जाऊंगा और मार-काट करके मनमानी लूटपाट करूंगा। यह सब सोचते हुए मुझे इस बात का जरा भी खयाल नहीं आया कि शोर मचा, या किसी ने मुझे पकड़ा, तो मैं कैसे बचाव करूंगा। मेरा उद्देश्य लूटपाट करना था। पूरे समय इसी के बारे में सोचता रहा था।

"रात को बेडरूम में आहटें तो सुनाई दीं, लेकिन उधर से दरवाजा किसी ने नहीं खोला। मैं बाथरूम के कोने में बैठा था। बैठे-बैठे न जाने कब मुझे नींद आ गयी। सुबह जब गोयल साहब बाथरूम में घुसे, तो बेडरूम और बाथरूम दोनों में ही अंधेरा था। मैं तब भी सो रहा था। अंधेरे की वजह से अचानक गोयल साहब मुझसे टकराये और मेरे ऊपर गिर पड़े। पल भर के लिए मैं घबरा गया। खुला खंजर पहले से ही मेरे पास रखा था। घबराकर मैंने खंजर उठाया और गोयल साहब की गर्दन पर चला दिया। एक बार हाथ चला, तो फिर चलता ही गया। यहां तक कि मिसेज गोयल आयीं, तो भी मैंने हाथ नहीं रोका।"

इनकम टैक्स कमिश्नर एस० पी० गोयल की हत्या का रहस्य खुल गया था। पूछताछ के बाद ईश्वर सिंह ने अभियुक्त अशोक को अदालत पर पेश करके जेल भेज दिया।

पचपन वर्षीय इनकम टैक्स कमिश्नर एस० पी० गोयल सन् १९६४ के बैच के आईआरएस थे। सन् १९६९ में राधा गोयल से उनकी शादी हुई थी। मूलतः वे संगरूर के रहनेवाले थे।

गोयल साहब का पूरा परिवार सात्विक विचारों का था। उनकी किसी से कोई दुश्मनी नहीं थी। सन् १९७९ से पहले भी गोयल साहब दिल्ली में रहे थे। बाद में वह पांच साल अमृतसर में रहे। उसके बाद सन् १९८४ में वह फिर दिल्ली आ गये थे।

अचानक आयी इस बेतुकी मौत ने गोयल साहब के परिवार को जो दर्द दिया है, उसे तो वह जैसे-तैसे सहेंगे ही, लेकिन अशोक को क्या मिला? अपनी ही गलती और बेवकूफी से उसे जो तनाव पैदा हुआ, उसके जुनून में उसने एक शांत-संभ्रांत परिवार को तो हृदयविदारक दुख दिया ही, साथ ही अपना जीवन भी नष्ट कर लिया।

उस रात राउज एवेन्यू के किसी न किसी घर में हादसा होना ही था। गोयल साहब के यहां न होता, तो जिस किसी भी घर में भयंकर तनाव-ग्रस्त अशोक घुस पाता, वहां होता ऐसा ही कोई हादसा। ●



अमेरिका के अंकल सैम

अमेरिका में उन्नीसवीं शताब्दी में दो भाई थे, सैमुअल विल्सन और एबनेजेर विल्सन। न्यूयार्क में इनकी एक मीट पैकिंग कम्पनी थी। इनको अपनी इस कम्पनी पर बेहद नाज था। ये दोनों यह दम भरते थे कि ये एक दिन में १५० पशुओं का वध करके उनके मांस को पैक कर सकते हैं।

१८१२ में अमेरिका और ब्रिटेन के बीच युद्ध छिड़ गया। इन दिनों आत्मविश्वासी भाइयों ने सैनिकों के लिए मांस की आपूर्ति का ठेका लेने का प्रयास किया और इसमें इन्हें सफलता भी मिल गयी। वे लकड़ी के पीपों में गोमांस और सुअर के मांस को पैक करके मोर्चे पर भेजने लगे।

सैमुअल विल्सन सुखी और प्रसन्न व्यक्ति था। वह खुशमिजाज था। वह अपने सफेद बालों के अयाल और हाई टाप हैट के कारण किसी भी भीड़ को आकर्षित कर लेता था। वह लोकप्रिय हो गया था। हर व्यक्ति उसे अंकल सैम के नाम से पुकारता था। वह अपने दर्शकों को अपनी फैक्ट्री दिखाकर बेहद खुश होता था। वह उन्हें यह दिखाना चाहता था कि वह मोर्चे पर डटे हुए जवानों के लिए क्या कर रहा है।

एक दिन उसकी फैक्ट्री को घूम कर देखनेवाले एक दर्शक ने देखा कि हर बैरल पर ई०ए०यू०एस० संकेताक्षर की मुहर लगी हुई है। इन संकेताक्षरों का तात्पर्य गवर्नमेंट कांट्रैक्टर एलबर्ट एण्डरसन और युनाइटेड स्टेट्स था। वह दर्शक संकेताक्षरों का पूर्ण अर्थ समझ न पाया। उसने वहां काम कर रहे एक मजदूर से पूछा, "भाई, इन संकेताक्षरों से क्या तात्पर्य है?" उस मजदूर ने उत्तर दिया, "मैं इनका पूर्ण रूप तो नहीं जानता किंतु हो सकता है कि इनका तात्पर्य एलबर्ट एण्डरसन और अंकल सैम से हो।"

यह एक ऐसा विनोद था, जो अपना काम कर गया। दर्शकों ने इसे अपने-अपने घरों के आस-पास फैला दिया। फर्म के जो कर्मी फौज में भर्ती हुए, उन्होंने इसे वहां भी प्रचारित कर दिया। व्यंग्य चित्रकारों ने १८३० के दशक में इससे परिकल्पना ग्रहण की। यद्यपि स्वयं अंकल सैम की १८५४ में मृत्यु हो गयी, तथापि अमेरिकी संसद ने अन्ततः राष्ट्र के हृदय में इसे स्थायी रूप से प्रतिष्ठित किया। १८६१ में एक प्रस्ताव पारित करके सैमुअल विल्सन को संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतीक के रूप में मान्यता दे दी। ●

शक की आंधी

—हमारे संवाददाता द्वारा

शक की आंधी ने जहां हलीमा को अनन्त में उड़ा दिया, वहीं अपने मां-बाप का इकलौता बेटा आलमगीर उस आंधी की धूल फांक रहा है



हलीमा बेगम

हलीमा बेगम टायलेट से लौटी, तो अपनी सीट पर किसी और को बैठी देख चौंक गयी। उसकी सीट पर जो महिला बैठी थी, उसकी उम्र तीस के आसपास थी। बदन छरहरा था और चेहरा खूबसूरत। वह बुर्का तो पहने थी पर नकाब बेतरतीबी से सिर के पीछे फेंक रखा था। आलमगीर उसके साथ बड़ी बेतकल्लुफी से बातें कर रहा था। दोनों की बातों से लग रहा था, जैसे वे पुराने वाकिफ हों।

अपने शौहर आलमगीर को एक अनजान औरत के साथ मजे से बतियाते देख हलीमा का तन-मन जल गया। यह वही औरत थी, जो बंबई से ऊपरवाली सीट पर लेटी आयी थी। गुस्सा हजम न हुआ, तो हलीमा तनकर उसके सामने जा खड़ी हुई। उस वक्त वह यह भी भूल गयी कि रेलगाड़ी के उस डिब्बे में और भी लोग मौजूद हैं।

हलीमा की त्यौरियां चढ़ी देख वह औरत भी चौंकी और आलमगीर भी। उन दोनों में से कोई कुछ बोल पाता, इससे पहले ही हलीमा गुस्से से होंठ काटते हुए उस औरत से बोली, "क्या रेल के डिब्बे को भी रण्डीखाना समझ रखा है? यहां से उठो फौरन... इसी वक्त।"

हलीमा के शब्दों ने तीर नहीं तोप का काम किया। डिब्बे में बैठे सभी असमंजस में रह गये। उस औरत के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं। आलमगीर की आंखों में खून उतर आया। उन दोनों की स्थिति रंगे हाथों पकड़े गये चोर जैसी थी। उन्हें चुप देख हलीमा का साहस और भी बढ़ा। इस बार उसने आलमगीर को निशाना बनाया, "अगर इस लगी-सगी के साथ इतना मजा आ रहा है, तो मुझे क्यों पल्लू से बांधे घूम रहे हो? जाओ इसी के साथ। मेरा पीछा छोड़ो।"

आलमगीर को भी बहुत गुस्सा आया। लेकिन स्थिति को देखते हुए उसने अपने आपको संभाल लिया और हलीमा के चेहरे पर नजरें जमाकर बोला, "इनका नाम नसरीन है। बंबई से ही आ रही हैं। इन्हें भी दिल्ली जाना है। बिना सोचे-समझे तुम्हें ऐसी ओछी और बेबुनियाद बातें नहीं करनी चाहिए।"

"क्या ओछा और क्या बेबुनियाद, यह मैं अच्छी तरह जानती हूं। इससे कहो उठकर अपनी सीट पर जाये।" हलीमा ने उसी ताव के साथ कहा, तो नसरीन भुनभुनाते हुए अपनी सीट पर चली गयी। आलमगीर झुलसकर रह गया।

बात कुछ भी नहीं थी, फिर भी बतंगड़ बन गया। आलमगीर और हलीमा की नई-नई शादी थी। दोनों घूमने-फिरने निकले थे। दिल्ली जाना था। हलीमा शक्की मिजाज की थी। रास्ते में वह टायलेट गयी, तो सीट खाली हो गयी। नसरीन ऊपर की सीट पर लेटे-लेटे ऊब गयी थी। सीट खाली देख वह नीचे की सीट पर आ बैठी। जब नसरीन को यह पता चला कि सहयात्री जोड़ा भी दिल्ली ही जायेगा, तो वह आलमगीर से बातें करने लगी। बातों-बातों में ही उसे पता चला कि आलमगीर कराची का रहनेवाला है। कराची में नसरीन के ताया रहते थे। वह खुद भी एक-दो बार कराची हो आयी थी। कराची की बातें चलीं, तभी

हलीमा लौट आयी थी।

आलमगीर के मन में गुस्से का गुबार उठ रहा था। वह हलीमा को इस ओछी हरकत के लिए उसे सबक सिखाना चाहता था। लेकिन इससे हलीमा बिफर पड़ती और दूसरे यात्रियों के सामने उसकी बेइज्जती कर देती। इसलिए वह अपने गुस्से को चुपचाप पी गया।

इस घटना के बाद न तो हलीमा ने आलमगीर से कोई बात की और न आलमगीर ने उससे। नसरीन भी अपनी सीट से उतरकर नीचे नहीं आयी। दिल्ली तक का बाकी सफर मनहूसियत से भरा रहा।

दिल्ली आकर गाड़ी से उतरने के बाद आलमगीर ने हलीमा से गुस्से में कहा, "तुम इतनी बदजात निकलोगी, मुझे ऐसी उम्मीद नहीं थी। अगर उसकी जगह तुम होती और तुम्हारी जगह वह, तो कैसी लगती तुम्हें ये बातें ?"

"बदजात तुम होगे या वह छिनाल...। मैं तुम्हारी और उसकी तरह नहीं हूं, जो गैरऔरत या मर्द से मुंह से मुंह भिड़ाकर बातें करूं।" हलीमा ने गुस्से में कहा।

आलमगीर का पारा फिर चढ़ गया। लेकिन वह चुप रहा।

रेलवे स्टेशन के बाहर आकर आलमगीर ने आटोरिक्शा लिया। वहां से दोनों नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज स्थित रायल इन गेस्ट-हाउस पहुंचे। तब तक रात के सवा आठ बज गये थे।

गेस्टहाउस के मैनेजर मदन सिंह रावत ने आलमगीर से रजिस्टर में इन्ट्री कराकर कमरा नं० १०७ दे दिया। रावत ने कमरे का किराया १५० रुपये एडवांस में जमा करा लिया। आलमगीर ने रजिस्टर में अपना पता ७/ए इसराइल मुहल्ला, मोची चाल, आर-१७, बंबई-८ लिखा था।

आलमगीर और हलीमा रूम सर्वेंट के साथ कमरा नं० १०७ में चले गये।

जब कमरे में एकांत मिला, तो आलमगीर ने हलीमा को प्यार से समझाया। उसकी गलती का अहसास कराने की कोशिश की। लेकिन हलीमा एक ही बात कहती रही, "मैं तुम जैसे छिछोरे आदमी के



आलमगीर

साथ निभा नहीं सकती। तुम मुझे बंबई वापस छोड़कर कराची चले जाओ।"

हलीमा को किसी भी तरह न मानते देख आलमगीर परेशान होकर बोला, "हम लोग यहां घूमने आये हैं। घूमने का मतलब है, मौज-मस्ती। अगर तुम मेरे साथ ऐसे ही पेश आओगी, तो फिर कैसे काम चलेगा ?"

"हम दोनों ने प्यार में एक-दूसरे के साथ जीने और मरने के वायदे किये थे। वो वायदे मुझे याद हैं, पर तुम भूल गये।" हलीमा पहले जैसे ही और रूखे लहजे में बोली, "जब हमने प्यार की राह पर कदम रखा था, तो मैं तुम्हें जन्नत की हूर नजर आती थी। लेकिन अब मेरे अलावा हर ऐरी-गैरी औरत तुम्हें जन्नत की हूर नजर आती है। जिसे देखा, उसी पर रीझ गये। यही तुम्हारी फितरत है। मैं ऐसे आदमी से कोई रिश्ता नहीं रखना चाहती।"

आलमगीर ने हलीमा को समझाने और उसकी गलतफहमी को दूर करने की पूरी कोशिश की, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला।

उस रात न तो आलमगीर ने खाना खाया और न हलीमा ने। शिकवे-शिकायत के दौर में ही नींद के झोंकों ने दोनों को आगोश में समेटा। सफर की थकान, ऊपर से देर रात तक का जागरण। इसलिए सुबह ही आंखें खुलीं।

हलीमा के अब्बा का नाम था ताजिम अली और आलमगीर के अब्बा का नाम हाजी नूर जमाल। नूर



सब-इंस्पेक्टर राजवीर सिंह

जमाल और ताजिम अली में विभाजन से पहले की दोस्ती थी। देश का बंटवारा उनके दिलों को कभी नहीं बांट पाया। उन दोनों की दोस्ती और प्यार हमेशा बना रहा।

ताजिम अली बांदरा, बंबई की बस्ती मोची चाल के इसरायल मुहल्ले में रहते थे और नूर जमाल पूर्वी कराची की अकबर रोड स्थित शेरशाह कालोनी में। दोनों का मछली का व्यापार था। फर्क था तो केवल इतना कि ताजिम अली का व्यवसाय छोटा था और नूर जमाल का बड़ा। इस व्यवसाय से ताजिम अली केवल अपने बच्चों का पेट पाल पाते थे, जबकि नूर जमाल ने इसी व्यवसाय में लाखों कमाये थे।

ताजिम अली की पांच लड़कियां थीं और एक लड़का। नूर जमाल के चार बच्चे थे—तीन लड़कियां और एक लड़का। नूर जमाल और उनके परिवार के लोग बंबई आते रहते और ताजिम अली व उनके बच्चे कराची जाते रहते।

तीन साल पहले जब ताजिम अली का इन्तकाल हुआ, तब भी नूर जमाल उनके मातम में शामिल होने बंबई आये थे। ताजिम अली की मौत के बाद भी दोनों परिवारों में वैसा ही मेल-जोल बना रहा।

ताजिम की दोनों बड़ी लड़कियां हलीमा और शमीम मामूली पढ़ी-लिखी थीं। हलीमा अप्रैल '८१ में पाकिस्तान गयी। हाजी नूर जमाल के परिवार ने उसका खूब स्वागत-सत्कार किया। हाजी नूर जमाल का इकलौता बेटा आलमगीर जवान हो गया था। इंटर पास करने के बाद उसने अपने अब्बा के व्यापार में हाथ बंटाना शुरू कर दिया था। हलीमा को अपना हमउम्र आलमगीर खूब मन भाया। आलमगीर को भी हलीमा अच्छी लगी। घर-परिवार के लोगों से नजरें बचाकर दोनों ने एक-दूसरे में रुचि लेनी शुरू की।

पाकिस्तान में महिलाओं पर पाबंदियां कुछ ज्यादा ही होती हैं। हलीमा और आलमगीर, दोनों को ही उन पाबंदियों को मानना पड़ा था। इसलिए घर में रहते वे औपचारिक बातों से आगे न बढ़ पाये।

दोनों ही अपने-अपने मन की बात एक-दूसरे से कहने को बेताब थे। उन्होंने मौका खोजना शुरू किया। अंततः एक दिन उनकी मुराद पूरी हो गयी। मौका मिला, तो आलमगीर ने हलीमा का हाथ थामकर दिल का वर्क खोल दिया, "मैं तुम्हें हमसफर बनाना चाहता हूं हलीमा।"

हलीमा को मनमांगी मुराद मिल गयी। उसने आलमगीर के हाथ से अपना हाथ छुड़ाने की कोई कोशिश नहीं की। तनिक लजाते हुए बोली वह, "मैं भी यही चाहती हूं कि राहे-जिंदगी में हम दोनों कदम से कदम मिलाकर चलें।"

उस दिन के बाद आलमगीर और हलीमा की भाव-भंगिमाएं ही बदल गयीं। हलीमा के वापस लौटने से पहले ही कोई फैसला होना जरूरी था। अतः आलमगीर को अपने मन की बात अपने अब्बू से कहनी पड़ी। सुनते ही हाजी नूर जमाल भड़क उठे, "यह मुमकिन नहीं है। मैं तुम्हारे निकाह की बात कराची में ही तय कर चुका हूं। हलीमा इस घर की मेहमान है। उसके बारे में तुमने ऐसा सोच कैसे लिया ?"

आलमगीर ने अपने अब्बू को समझाने की काफी कोशिश की, लेकिन वह नहीं माने। इससे आलमगीर और हलीमा के मन को गहरी चोट पहुंची। आलमगीर हलीमा से वादा कर चुका था। वह अपना वादा तोड़ने के लिए तैयार नहीं था। कोई राह बनती न देख उसने अपने एक दोस्त से बात की। दोस्त बोला, "इश्क सच्चा है, तो निकाह कर डालो। सारा इंतजाम मैं कर देता हूं। तुम दोनों बालिग हो

और अपनी मर्जी से निकाह कर सकते हो। कौन रोकेगा तुम्हें ?"

आलमगीर को यह बात जंच गयी। उसने हलीमा से बात की। वह भी तैयार हो गयी। दोस्त ने काजी से बात की। आलमगीर और हलीमा के रहने का इंतजाम किया। दूसरी कानूनी कार्यवाहियां भी पूरी करायीं। दो-तीन दोस्तों की मौजूदगी में आलमगीर और हलीमा का निकाह हो गया। निकाह के बाद आलमगीर ने अपना आशियाना घर-परिवार से अलग बना लिया। यह मई '८१ की बात है।

हाजी नूर जमाल को पता चला, तो खूब बौखलाये। लेकिन निकाह हो चुका था। वह कुछ भी नहीं कर सकते थे। इकलौता बेटा था। समझौता कर लेने में ही भलाई थी। हाजी साहब ने आलमगीर और हलीमा के निकाह को मंजूरी दे दी और उन्हें घर ले आये।

हलीमा और आलमगीर की मुराद पूरी हो चुकी थी। दोनों खुशी-खुशी गृहस्थी की राह पर बढ़ चले। हलीमा ने बंबई चिट्ठी लिखकर यह खुशखबरी अपने घरवालों को दे दी थी।

अप्रैल से जुलाई तक हलीमा कराची में ही रही। जुलाई के प्रथम सप्ताह में आलमगीर की अम्मी नूरजहां का बंबई जाने का प्रोग्राम बना, तो आलमगीर और हलीमा ने उनके साथ जाने की जिद की। निकाह के बाद हलीमा अपने मायके नहीं आयी थी। अतः नूर जमाल और नूरजहां ने कोई आपत्ति नहीं की।

जुलाई के प्रथम सप्ताह में नूरजहां, आलमगीर और हलीमा बंबई आ गये। बंबई आने के बाद हलीमा और आलमगीर ने खूब सैर-सपाटा किया। पाकिस्तान की पाबंदियोंभरी जिंदगी की तुलना में आलमगीर को बंबई का उन्मुक्त वातावरण बहुत अच्छा लगा।

आलमगीर की अम्मी नूरजहां पन्द्रह दिन बंबई में रह कर कराची वापस लौट गयीं। हलीमा और आलमगीर बंबई में ही रुक गये।

बंबई में कुछ दिन गुजारने के बाद हलीमा ने महसूस किया कि आलमगीर की निगाहें सही नहीं हैं। उसे उसके अलावा अब हर लड़की जन्नत की हूर नजर आने लगी है। बाहर की लड़कियों के अलावा वह उसकी बहन पर भी डोरे डालने की कोशिश करने लगा है। आलमगीर की इन हरकतों से हलीमा बौखला गयी और बात-बात में उस पर शक करने लगी। उसने एक-दो बार इस बारे में आलमगीर से कहा भी। आलमगीर ने उसे एक ही जवाब दिया, "यह सब तुम्हारे मन के वहम हैं। मेरे लिए तुम ही सब कुछ हो। तुम्हारी जैसी खूबसूरत बीवी के होते मैं क्यों किसी से नजरें लड़ाने लगा ?"

लेकिन हलीमा के मन में जो शक की गांठ बनी, वह आलमगीर की बातों से खुल नहीं सकी। उसे आलमगीर नंबर एक का लंपट और चरित्रहीन नजर आने लगा।

जुलाई से सितंबर तक हलीमा और आलमगीर बंबई में ही रहे। अक्तूबर में उन दोनों को कराची लौटना था। वापस लौटने से पहले आलमगीर दिल्ली घूमना चाहता था। उसने अपने मन की बात हलीमा से कही, तो वह भी दिल्ली चलने के लिए तैयार हो गयी।

१७ सितंबर को हलीमा और आलमगीर बंबई से दिल्ली के लिए रवाना हुए। जब वे दोनों दिल्ली जा रहे थे, तो रास्ते में नसरीनवाली घटना घट गयी थी।

१९ सितंबर की सुबह जब आलमगीर सोकर उठा, तो साढ़े आठ बज चुके थे। हलीमा को जगाने के बाद वह नहाने-धोने में लग गया। नहा-धोकर तैयार होने के बाद आलमगीर हलीमा से बोला, "मैं नाश्ता लेने बाहर जा रहा हूं। तब तक तुम नहा लो।"

गेस्टहाउस में खाने-पीने और नाश्ते का कोई इंतजाम न था। खाने-पीने की चीजें या तो वेटरों से मंगानी पड़ती थीं, या फिर स्वयं बाहर जाना पड़ता था।

आलमगीर आधे घंटे में नाश्ता लेकर लौटा। उसके बाद वह सवा दस बजे तक हलीमा के साथ कमरे में रहा। लगभग सवा दस बजे आलमगीर नीचे रिसेप्शन पर आया। उस समय उसके हाथ में दो बैग थे। उसने मैनेजर मदन सिंह रावत से कहा, "मैं यह सामान पहुंचाने पान मण्डी जा रहा हूं। एक-डेढ़ घंटे बाद लौटूंगा। मेरी बीवी सो रही है। वेटर को हिदायत कर दें कि कोई उन्हें डिस्टर्ब न करे।"

दोनों थैले लिये आलमगीर गेस्ट-हाउस से बाहर निकल गया। आटोरिक्शा पकड़कर वह सीधे नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पहुंचा। रेलवे स्टेशन से उसने अपनी ससुराल में बंबई फोन किया। फोन रिसीव किया उसकी साली शमीम ने। आलमगीर ने शमीम को बताया, "डीटीसी की बस के नीचे आ जाने से हलीमा की मौत हो गयी है। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि क्या करूं।...कैसे मुंह दिखाऊं आप लोगों को ?"

बहन की मौत की खबर सुनकर शमीम बुरी तरह घबरा गयी। जल्दी में कुछ नहीं सूझा, तो उसने आलमगीर से पूछा, "डेड बाडी कहां है ?"

"पुलिस के कब्जे में...।"

शमीम कुछ और पूछती, इससे पहले ही आलमगीर ने यह कहते हुए फोन काट दिया कि मैं बंबई आ रहा हूं। सारी बातें वहीं आकर बताऊंगा।

फोन करने के बाद आलमगीर गाड़ी पकड़कर बंबई चला गया।

२० सितंबर की सुबह को रायल इन गेस्टहाउस के वेटरों—दिनेश और दुर्गादत्त ने मैनेजर मदन सिंह रावत को बताया कि कमरा नं० १०७ का कस्टमर कल सुबह से दिखाई नहीं दिया। कमरा भी बंद पड़ा है।

मदन सिंह रावत को लगा कि आलमगीर संभवतः किराया चुकाये बिना खिसक गया है। वह दोनों वेटरों को लेकर कमरा नं० १०७ पर पहुंचे। दरवाजा बंद था। मदन सिंह रावत ने कई बार दरवाजा खटखटाया। लेकिन अंदर से कोई जवाब नहीं मिला।

रायल इन गेस्टहाउस के सभी कमरों में इंटरलॉक थे, जिन्हें बाहर और अंदर दोनों ही ओर से एक ही चाबी से खोला और बंद किया जा सकता था। रावत को लगा कि आलमगीर एक दिन का किराया तो ले ही भागा, साथ ही चाबी भी साथ ही ले गया। कमरा चेक करना जरूरी था। रावत ने दुर्गादत्त से डुप्लीकेट चाबी मंगाकर कमरा खोला।

सामने ही डबल बेड पड़ा था, जिस पर एक युवती सोयी हुई थी। वह गुलाबी रंग का सूट पहने थी। पेट से पांव तक उसका बदन चादर से ढंका था और चेहरा उसकी चुन्नी से ढंका था। बेड के नीचे उसकी गुलाबी रंग की चप्पलें पड़ी थीं।

कमरे में हलकी-हलकी बदबू फैली थी। रावत को कुछ शक हुआ। उन्होंने पास जाकर देखा। वह युवती मुंह पर जो चुन्नी ओढ़े हुए थी, उस पर चींटियां रेंगती देख रावत समझ गये कि वह जिंदा नहीं थी।

मामला गंभीर था। अतः रावत ने कमरे में कोई भी छेड़छाड़ करना उचित नहीं समझा। कमरा बंद करके वह नीचे आये और पुलिस कंट्रोलरूम को फोन कर दिया। कंट्रोलरूम से यह सूचना थाना दरियागंज को मिली। इंसपेक्टर एस०सी० शर्मा सब-इंसपेक्टर राजवीर सिंह को साथ लेकर तुरंत रायल इन गेस्टहाउस पहुंचे।

पुलिस ने कमरा नं० १०७ में जाकर देखा, तो पता चला कि बेड पर जो औरत पड़ी थी, वह मृत थी। उसके मुंह से निकले हुए झाग और खून सूख चुके थे। गौर से देखने पर उसकी गर्दन पर चोट का एक हलका-सा निशान भी पाया गया।

कमरे की तलाशी ली गयी। वहां पड़ी मेज पर दो पर्चियां रखी मिलीं। उनमें से एक पर्ची पर उर्दू में लिखा था—'होटल में लिखाया गया पता गलत है। मेहरबानी करके इस पते पर तहकीकात करें'। पर्ची में नीचे की ओर अंग्रेजी में लिखा था—'१०७ मोची चाल, बंबई, नंबर—८'। दूसरी पर्ची एक परिचयपत्र की फोटोकापी थी। फोटोकापी में धारक के फोटो के साथ उर्दू में नाम लिखा था। आलमगीर, असिस्टेंट डायरेक्टर, डी आर ओ, पश्चिम कराची और वालिद का नाम और पता—'हबीबुर्रहमान' १५/४५ ब्लाक डी, मोहम्मदी रोड, मोहम्मद शाह कालोनी, कराची, पाकिस्तान।'

पूछताछ करने पर होटल कर्मचारियों ने उस फोटोकापी में छपे

फोटो को देखकर बताया कि वह वही युवक है, जो १८ सितंबर की शाम को अपनी पत्नी के साथ गेस्टहाउस आया था।

उन दो पर्चियों के अलावा उस कमरे में कोई खास चीज नहीं मिली। पुलिस ने हत्या का मुकदमा दर्ज किया और फिंगर प्रिंट-तथा फोटोग्राफी की कार्रवाई पूरी कराकर लाश पोस्टमार्टम के लिए भेज दी। जांच की जिम्मेदारी राजवीर सिंह को सौंप दी गयी।

राजवीर सिंह ने गेस्टहाउस का रजिस्टर देखा, तो उसमें कमरा नं० १०७ के कस्टमर ने अपना नाम-पता—आलमगीर, ७/ए इसराइल मुहल्ला, मोची चाल आर १७, बंबई—८ लिखा था। अपनी नागरिकता उसने भारतीय लिखी थी।

हत्यारे द्वारा लिखकर छोड़ी गयी पर्ची और परिचयपत्र की फोटो कापी से यही लगता था कि वह पाकिस्तानी नागरिक था और उसने पुलिस को भ्रमित करने के लिए ये दोनों चीजें होटल के कमरे में छोड़ी थीं। होटल कर्मचारियों से पूछताछ करने पर पता चला कि आलमगीर २५-२६ साल का युवक था। वह उर्दू मिली हिंदी बोलता था। १९ सितंबर की सुबह वह पान मण्डी जाने को कहकर गया था। उसके बाद उसे गेस्टहाउस में नहीं देखा गया था।

बंबई के दोनों पते या तो अपूर्ण हैं या गलत, इस बात की पूरी संभावना थी। फिर भी इंसपेक्टर शर्मा ने उसी दिन बंबई डीसीबी सीआईडी उपायुक्त को फोन करके इस मामले की पूरी जानकारी दे दी। साथ ही उन्होंने वायरलेस से पुलिस जिला मुख्यालयों और दिल्ली के थानों को भी हत्यारे का हुलिये सहित पूरा विवरण भिजवा दिया। उन्होंने सब-इंसपेक्टर जयसिंह और सिपाही नरेश कुमार को हत्यारे द्वारा छोड़े गये दोनों पतों की जांच के लिए उसी दिन बंबई रवाना भी कर दिया।

२१ सितंबर की दोपहर को थाना दरियागंज को बंबई सीआईडी का फोन मिला। फोन पर बताया गया कि वांछित अभियुक्त आलमगीर पकड़ा गया है, उसका कहना है कि उसने अपनी पत्नी का कत्ल किया है, आप जांच अधिकारी को बंबई भेजें।

इंसपेक्टर शर्मा ने राजवीर सिंह और दो सिपाहियों को बंबई के लिए रवाना कर दिया।

बंबई पहुंचकर राजवीर सिंह क्राफ्ट बाजार स्थित पुलिस कमिश्नर आफिस जाकर इंसपेक्टर एन०एम० तलवालेकर से मिले। उन्होंने बताया कि आलमगीर को उन्होंने एक गुप्त सूचना के आधार पर जेल रोड, साउथ डूंगरी स्थित रहीम कैफे के पास से उस समय गिरफ्तार किया था, जब वह बंबई सेन्ट्रल स्टेशन जा रहा था।

राजवीर सिंह बंबई सीआईडी के सहयोग से आलमगीर को इसराइल मुहल्ला मोची चाल स्थित उसकी ससुराल ले गये, जहां से उन्होंने उसकी निशानदेही पर दो बैग बरामद किये, जिनमें हलीमा और उसके वे कपड़े थे, जिन्हें वह होटल के कमरे से लेकर भागा था।

२४ सितंबर को जब बंबई सीआईडी ने आलमगीर को एस्प्लेनेड कोर्ट की अदालत में पेश किया, तो राजवीर सिंह ने प्रार्थना-पत्र देकर उसे दिल्ली ले जाने की इजाजत मांगी। इस आदेश के साथ आलमगीर को दिल्ली ले जाने की इजाजत मिल गयी कि उसे २८ सितंबर को दिल्ली की अदालत पर पेश कर दिया जाये।

दिल्ली आने पर आलमगीर से विस्तार से पूछताछ की गयी, तो उसने ट्रेन की घटना का जिक्र करते हुए बताया कि बंबई से चलते समय हलीमा की हत्या करने का उसका कोई इरादा नहीं था। यहां तक कि रायल इन गेस्टहाउस पहुंचने के बाद भी उसने ऐसा कुछ नहीं सोचा था। आलमगीर के अनुसार वाकया इस प्रकार हुआ था :

आधी रात तक हलीमा और वह ट्रेन वाले मुद्दे को लेकर लड़ते रहे। सुबह सोकर उठे, तब भी हलीमा का पारा चढ़ा हुआ था। आलमगीर ने उससे कहा कि वह नहा-धो ले, तब तक वह नाश्ता लेकर आता है।

आलमगीर नाश्ता ले आया। उसने हलीमा से मिन्नतें की कि वह नाश्ता कर ले, लेकिन हलीमा ने नाश्ता छुआ तक नहीं। इस पर आलमगीर को गुस्सा आ गया। उसने हलीमा को थप्पड़ जड़ दिया। हलीमा बौखला गयी। वह आलमगीर को बुरा-भला कहते हुए कमरे से बाहर जाने के लिए दरवाजा खोलने लगी, तो आलमगीर ने उसे खींचकर पलंग पर पटक दिया। इसके बावजूद उसकी बकझक बंद न हुई, तो आलमगीर के हाथ उसकी गर्दन तक जा पहुंचे। गुस्से के आवेश में कब हलीमा का गला दबा और कब प्राण निकल गये, आलमगीर को पता ही न चला। उसे उसकी मौत का आभास तो तब हुआ, जब हलीमा के मुंह और नाक से खून बाहर निकला।

खून देखकर आलमगीर बुरी तरह घबरा गया। हलीमा का गला छोड़कर उसने सबसे पहले दरवाजे की कुण्डी अंदर से बंद की। उसके बाद उसने हलीमा की नब्ज टटोली, तो पता चला कि वह मर गयी थी।

अनायास हुई इस हत्या से आलमगीर बुरी तरह डर गया। वह जानता था कि हत्या के जुर्म में वह पकड़ा जाएगा। होटल में दर्ज बंबई का पता पुलिस को उस तक पहुंचा देगा, यह वह अच्छी तरह जानता था। बचाव का कोई रास्ता न सूझा, तो आलमगीर ने जल्दी से एक पर्ची तैयार की, जिस पर उसने लिखा कि गेस्टहाउस के रजिस्टर में दर्ज उसका पता गलत है। तहकीकात इस पते पर करें। पर्ची पर उसने जो पता लिखा, वह गेस्टहाउस के रजिस्टर में दर्ज पते से थोड़ा भिन्न था।

आलमगीर की जेब में पाकिस्तान के एक फर्जी परिचयपत्र की फोटो-कापी पड़ी थी। उसने परिचयपत्र की फोटोकापी और पर्ची वहीं मेज पर रख दी। इसके बाद उसने अपने और हलीमा के सारे कपड़े दोनों बैग में भरे और हलीमा की लाश को सीधी करके उस पर चादर डाल दी। हलीमा के चेहरे को उसने उसी की चुन्नी से ढक दिया। इतना सब करने के बाद आलमगीर कमरा बंद करके नीचे आ गया और मैनेजर मदन सिंह रावत से यह कहकर गेस्टहाउस के बाहर निकल गया कि उसकी पत्नी सो रही है, कोई उसे डिस्टर्ब न करे।

आलमगीर जब बंबई पहुंचा तो हलीमा के सारे रिश्तेदार उसके मायके में एकत्र थे। उन लोगों को आलमगीर पर शक पहले से ही था। हलीमा के मामू मोहम्मद हनीफ ने हलीमा की मां माफिया ताजिम और उनके सारे बच्चों से कह दिया था कि वे लोग आलमगीर से कुछ न कहें, वह स्वयं पूछताछ करेंगे।

जब आलमगीर ससुराल में पहुंचा, तो उसका चेहरा उतरा हुआ था और कपड़े गंदे थे। ससुरालवालों को देखकर उसने रोना शुरू किया, तो मोहम्मद हनीफ ने उसे ढांढस बंधाया और उसरी टेंकर स्ट्रीट जट्टीकर हाउस स्थित अपने घर ले गये। घर पहुंच कर मोहम्मद हनीफ ने आलमगीर से कहा कि वह नहा-धोकर कपड़े बदल ले। जब आलमगीर नहा-धोकर तैयार हो गया, तो हनीफ ने उसे खाना खिलाया। इतनी देर में आलमगीर समझ गया था कि हलीमा के मायकेवालों को उस पर कोई संदेह नहीं है।

मोहम्मद हनीफ ने उससे कहा, "अगर चाहते हो कि मैं तुम्हारी मदद करूं, तो सब कुछ सच-सच बता दो।"

मोहम्मद हनीफ की बात सुनकर आलमगीर घबरा गया। उसने मोहम्मद हनीफ को सारी बात सच-सच बता दी। तब मोहम्मद हनीफ ने सीआईडी को फोन कर दिया। सीआईडी के पास दिल्ली पुलिस का संदेश पहले ही आ गया था।

आलमगीर वहां से भाग निकला। जब वह सेन्ट्रल रेलवे स्टेशन जा रहा था, तभी उसे रहीम कैफे के पास से सीआईडी ने गिरफ्तार कर लिया था।

पूछताछ के बाद राजवीर सिंह ने २८ सितंबर को आलमगीर को तीस हजारी के मेट्रोपालिटन मजिस्ट्रेट श्री नेपाल सिंह की अदालत पर पेश किया, जहां से उसे तिहाड़ जेल भेज दिया गया। अभी उसकी जमानत नहीं हुई थी।

शक की आंधी ने जहां हलीमा को अनन्त में उड़ा दिया, वहीं अपने मां-बाप का इकलौता बेटा आलमगीर उस आंधी की धूल फांक रहा है। ●

नद ने बताया कि बेटी हुई है। यह सुनते ही जच्चा, सीमा को पल भर के लिए ऐसा लगा, जैसे एक सीमा के रहते दूसरी सीमा भी तिल-तिल मरने के लिए इस संसार में आ गयी है। उस वक्त घर का भी माहौल बहुत बोझिल था। बावजूद इसके सीमा ने बगल में सो रही नन्हीं-सी बिटिया को अपने सीने से सटा लिया। वह उसकी पहली संतान थी।

सीमा के मन में आशा की लौ जगमगा उठी कि बिटिया के आ जाने से विवेक उसकी मनोदशा को जरूर समझेगा और उसे दिल से अपना लेगा। मगर हुआ इसके विपरीत।

शादी के बाद ही सीमा की जिंदगी में घुन लग गया था। ससुराल के कैदखाने से ही एक दिन मौका देखकर सीमा ने टूटे मन से अपनी मां को पत्र लिखा। पत्र इस प्रकार था :

पूजनीय मां, सादर प्रणाम

मुझे मालूम नहीं था कि विवाह के उपरान्त मेरी स्थिति एक कीड़े की भांति हो जायेगी, वरना मैं उम्रभर कुंवारी रह जाती, कभी शादी नहीं करती। जन्म लेने का दर्द मुझे नहीं मालूम, पर जीने का दर्द जरूर जानती हूं। कितना असहनीय है यह दर्द। सोचती हूं, काश ! जिंदगी एक डायरी होती, जिसके अनचाहे पृष्ठ फाड़कर फेंके जा सकते। लेकिन...मैं यहां इतने प्रतिबंधों में बंधी हूं कि हिल भी नहीं सकती।

मां, तुमने मुझे बहुत लाड़-प्यार से क्यों बड़ा किया ? मुझे बचपन में ही मरने दिया होता, तो इन लोगों का शिकार नहीं बनना पड़ता। इतनी जल्दी मेरी दुनिया अंधेरी हो जायेगी, मैंने इसकी कल्पना भी नहीं की थी।

मैं इस घर में अकेली हूं मां ! बिल्कुल अकेली, इतनी अकेली कि मेरा साया भी साथ नहीं। मैं जिंदगी और मौत के बीच झूल रही हूं। मैं तुम्हें परेशान नहीं करना चाहती हूं, परन्तु मामला सीमा से बाहर होता जा रहा है। तुम्हारी सीमा घुट-घुट कर जी रही है, घुट-घुट कर मर रही है, हर पल दहशत में रह रही है।

दो महीने पहले पता चला था कि तुम बीमार हो। मैं तुम्हारे पास तब आना चाहती थी। विवेक से कहा भी। वह नाराज हो गया। उसने मुझे गालियां दीं और मारपीट की। नाक में काफी चोट लगी, ब्लीडिंग भी हुई। बावजूद इसके मेरा डाक्टरी

सवाल बन गयी सीमा जलोका भी

—रतीन्द्र नाथ



सीमा जलोका

"न राग है न रागिनी/आज चारों तरफ आह ही आह है.../ब्याह एक गंदी वस्तु है,/जो प्रवाहहीन धारा पर तैरती है। सीमा अभागिन बन/बैठी है,/दीप ही बुझ गया,/विवेक अविवेक हो गया...।"

इलाज नहीं हुआ।

मां, ढाई साल में मैं अपने पति को समझ नहीं सकी। बेवजह विवेक, उसकी मम्मी और अनुराधा मुझ पर तोहमत लगाते रहते हैं। बार-बार अनुराधा ताने मारती है कि किस कंगाल के घर में मेरे भइया की शादी हो गयी? मुझे अपनी चिंता अब नहीं है। सिर्फ बिटिया बेबी की चिंता मेरे मन को मथ रही है। मैं तन-मन से टूट चुकी हूं। खैर, जो हो गया, वह तो वापस नहीं होगा। तुमसे मेरी एक ही प्रार्थना है कि मुझे दिन-रात के इस नरक से जल्द मुक्त करवाओ।

तुम सोचोगी कि मैं मायके में बोझ बन जाऊंगी, लेकिन ऐसा होगा नहीं। तुम अगर एक रोटी खाओगी, तो मुझे आधी दे देना। मैं धीरे-धीरे किसी स्कूल में नौकरी तलाश लूंगी। शांति का माहौल रहेगा, इसलिए स्वतः मेरी उन्नति होती जायेगी। वैसे यहां मैं खुद के लिए एक प्रश्नचिह्न हूं।

इस पत्र का जिक्र किसी से नहीं करना। हां, इसे तार समझकर किसी को मुझे बुलाने के लिए जरूर भेज देना, नहीं तो सीमा 'है' नहीं, 'थी' हो जायेगी। तुम्हें मेरा चरणस्पर्श और रवि को बहुत-बहुत प्यार।

तुम्हारी बदनसीब बेटी,
सीमा जलोका

दिल को दहला देनेवाला यह पत्र पढ़कर सीमा की मां स्तब्ध थीं। चिट्ठी उन्हें १८ अप्रैल १९९१ को मिली थी। पहले तो उन्हें समझ में ही नहीं आया कि क्या किया जाये, क्योंकि सीमा उनसे कई सौ किलोमीटर की दूरी पर थी। बेटे रवि की उम्र इतनी कम थी कि उसे अकेले पटना भेजना ठीक नहीं था। बेटी सुजाता कुंवारी थी अपनी सीमा दीदी के यहां जा नहीं सकती थी। इसलिए काफी सोच-समझकर सीमा की मां ने अपने भाई से टेलीफोन पर बातचीत की और उनसे आग्रह किया कि वे पटना जाकर किसी भी सूरत में सीमा को साथ लेकर बण्डेल चले आएं। सीमा के मामा एन०पी० अग्रवाल पटना में उसकी ससुराल गये भी, लेकिन तब तक सीमा संसार के सभी दुखों से मुक्ति पा चुकी थी।

सीमा का जन्म जुलाई १९७० में पश्चिम बंगाल के बण्डेल शहर में हुआ था। उसके पिता स्वर्गीय श्याम बिहारी सकसेरिया बण्डेल के बहुत बड़े कपड़ा-व्यवसायी थे। सीमा उनकी तीसरी संतान थी। उससे बड़ी उसकी दो बहनें थीं। बड़ी बहन दीपा बजाज बम्बई में रहती थी। दूसरी बहन सविता कलकत्ता में ब्याही गयी थी। सुजाता सीमा से छोटी थी। उसकी शादी नहीं हुई थी। वह अपनी मां बिमला सकसेरिया के साथ बण्डेल स्थित 'मेरी पार्क' वाले मकान में रहकर इण्टरमीडिएट परीक्षा की तैयारी कर रही थी। इकलौता भाई रवि पांचवें स्टैण्डर्ड का छात्र था।

सुंदर होने के साथ-साथ सीमा पढ़ने-लिखने में बहुत तेज थी। भावपूर्ण कविताएं लिखने का उसे इतना शौक था कि उसकी डायरियों के पन्ने कविताओं से रंगे रहते थे। स्कूली जीवन के दौरान कविता-पाठ करने के कारण उसे पुरस्कार भी मिले थे। घर में वह सबकी दुलारी थी।

वर्ष १९८८ की बात है। सीमा के ब्याह के लिए योग्य लड़के की तलाश में उसके दोनों बहनोई जुटे हुए थे। वे सीमा की शादी किसी सम्पन्न परिवार में करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने अपने कई रिश्तेदारों से भी कह रखा था। संयोग से सीमा की बड़ी बहन दीपा बजाज के माध्यम से बम्बई में बैठे-बैठे ही एक लड़के के विषय में उसके पति विनोद कुमार बजाज को आवश्यक जानकारी मिल गयी। लड़के का नाम विवेक कुमार जलोका था। उसकी सबसे बड़ी बहन अनामिका जलोका बर्लो, बम्बई में ठीक दीपा बजाज के बगल में रहती थी। दोनों परिवारों में घनिष्ठता थी।

दीपा बजाज तथा अनामिका जलोका दोपहर में घरेलू काम-काज निपटाकर मिल बैठती थीं। दीपा के साथ उसकी छोटी बहन सीमा भी रहती थी। जनवरी १९८८ में एक दिन हंसी-हंसी में ही अनामिका ने कहा, "दीपा, अपने मन की एक बात बताऊं। बुरा तो नहीं मानोगी?"

"बुरा क्यों मानूंगी भला? बताओ तो सही।"

"मेरी दिली ख्वाहिश है कि सीमा मेरी भाभी बने। अगर तुम चाहोगी तो...।"

"शुभ काम में देरी क्यों? मैं आज ही बण्डेल चिट्ठी लिखकर मां से पूछ लेती हूं।" दीपा ने कहा।

दीपा की मां को अपने बेटी-दामाद पर पूर्ण विश्वास था। लिहाजा, पत्र के द्वारा ही उन्होंने सीमा के विवाह का दायित्व दीपा एवं विनोद को सौंप दिया। उधर होली के बाद अनामिका के माता-पिता, भाई एवं छोटी बहन बम्बई आये। उन्होंने सीमा को पसंद कर लिया। दोनों ओर से शादी की बात पक्की हो गयी। उसी दिन सगाई की रस्म पूरी होने के बाद शादी की तारीख चौबीस नवम्बर १९८८ भी निश्चित हो गयी। शादी का स्थान मौर्य होटल, पटना रखा गया।

विवेक कुमार जलोका के पिता विश्वनाथ जलोका भागलपुर के निवासी थे। लेकिन वर्षों पूर्व उन्होंने पटना के श्रीकृष्ण नगर स्थित त्रिवेणी अपार्टमेंट में एक फ्लैट खरीद लिया था। विश्वनाथ जलोका के परिवार में छह सदस्य थे—पत्नी ज्ञानदेवी जलोका, पुत्र विवेक कुमार, तीन लड़कियां अनामिका, अंजली और अनुराधा। अनामिका एवं अंजली ब्याहता थीं। अनुराधा वीमेंस कालेज, पटना से इण्टर करने के बाद मेडिकल कम्पटीशन की तैयारी में जुटी थी। विवेक ग्रेजुएट था। वह पिता के कारोबार में हाथ बंटाता था। पटना के मौर्य लोक परिसर तथा मौर्य होटल परिसर में विश्वनाथ जलोका की रेडीमेट गारमेंट्स की दो बड़ी-बड़ी दुकानें थीं—रंगोली एवं श्रीमती।

२४ नवम्बर १९८८ को धूमधाम के साथ सीमा की शादी विवेक के साथ हो गयी। सीमा की मां ने दिल खोलकर खर्च किया। उन्होंने फ्रिज, कलर टीवी, वीसीआर, उम्दा फर्नीचर और घरेलू आवश्यकता की अन्य वस्तुएं भी दीं। एक कार के लिए नकद रुपये भी दिये। कुल मिलाकर सीमा की शादी में लगभग चार लाख रुपये खर्च हुए।

मधुर-मधुर सपने संजोये सीमा अपनी ससुराल चली गयी। सुहागरात को ही विवेक डगमगाते कदमों से कमरे में दाखिल हुआ था। वह शराब के नशे में था और वहीं फर्श पर बैठ और शराब पीकर वह लुढ़क गया था।

पन्द्रह दिनों तक सीमा ससुराल में रही। इस दौरान विवेक ने उससे कोई बात नहीं की। हर रात वह नशे में चूर होकर सीमा के कमरे में आता था और गालियां देते-देते बेहोश हो जाता था।

सोलहवें दिन सीमा अपने मायके लौटी। ससुराल के अनुभव मधुर नहीं थे, जिन्हें वह किसी को सुनाती। अतः उसने चुप रहना ही बेहतर समझा। बेटी की उदासी मां बिमला से छिपी न रह सकी। उन्होंने उसकी उदासी का कारण जानना चाहा।

पहले तो सीमा ने कुछ भी बताने से इनकार कर दिया, पर बहुत जोर देने पर उसने सारी दास्तान मां को सुना ही दी। सीमा की मां यह सब जानकर सन्न रह गयीं। उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ कि सीमा के साथ इतना बड़ा धोखा हुआ होगा। सीमा ने मां से कहा, "मां, मैं किसी गरीब के संग जिंदगी भले ही काट देती, लेकिन किसी अधम शराबी के साथ नहीं निभा पाऊंगी।"

मां ने बेटी को समझाया, "बेटी, हमारा समाज बहुत दकियानूसी है। शादी के बाद लड़की को पति से निभाना पड़ता ही है। अगर पति में कोई बुरी लत है, तो उसे अपने प्यार से, अपनी सेवा से ही जीतने में भलाई है। विवेक जैसा भी है, जो भी है, अब तो तुम्हें जीवन भर उसका साथ देना ही पड़ेगा।"

मां की बात का मर्म समझकर सीमा अपनी ससुराल लौट जाने को तैयार हो गयी। बिमला स्वयं अपने बेटे रवि के साथ १६ जनवरी १९८९ को उसे ससुराल छोड़ने पटना गयीं। उन्होंने विवेक को अकेले में समझाने का प्रयास किया। विवेक अपनी गलती मानने को तैयार नहीं था। उसने सीमा की मां से साफ शब्दों में कह दिया, "यह हम दोनों के बीच का मामला है। इसमें आप हस्तक्षेप न करें और अगर करेंगी, तो भले-बुरे की जिम्मेदारी आपकी होगी।"

बिमला ने चुप रहना ही उचित समझा। वह बेटी को छोड़कर बण्डेल चली आयीं। सीमा ने भी परिस्थितियों से समझौता कर लिया।

वक्त आगे बढ़ता रहा। एक दिन पता नहीं कैसे विवेक के मन में प्यार उमड़ पड़ा। उसने सीमा से पूछा, "मुझसे क्या चाहती हो तुम? खुलकर बताओ।"

"प्यार, सिर्फ तुम्हारा प्यार।" सीमा ने कहा। इस पर विवेक बोला, "मुझ पर तुम्हारा पूरा अधिकार है। मैं तुम्हें इस अधिकार से वंचित करना नहीं चाहता। लेकिन इसके लिए तुम्हें अपनी भावनाओं का त्याग करना होगा। मैं भावनाओं में नहीं बह सकता। मैं एक व्यापारी हूं। नाप-तौलकर चीजों की कीमत लगाता हूं, उन्हें परखता हूं। तुम आंख मूंदकर मेरी बात मानती चलो...मेरे व्यक्तिगत मामलों में टांग न अड़ाओ, तो तुम्हारे अरमान पूरे हो जायेंगे।"

सीमा को विवेक से ऐसे जवाब की कतई आशा नहीं थी। परन्तु जब इस तरह का उत्तर मिल ही गया, तो उसे संतोष करना पड़ा। उसके मन में विवेक के प्रति घृणा की एक गांठ-सी पड़ गयी, जो कभी नहीं खुली।

ननद अनुराधा तक से उसे ताने मिलते थे। अनुराधा ताना देकर कहती, "मेरे पापा ने अनामिका और अंजली दीदी की शादी में दस-दस लाख रुपये खर्च किये थे। अपने दोनों दामादों को उन्होंने मकान भी खरीदकर दिया था। हनीमून वास्ते हवाई जहाज से कश्मीर जाने-आने का सारा इंतजाम पापा की तरफ से ही था। लेकिन तुम्हारी मां ने भइया को क्या दिया?"

सीमा ने अपनी जुबान बंद रखना ही बेहतर समझा। पर जुबान बंद रखने से क्या होनेवाला था? रोज-रोज उलाहना सुनते-सुनते सीमा ने लाचार होकर एक दिन जवाब दिया, "अनुराधा, मेरी मां ने औकात से ज्यादा तुम्हारे भइया को दिया है। अब और देना उनके लिए असंभव है। तुम्हें यह शोभा नहीं देता कि तुम मेरी मां को जली-कटी सुनाओ।"

"अगर तुम्हारी मां के पास पैसे नहीं थे, तो फिर इतने बड़े घर का सपना नहीं देखना चाहिए था," अनुराधा ने रूखे स्वर में कहा, "मेरे भइया ने लाखों बैंक-बैलेंस कर रखा है।"

सीमा ने जवाब दिया, "तुम्हारे भइया से मेरी शादी का प्रस्ताव तुम्हारी बड़ी दीदी अनामिका ने ही रखा था। मेरी दीपा दीदी तो तुम्हारे भइया को जानती भी नहीं थी। तुम्हारे भइया के पास इतने पैसे हैं, तो तुम हाथ क्यों फैला रही हो?"

सीमा का यह जवाब अनुराधा के मन को आहत कर गया। उसकी भौंहें चढ़ गयीं। उसने विवेक से शिकायत कर दी। विवेक ने आव देखा न ताव, सीमा पर लात-घूंसों की बौछार कर दी। बेहोशी की हद तक उसने पिटाई की।

सीमा को कविताओं में अपना दर्द बयान करके सुकून का अहसास होता था। दुख भरे क्षणों में ही उसने अपनी एक कविता में मन की दशा की अभिव्यक्ति की थी:

"न राग है न रागिनी/आज चारों तरफ आह ही आह है.../ब्याह एक गंदी वस्तु है,/जो प्रवाहहीन धारा पर तैरती है।/सीमा अभागिन बन/बैठी है,/दीप ही बुझ गया,/विवेक अविवेक हो गया...।"

यकीनन, सीमा के अंदर एक भयानक ज्वालामुखी धधक रहा था। बड़ी दुखद दशा थी उसकी। उसे सताने के लिए घर के सारे नौकरों को भगा दिया गया। जलोका परिवार ने उसे घर की नौकरानी से भी बदतर हालत में पहुंचा दिया। सीमा को सुबह सूर्योदय से पहले ही उठकर पूरे घर की सफाई करनी होती थी। नाश्ता, दिन का खाना और रात का भोजन उसे ही बनाना पड़ता था। रात को सोने तक सास ज्ञानदेवी जलोका के पैर दबाना भी उसकी ड्यूटी में शुमार था। रविवार के दिन रोज के काम के अतिरिक्त सीमा को पति, ननद, सास एवं ससुर के कपड़ों को धोकर उन पर प्रेस करना होता था।

इतना सब करने के बाद भी सीमा पर होनेवाले अत्याचारों में कमी नहीं आयी। जब सीमा के लिए अत्याचार सहना मुश्किल हो जाता, तो दोपहर में एक घंटा सोने का बहाना बनाकर वह कमरा भीतर से बंदकर डायरी लिखती थी। वह रोज जिन हालात से गुजरती, उन्हें अपनी डायरी के पन्नों पर उतार देती। ससुरालवाले उसकी डायरी लिखने की आदत से अनभिज्ञ थे। शादी के बाद सीमा ने अपनी डायरी के किसी भी पन्ने पर कोई ऐसी बात नहीं लिखी, जिससे लगे कि उस दिन वह खुश थी। उसने अपनी डायरी के विभिन्न पन्नों पर लिखा था:

"कांटों की चुभन के बीच आज कैदखाने में मेरे दो साल गुजर गये। मुझे नहीं लगता कि मैं अब विवेक का मन जीत पाऊंगी। कहां आज शादी की दूसरी सालगिरह धूमधाम से मनायी गयी रहती, पर उसके बदले घर में कलह का ज्वार उठा...ऐसा ज्वार कि मन कर रहा है कि क्यों न अपना जीवन समाप्त कर दूं। सुबह-सुबह ही बेवजह सबने धोबी के गदहे के समान मेरी धुनाई कर दी। मैं चिल्लाती रही, भगवान की दुहाई देकर कहती रही कि मुझे मत मारो...मैं गर्भवती हूं। पर कोई पसीजनेवाला नहीं था।

"अनुराधा ने आगे बढ़कर रेडियो तेज कर दिया, ताकि मेरी चीख और कराह बाहर सुनाई न पड़े। मेरी सास एक साथ अंगीठी तथा पीसी हुई लाल मिर्च उठा लायीं। उन्होंने अंगीठी में लाल मिर्च डाल दिया। जब धुआं होने लगा, तब मां-बेटी ने क्रूरता के साथ मेरे बालों को पकड़ा और उसे सूंघने पर विवश कर दिया। मैं तड़पती रही, सिसकती रही, गिड़गिड़ाती रही, लेकिन किसी ने ध्यान तक न दिया। विवेक ने अपने बेल्ट के निकिलवाले लोहे के बकल को गरम कर मेरे मुंह पर सटा दिया। मैं पीड़ा से कराह उठी, किंतु जल्लाद पति मुझे दाग-दाग कर तड़पाता रहा। अनुराधा प्लास से मेरी उंगलियों को इतना दबायी कि उनसे खून निकल आया...आगे क्या हुआ मैं नहीं जानती, क्योंकि मैं बेहोश हो चुकी थी।

"मैं कितनी अभागी हूं कि मेरी भावनाओं, हसरतों को कहीं भी किनारा नहीं मिला। कहां इक्कीसवीं सदी में जाने की बात हो रही है और कहां सामंतवादी व्यवस्था के तहत ससुराल में बहू को प्रताड़ित किया जा रहा है। ससुराल में मोहब्बत एवं हसरतों की हत्या हो रही है। औरतें अपने पति को देवता मानती हैं। समझ में नहीं आता, मैं उस हैवान को कैसे पूजूं, जो महापतित है, गया-गुजरा है? रहन-सहन की खराब आदतों से भरपूर स्टूपिड।

"दीपा दीदी ने टेलीफोन किया था कि मां बीमार है। मैं उसे देखने बण्डेल जाना चाहती थी। विवेक से कहा तो वह आपे से बाहर हो गया और मुझे इतना पीटा कि मेरी नाक फट गयी। शादी का यह अर्थ तो नहीं कि लड़की को बेच डाला गया, वह अपने मायके नहीं जा सकती?

"सविता बहन होली के समय कलकत्ता से राजस्थान वाया पटना होते जा रही थी। मैं विवेक के साथ उससे मुलाकात करने पटना जंक्शन गयी। डीलक्स एक्सप्रेस यहां पन्द्रह मिनट रुकी। मैं अकेले में दीदी से बात करना चाहती थी, पर विवेक साये की तरह मेरे पीछे लगा रहा।

"मां मेरे पास कोई चिट्ठी भेजती है, तो सभी लोग पहले पढ़ लेते हैं और हफ्तों बाद मुझे चिट्ठी देते हैं।...क्या कहूं? मेरी हालत किसी कैदी से भी बदतर है। उसे भी उतनी जेल में यातनाएं नहीं मिलती होंगी, जितनी मुझे मिल रही हैं। मैं जिंदा लाश हूं...।"

बहरहाल, इन्हीं मानसिक एवं शारीरिक यंत्रणाओं के दौर से गुजरते हुए सीमा ने दिसम्बर १९९० में एक बेटी को जन्म दिया। उसके अंधेरे मन में उम्मीद की किरण जगी कि अब उसके पति का हृदय-परिवर्तन हो जायेगा तथा सास के सूखे दिल में स्नेह-वात्सल्य की कुछ गुनगुनाहट होगी। मगर उसकी आशाओं के विपरीत यातनाओं के कठोर शिकंजे दिन-ब-दिन उसे कसते ही गये।

मौका निकालकर बारह अप्रैल १९९१ को सीमा ने अपनी मां को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने अपनी मौत की आशंका व्यक्त की थी। सीमा का पत्र लेटर बाक्स में डाला था उसके एक ममेरे देवर ने, जो इत्तफाक से उन दिनों विवेक के यहां आया हुआ था।

सीमा की मां पत्र पढ़कर घबरा गयीं। उन्होंने तत्काल टेलीफोन से अपने भाई को कहा कि पटना जाकर सीमा को किसी भी सूरत में उसकी ससुराल से निकालें। अपनी अस्वस्थता के कारण सीमा के मामा एन०पी० अग्रवाल ने धनबाद से पटना पहुंचने में पन्द्रह

दिन ढेर कर दिया। वे २ मई १९९१ को पटना जब पहुंचे, तब सीमा के प्राण-पखेरू उड़ गये थे।

२ मई की सुबह से ही पटना शहर में भयंकर लू चल रही थी। धनबाद से पाटलिपुत्र एक्सप्रेस द्वारा दिन के एक बजे सीमा के मामा पटना आये। पटना जंक्शन से वे फ्रेजर रोड स्थित मारवाड़ी आवास गृह गये। एक कमरा उन्होंने बुक कराया और स्नानादि के बाद त्रिवेणी अपार्टमेंट पहुंचे। सीमा की ननद ने दरवाजा खोला और उन्हें ड्राइंगरूम में बिठाया। अग्रवाल साहब ने उससे पूछा कि सीमा कहां है? इस पर अनुराधा ने जवाब दिया कि भाभी मम्मी के साथ बाजार गयी हुई हैं।

अनुराधा फ्लैट में अकेली थी। लिहाजा वहां ठहरना उस दोपहरी में अग्रवाल साहब ने मुनासिब नहीं समझा। अनुराधा के आग्रह पर शरबत पीकर वे यह कहते हुए निकल पड़े कि शाम को आऊंगा। लिफ्ट से वह नीचे उतरे और अपार्टमेंट के गेट से बाहर निकल ही रहे थे कि मारुति कार से सीमा की सास और ससुर आ गये। सीमा गाड़ी में नहीं थी। उन्हें देख अग्रवाल साहब लौट पड़े। सीमा के ससुर विश्वनाथ जलोका की नजर ज्यों ही उन पर पड़ी, उनके मुंह से निकल पड़ा, "आप ठीक समय पर पधारे हैं। चलिए ऊपर। सीमा बाथरूम में आत्महत्या कर चुकी है।"

अग्रवाल जैसे पेड़ से गिरे। उनके जेहन में एक ही सवाल घूमने लगा कि अभी-अभी वे ऊपर थे, तो अनुराधा ने कहा कि सीमा बाजार गयी है और अब कुछ दूसरा ही सुनने को मिल रहा है। आखिर ऐसा क्यों?

किसी तरह अपने पर काबू रखकर अग्रवाल साहब सीमा के ससुर के साथ फ्लैट में गये। वहां बाथरूम में झरना नल के राड से सीमा लटक रही थी। उसके गले में दुपट्टा बंधा था और नीचे एक स्टूल पड़ा था। सीमा की बेटी बेडरूम में सो रही थी। अनुराधा फौरन रसोई से चाकू ले आयी। दुपट्टे को काटकर सीमा को नीचे उतारा गया। यह सब करते-करते शाम के साढ़े चार बज गये।

होटल जाने का बहाना करके अग्रवाल साहब लोगों से पूछते-पूछते बुद्ध कालोनी पुलिस स्टेशन पहुंचे। इंसपेक्टर आर०के० पोद्दार मौजूद थे। अग्रवाल साहब ने उन्हें अपना परिचय देते हुए हादसे की सूचना दी। इंसपेक्टर पोद्दार ने टेलीफोन द्वारा घटना की खबर पटना के नगर आरक्षी अधीक्षक डा० अजय कुमार तक पहुंचायी और स्वयं अपने सहयोगी सब-इंसपेक्टर उमेश कुमार सिंह के साथ त्रिवेणी अपार्टमेंट रवाना हो गये।

फ्लैट नम्बर २२२ में सीमा के ससुर, सास, ननद अनुराधा और नन्ही बिटिया सभी ड्राइंगरूम में थे। पोद्दार ने लाश का निरीक्षण किया और पूछताछ शुरू की। सीमा की सास ने बताया, "दोपहर बारह बजे के करीब मैं भोजन करके ड्राइंगरूम में चली गयी। वहां मैं टीवी पर प्रोग्राम देखने लगी। पौने एक बजे प्रोग्राम खत्म हुआ। सीमा की बेटी जोर-जोर से रो रही थी। मैंने देखा कि दूध पिलाकर सीमा ने उसे पालने में सुला दिया और स्नान करने बाथरूम में चली गयी। बाथरूम का दरवाजा उसने भीतर से बंद कर लिया था।

"इस बीच मेरी आंख लग गयी। मेरी बेटी अनुराधा अपने कमरे में पढ़ रही थी। पौने दो बजे मेरी नींद खुली। मुंह धोने के लिए मैं बाथरूम की तरफ बढ़ी। बाथरूम का दरवाजा बंद था। मैंने खोलने के लिए आवाज लगायी। मुझे लगा कि बहू खाना खाकर सो रही होगी, बाथरूम में अनुराधा है। लेकिन मेरी आवाज सुनकर अनुराधा तो अपने कमरे से आयी। हम दोनों को शंका हुई। पीटने पर भी दरवाजा नहीं खुल रहा था। मैंने अनुराधा के साथ धक्के दे-देकर चिटकिनी तोड़ दी। बाथरूम में देखा, मेरी बहू ने फांसी लगा ली थी। मैं घबरा गयी। फौरन मैं अपनी दुकान 'श्रीमती' गयी और अपने पति को लेकर आयी।"

"मगर आपकी बेटी अनुराधा ने सीमा के मामा एन०पी० अग्रवाल से यह क्यों कह दिया कि सीमा मम्मी के साथ शापिंग करने गयी है?" पोद्दार ने पूछा।

"इंसपेक्टर साहब, दरअसल घर में कोई था नहीं, इसी लिए उसने ऐसा कहा।"

"सीमा के पति कहां हैं?"

विश्वनाथ जलोका ने बताया, "मुझे जब इस हादसे के बारे में पता चला, तो मैं तत्काल अपनी दूसरी दुकान 'रंगोली' गया। वहां विवेक नहीं था। मैं सेल्समैन से कहकर आया हूं कि उसके आते ही यहां भेज देना।"

बहरहाल, इंसपेक्टर पोद्दार ने फ्लैट के सभी कमरों की तलाशी ली। उन्हें सीमा की अटैची में एक डायरी मिली। डायरी को सीमा ने साड़ी की तहों में छुपाकर रखा था। उक्त डायरी में सीमा ने अपनी व्यथा लिख रखी थी।

शाम सात बजे पटना के सिटी एस०पी० डा० अजय कुमार भी घटनास्थल पर आये। मामले की जांच की जिम्मेदारी सब-इंसपेक्टर उमेश कुमार सिंह को सौंप दी गयी। जांच अधिकारी रात आठ बजे विवेक से पूछताछ करने 'रंगोली' पहुंचे, तो उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रही। विवेक अपनी दुकान में बैठा अपने दोस्तों के संग काफी पी रहा था।

जांच अधिकारी उमेश कुमार सिंह ने टेलीफोन पर सीमा की मौत की खबर उसकी मां एवं उसके दोनों बहनोइयों को दे दी और उनसे कहा कि वे जल्द ही उनसे मिलने उनके शहर आनेवाले हैं।

४ मई को पोस्टमार्टम रिपोर्ट मिल गयी। रिपोर्ट में मौत का कारण दम घुटना बताया गया था। यह भी लिखा था कि मृतका की गर्दन पर कोई निशान या खरोंच नहीं मिली। (अगर फांसी लगाते वक्त वह जिंदा होती, तो निशान जरूर पड़ते)। इसी तरह रिपोर्ट में दर्ज कई तथ्य आत्महत्या की स्थिति के विपरीत थे। जैसे, लटककर आत्महत्या करनेवाले व्यक्ति की आंखें और जीभ बाहर आ जाती हैं। मगर इस मामले में ऐसा नहीं था। जांघों पर खरोंच के निशान नहीं थे, जो फांसी पर झूल जाने के स्पष्ट संकेत होते हैं। अगर हाथ बंधे न हों, तो आखिरी क्षणों में घुटन से परेशान होकर हाथ अपने-आप जांघों को खरोंचने लगते हैं। नाखूनों में त्वचा के बारीक टुकड़े भी नहीं पाये गये। सीमा की मृत्यु दिन के ग्यारह बजे के लगभग हुई थी।

रिपोर्ट से यह साफ था कि सीमा की हत्या की गयी थी और खुदकुशी का रूप देने के लिए उसे बाथरूम में लटका दिया गया था। लिहाजा, सब-इंसपेक्टर उमेश कुमार सिंह ने अपने उच्च अधिकारियों से विचार-विमर्श कर छह मई की शाम साढ़े सात बजे विश्वनाथ जलोका, ज्ञानदेवी जलोका एवं विवेक कुमार जलोका को भारतीय दंड विधान की धारा ४९८ए तथा ३०४ बी के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया। सात मई को पटना के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने उन्हें पटना जेल भेज दिया। अनुराधा इसलिए गिरफ्तार नहीं की जा सकी कि मेडिकल प्रतियोगिता परीक्षा के नाम पर पटना उच्च न्यायालय ने उसे अग्रिम जमानत दे दी थी।

मुल्जिमों को अदालत पर पेश करके जेल भेजने के बाद उमेश कुमार सिंह बण्डेल, सीतामढ़ी तथा बम्बई गये। बण्डेल में सीमा की मां ने जांच अधिकारी को वह पत्र दिया, जिसका वर्णन कथा के आरम्भ में किया गया है। बम्बई में सीमा की बहन दीपा ने सब-इंसपेक्टर सिंह को बताया, "मैं तीस अप्रैल १९९१ को बम्बई से बाहर गयी थी। उस दिन पांच बार सीमा का टेलीफोन पटना से आया था। मेरी देवरानी ने फोन रिसीव किया था। सीमा बेसब्री से मुझसे या मेरे पति से कुछ कहना चाहती थी। अगले दिन जब मैं लौटी, तो मुझे टेलीफोन का पता लगा। मैंने पलटकर पटना फोन लगाया। फोन किसी ने उठाया भी, लेकिन मेरा नाम सुनकर लाइन काट दी गयी। मैंने उस दिन दर्जनों कॉल लगायी। मुझे लगता है कि तीस अप्रैल को सीमा की ससुराल में कोई रहा नहीं होगा और उसी मौके का फायदा उठाकर सीमा ने मेरे घर टेलीफोन किया।"

कथा लिखे जाने तक सभी मुल्जिम जेल में थे। अदालत से उनकी जमानत की अर्जी नामंजूर हो गयी थी। जांच अधिकारी ने विश्वनाथ जलोका, ज्ञानदेवी जलोका, विवेक कुमार जलोका एवं अनुराधा जलोका के विरुद्ध अदालत में चार्जशीट पेश कर दिया है। ●



भू॰ पू॰ राष्ट्रपति राधाकृष्णन मेजर जनरल स्वरूप सिंह कलान को महावीर चक्र प्रदान करते हुए

दिल्ली के छावनी क्षेत्र में भी हादसा

हमारे संवाददाता द्वारा

देश की राजधानी दिल्ली में हत्याओं का सिलसिला लगातार चल रहा है। सुरक्षित माने जानेवालों इलाकों में भी अब हादसे होने लगे हैं। यह चिंता की बात है

सेवानिवृत्त मेजर जनरल स्वरूप सिंह कलान बूढ़े (७६ वर्ष) थे, लेकिन उनकी गतिविधियां किसी भी जवान से कम नहीं थीं। रोजाना सुबह पांच बजे बिस्तर छोड़ते, तो फिर रात दस बजे ही उनके पांव बेडरूम में पड़ते। मौसम चाहे जैसा हो, सुबह की सैर पर रोज जाते। बेटा और बहू साथ रहते थे, फिर भी वह घर-बाहर के अपने सारे काम स्वयं ही निपटाते। उनकी व्यस्तता ही उनकी जिंदादिली का राज थी। वह कहते भी, "जिंदगी की आखिरी सांस तक किसी न किसी लक्ष्य को लेकर चलना चाहिए। लक्ष्य की चाह ही आदमी को जिंदादिल बनाती है। लक्ष्यहीन जिंदगी दूसरों पर ही नहीं, बल्कि स्वयं के लिए भी बोझ होती है।"

स्वरूप सिंह कलान ने अपने जीवन के पैंतीस वर्ष सेना में गुजारे थे। उनकी जिंदगी बड़ी ही अनुशासित और संयमित थी। अपने बच्चों को भी उन्होंने बचपन से ही संयम और अनुशासन की शिक्षा दी थी। उनके तीन बेटे थे—सुरेन्द्र सिंह, राजेन्द्र सिंह, नरेन्द्र सिंह तथा एक बेटी आशा सिंह। सभी बच्चे शादी-शुदा और घर-बार वाले थे। उनके बड़े बेटे सुरेन्द्र सिंह कलान आईटीसी यूनिट, जयपुर में जनरल मैनेजर थे। वह अपनी पत्नी वीना तथा दोनों बच्चों निखिल एवं नंदिता के साथ जयपुर में ही रहते थे। दूसरे बेटे कर्नल राजेन्द्र सिंह कलान अन्तरराष्ट्रीय स्तर के पोलो खिलाड़ी थे। वे भी सेना में रहे थे। उन्होंने सन् १९८३ में सेना से प्रीमेच्योर रिटायरमेंट ले लिया था। कर्नल राजेन्द्र सिंह से छोटे नरेन्द्र सिंह कलान भी सेना में ही थे। उनकी नियुक्ति दिल्ली स्थित सेना मुख्यालय में थी। बेटी आशा की शादी विंग कमाण्डर निर्विकार सिंह से हुई थी।

कलान साहब अपने सबसे छोटे बेटे नरेन्द्र सिंह के साथ दिल्ली के छावनी क्षेत्र में गोपीनाथ बाजार रोड स्थित कोठी नं॰ ४१ बी में रहते थे। इस कोठी का तीन बेडरूम तथा एक ड्राइंगरूम-कम-डाइनिंग हॉल वाला

आगे का भाग उन्होंने सन् १६७० में किराये पर लिया था। कोठी के पीछे वाले भाग में कोठी के मालिक रमेश अरोड़ा का परिवार रहता था। रमेश अरोड़ा फिल्म फाइनेंसर हैं।

सुरेन्द्र सिंह कलान पिछले एक माह से दिल्ली में थे। दरअसल आईटीसी यूनिट, जयपुर में एक पांच सितारा होटल बनाने की योजना पर विचार कर रही थी। उसी सिलसिले में वह दिल्ली आये थे। वह छावनी क्षेत्र से थोड़ी दूर स्थित होटल मौर्या शैरेटन में ठहरे थे। लेकिन दिल्ली में इतनी व्यस्तता रही कि चाहकर भी वह अपने छोटे भाई और पिता से मिलने नहीं जा सके।

१७ नवम्बर को समय मिला, तो सुरेन्द्र सिंह पिता और भाई से मिलने छावनी क्षेत्र गये। कलान साहब को बड़ी खुशी हुई। उन्होंने बेटे को गले से लगाकर कहा, "मैं जानता हूं, बहुत व्यस्त रहते हो। पर व्यस्तता के साथ तुम्हें यह भी तो याद रखना चाहिए कि बूढ़े बाप की आंखें तुम्हें देखने के लिए तरसती हैं।"

"डोण्ट वरी पापा। मैं आपकी यह शिकायत ही दूर करने आया हूं", सुरेन्द्र सिंह चहकते हुए बोले, "अब कल तक मैं आपके साथ ही रहूंगा।"

सुनकर कलान साहब खुश हो गये। नरेन्द्र सिंह और उनकी पत्नी सुनीता भी सुरेन्द्र सिंह से मिलकर प्रसन्न हुए। आशा सिंह की बारह वर्षीया बेटी अंजलि पिछले डेढ़ माह से नाना के पास रह रही थी। बड़े



सुरेन्द्र सिंह कलान

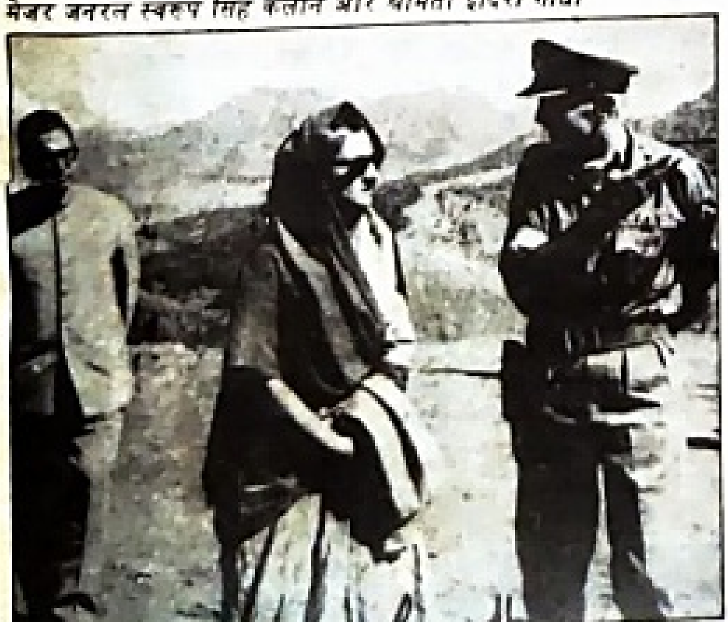
मामा से मिलकर वह भी खुश हुई।

रात के नौ बजे तक कलान साहब अपने परिवार के साथ ड्राइंगरूम में बैठे गप-शप करते रहे।

नरेन्द्र सिंह को पत्नी सहित एक मित्र के घर डिनर पर जाना था। वे दोनों ठीक नौ बजे चले गये। खानसामा विजय कुमार ने साढ़े नौ बजे डाइनिंग टेबल पर खाना लगाया। कलान साहब, सुरेन्द्र सिंह और अंजलि ने साथ-साथ खाना खाया। आधा घंटा फिर गप-शप हुई।

दस बजे कलान साहब अंजलि के साथ अपने बेडरूम में चले गये। सुरेन्द्र सिंह के सोने की व्यवस्था दूसरे बेडरूम में थी। नौकर सुरेन्द्र ने उनका बिस्तर लगा दिया था। वह भी सोने चले गये, तो सुरेन्द्र ने ड्राइंग-रूम का दरवाजा बंद कर दिया।

मेजर जनरल स्वरूप सिंह कलान और श्रीमती इंदिरा गांधी



खानसामा विजय कुमार और नौकर सुरेन्द्र कोठी के इस भाग के पीछे छोलदारी में सोते थे। खा-पीकर वे दोनों भी सोने चले गये।

नरेन्द्र सिंह और सुनीता रात एक बजे वापस लौटे। कार का हार्न सुनकर नौकर सुरेन्द्र ने कोठी का दरवाजा खोला। कार पार्क करके नरेन्द्र सिंह और सुनीता भी अपने बेडरूम में जाकर सो गये। तब तक सब कुछ सामान्य था।

पिता की तरह नरेन्द्र सिंह भी रोज सुबह सैर पर निकलते थे। नरेन्द्र सिंह की आंख छः बजे खुली, तो उन्हें रोज की तरह पिता के पैरों की आहट सुनाई नहीं दी। नरेन्द्र सिंह को मालूम था कि वे रोज पांच बजे ही बिस्तर छोड़ देते हैं।

कलान साहब नरेन्द्र के साथ ही सैर के लिए जाते थे। अतः नरेन्द्र उनके कमरे में पहुंचे। कमरे की लाइट जल रही थी। नरेन्द्र ने पिता के बेडरूम में जो दृश्य देखा, उससे उनकी रूह कांप उठी। कमरे का सारा सामान बिखरा पड़ा था। कलान साहब और अंजलि खून से लथपथ बेड पर पड़े थे। कलान साहब का सिर पलंग के पायताने की ओर था और अंजलि का सिरहाने की ओर। दोनों के ही सिर पर तौलिये पड़े हुए थे। नरेन्द्र सिंह ने तौलिये हटाकर देखा, उन दोनों के सिर बुरी तरह से फटे हुए थे। बेड पर ही तोशीबा आनन्द का एक सेल और टूटा हुआ बिजली का बल्ब पड़ा था। खून से सने चारपाई के दो पाये भी वहीं पड़े थे।

यह दृश्य देख नरेन्द्र सिंह के मुंह से चीख निकल गयी। वह दौड़े-दौड़े उस बेडरूम में गये, जिसमें सुरेन्द्र सिंह सोये हुए थे। वहां भी उन्हें वैसा ही दृश्य देखने को मिला। कमरे में रखी ड्रेसिंग टेबल टूटी हुई थी। खिड़कियां उखड़ी हुई थीं और सुरेन्द्र सिंह बेड पर बेहोश पड़े थे। नरेन्द्र सिंह की चीख सुनकर तब तक सुनीता भी वहां आ गयी थी।

नरेन्द्र सिंह ने तुरंत अपने बड़े भाई कर्नल राजेन्द्र सिंह तथा कुछ अन्य परिचितों को फोन किये। थाना कैंट की पुलिस को भी सूचना दी।

कर्नल राजेन्द्र सिंह सोमविहार में रहते थे। वह बीस मिनट में पहुंच गये। तब तक कुछ और परिचित भी आ गये थे। पुलिस तब तक नहीं आयी थी।

स्वरूप सिंह कलान, अंजलि और सुरेन्द्र सिंह के शरीरों में अभी गर्मी थी। उन्हें तुरंत छावनी स्थित आर्मी बेस अस्पताल ले जाया गया। डाक्टरों ने स्वरूप सिंह कलान को देखते ही मृत घोषित कर दिया। पांच-सात मिनट बाद सुरेन्द्र सिंह की भी मृत्यु हो गयी। अंजलि की हालत बहुत खराब थी। उसे इंटेंसिव केयर यूनिट में रखा गया।

पुलिस और क्राइम ब्रांच की टीम साढ़े छह बजे घटनास्थल पर पहुंची। बाद में अपराध शाखा उपायुक्त रामाश्रय तिवारी और देवनगर क्राइम ब्रांच के सहायक आयुक्त पी०एस० तोमर भी अपनी टीम के साथ छावनी क्षेत्र आ पहुंचे।

लोहे की आलमारी, चार अटैची, एक जनाना पर्स और जेवरों के सात डिब्बे लॉन में पड़े मिले। आलमारी और अटैचियों के लॉक टूटे हुए थे। जिस लॉन में यह सामान पड़ा था, उसके पास छोटी-सी दीवार थी और दीवार के पार सड़क। कोठी का मुख्य द्वार भी उधर ही था, जो सुबह खुला मिला था।

स्वरूप सिंह के बेडरूम में लकड़ी के दो पाये, दो फुट लम्बा लकड़ी का एक पटरा और तोशीबा आनंद के एक सेल के अलावा हत्यारों से सम्बन्धित कोई चीज नहीं मिली। इन सभी चीजों पर खून लगा हुआ था।

क्राइम टीम ने घटनास्थल से २६ फिंगर प्रिंट उठाये। बेड के ऊपर नंगे पैर का एक ८ इंच लम्बा निशान भी मिला।

नरेन्द्र सिंह ने सामान चेक करके बताया कि आलमारी और अटैचियों से कोई चीज गायब नहीं हुई थी। अलबत्ता जेवर के डिब्बों में से कुछ जेवर जरूर गायब थे। उन्होंने पुलिस को यह भी बताया कि अंजलि के कानों के टाप्स, कलान साहब की सोने की अंगूठी, सुरेन्द्र सिंह की अंगूठी और पर्स को हत्यारों ने छुआ तक नहीं था।

पुलिस ने घटनास्थल से मिली चीजें अपने कब्जे में ले लीं। थाना कैंट में हत्या, डकैती और हत्या के प्रयास

का मामला दर्ज होने के बाद इस केस की जांच अपराध शाखा देवनगर के इंसपेक्टर गुरमीत सिंह को सौंप दी गयी।

स्वरूप सिंह कलान और सुरेन्द्र सिंह की लाशें पोस्टमार्टम के लिए भेजने के बाद गुरमीत सिंह ने जांच शुरू की। ऐसे मामलों में सबसे पहले संदेह नौकरों पर ही होता है। गुरमीत सिंह ने कलान साहब के रसोइये विजय और नौकर सुरेन्द्र से पूछताछ की। वे दोनों निर्दोष पाये गये।

कोठी के मालिक रमेश अरोड़ा और कलान परिवार के बीच किरायेदारी का मुकदमा चल रहा था। कलान साहब कोठी का किराया भी अदालत में जमा कराते थे। कहीं हत्याकांड इसी मुकदमे की वजह से न हुआ हो, इस बात को ध्यान में रखते हुए रमेश अरोड़ा और उनकी पत्नी रेनू से भी पूछताछ की गयी। लेकिन कोई सूत्र नहीं मिला।

१६ नवम्बर १६१२ को हरियाणा, जिला रोहतक के गांव सालावास में जन्मे मेजर जनरल स्वरूप सिंह कलान ने दिल्ली के सेंट स्टीफेंस कालेज से बीए पास किया था। फिर वे जाट रेजीमेंट सेंटर, बरेली में सेना में भर्ती हो गये। बेसिक ट्रेनिंग के बाद उन्हें जाट रेजीमेंट की थर्ड बटालियन में भेज दिया गया। बाद में उनका सेलेक्शन किचनूर कालेज, नौगांव के लिए हुआ, जहां उन्होंने आफिसर कमाण्डेंट की ट्रेनिंग ली।

उनका सेलेक्शन इंडियन मिलेट्री अकादमी, देहरादून के लिए हुआ। फिर उन्हें सेकेंड लेफ्टिनेंट के रूप में कमीशन मिला। उनकी पोस्टिंग देहरादून में ही राजपूताना रायफल्स में हो गयी। अगले दो वर्ष तक वह देहरादून में ही रहे। उन्हीं दिनों उनकी शादी सुशीला कलान से हुई।

सन् १६४० में जापानियों ने हांगकांग पर कब्जा कर लिया था। राजपूताना रायफल्स की स्वरूप सिंह कलान वाली बटालियन को हांगकांग भेजा गया। सन् १६४२ में वे भारत लौटे। १६४३ में जापानियों ने बर्मा पर कब्जा किया, तो वहां भी स्वरूप सिंह कलान की बटालियन को



नरेन्द्र सिंह कलान

भेजा गया। जब वह बर्मा से लड़ाई जीतकर लौटे, तो उन्हें तरक्की देकर कैप्टन बना दिया गया। इसी के साथ उन्हें मिलेट्री क्रास मेडल देकर सम्मानित भी किया गया। उस समय विक्टोरिया क्रास के बाद मिलेट्री क्रास दूसरे नम्बर का सम्मान था।

सन् १६४४ में स्वरूप सिंह कलान जंगलवार फेयर स्कूल रांची में इंस्ट्रक्टर के पद पर नियुक्त किये गये। इस स्कूल में सेना के अफसरों को जंगली लड़ाई की ट्रेनिंग दी जाती थी। सन् १६४५ में कलान साहब को ८/६ राजपूताना रायफल्स का कमांडिंग आफिसर बनाकर अण्डमान-निकोबार भेजा गया, जहां उन्होंने जापानियों से सरेण्डर कराया।

सन् १६४६ में स्वरूप सिंह कलान का सेलेक्शन लेफ्टिनेंट कर्नल स्टाफ कालेज कम्बर्ले, लंदन के लिए हुआ। वहां उन्होंने एक वर्ष तक इंस्ट्रक्टर के पद पर काम किया। लंदन से लौटने के बाद वह छह माह तक आर्मी हेडक्वार्टर की आपरेशन ब्रांच में रहे।

फिर सन् १६४७ में उन्हें इन्फेंटरी स्कूल देहरादून का इंस्ट्रक्टर बनाया गया। सन् १६४८ में उन्हें देहरादून से दिल्ली बुलाकर राजपूताना रायफल्स की छठी बटालियन की कमाण्ड सौंपी गयी। उसी साल श्रीनगर पर कबायलियों ने हमला कर दिया। स्वरूप सिंह कलान की बटालियन को उनसे निपटने की जिम्मेदारी मिली। वे अपनी बटालियन के साथ श्रीनगर गये और कबायलियों को खदेड़ दिया। वे श्रीनगर से दिल्ली लौटे, तो उन्हें राजपूताना रायफल्स का पहला भारतीय कमांडिंग आफिसर बनाया गया। सन् १६५१ में उन्हें इन्फेंटरी स्कूल, मऊ में सीनियर आफिसर्स कोर्स का इंस्ट्रक्टर नियुक्त किया गया, जहां वह सन् १६५५ तक रहे।

जब कलान साहब मऊ में तैनात थे, तभी सन् १६५३ में उनकी बटालियन का सेलेक्शन संयुक्त राष्ट्र संघ सेना के लिए हुआ। उनकी बटालियन को कोरिया जाना था। कलान साहब ने आपरेशन पेट्रोशियन यूनाइटेड आर्मी के तहत अपनी बटालियन के साथ नौ माह तक उत्तरी और दक्षिणी कोरिया में लड़ाई लड़ी। सन् १६५६ में उनको इजराइल की गाजापट्टी में लड़ाई लड़ने भेजा गया। यूनाइटेड नेशंस आर्मी में उनकी कम्पनी भी शामिल थी।

इजराइल से लौटने के बाद सन् १६५७ में कलान साहब को असम रायफल्स का डीआईजी बनाकर नागालैंड भेजा गया। वहीं पर उनकी तरक्की ब्रिगेडियर के रूप में हुई।

सन् १६६२ में जब चीन-भारत युद्ध हुआ, तो स्वरूप सिंह कलान को २३वीं इन्फेंटरी डिवीजन का जनरल कमांडिंग आफिसर बनाकर तेजपुर में तैनात किया गया। लेकिन उनके पहुंचने से पहले ही लड़ाई बंद हो गयी।

सन् १६६४ में कलान साहब को १६वीं इन्फेंटरी डिवीजन का जनरल आफिसर कमांडिंग बनाकर बारा-मूला में तैनात किया गया। उस समय जम्मू-कश्मीर में इन्फेंटरी के चार ब्रिगेड थे, जो पूरी घाटी को कवर करते थे। हेडक्वार्टर बारामूला में था। स्वरूप सिंह कलान इन चारों ब्रिगेड के मुखिया थे।

उन्हीं दिनों जब हाजी पीर दर्रे पर पाक हमला हुआ, तो स्वरूप सिंह कलान ने अपनी कम्पनी के साथ लड़ाई लड़कर पाक सैनिकों को भगा दिया और हाजी पीर पर कब्जा कर लिया। उसके बाद पुंछ पर हमला हुआ, तो स्वरूप सिंह कलान ने वहां भी विजय हासिल की। इसी लड़ाई के लिए उन्हें महावीर चक्र से सम्मानित किया गया।

३५ वर्षों की सेवा के बाद सन् १६६६ में स्वरूप सिंह कलान सेवा-निवृत्त हुए। अब वे इंस्टीट्यूट आफ होम इकोनामिक्स, साउथ एक्सटेंशन की गवर्निंग बाडी से जुड़ गये थे। सन् १६८२ में जब राजपूताना रायफल्स एसोसियेशन बनी, तो कलान साहब को उसका अध्यक्ष बनाया गया। इन दोनों संस्थाओं से वे अंतिम सांस तक जुड़े थे। कलान साहब की पत्नी सुशीला कलान की अक्टूबर '६० में मृत्यु हो गयी थी।

सेना में इतने बड़े-बड़े पदों पर रहकर देश की सेवा करनेवाले महावीर चक्र से सम्मानित स्वरूप सिंह कलान की मृत्यु इस तरह होगी, यह कोई सोच भी नहीं सकता था। सोचा तो किसी ने यह भी नहीं था कि मौत सुरेन्द्र सिंह को जयपुर से खींच लायेगी।

दो हत्याओं का यह मामला इसलिए और भी गम्भीर बन गया था, क्योंकि वारदात छावनी जैसे सुरक्षित क्षेत्र में और सेना के एक उच्चाधिकारी के घर में हुई थी।

इंसपेक्टर गुरमीत सिंह ने घटना-स्थल का मुआयना किया, तो वह इस नतीजे पर पहुंचे कि हत्यारे कोठी के मुख्य द्वार से अंदर आये थे। ड्राइंग रूम में लैचलॉक लगा था, जिसे उन्होंने पेंचकस जैसी किसी चीज से खोला होगा। दरवाजा खोलकर वे ड्राइंगरूम में पहुंचे होंगे। जिस बेडरूम में सुरेन्द्र सिंह सोये थे, उसका और स्वरूप सिंह कलान वाले बेडरूम के दरवाजे ड्राइंग रूम में ही खुलते थे। उस समय दोनों दरवाजे खुले रहे होंगे। इसी लिए हत्यारे आसानी से दोनों बेडरूम में घुस गये। अंदर पहुंचकर हत्यारों ने पहले सुरेन्द्र सिंह, स्वरूप सिंह और अंजलि पर चारपाई के पायों और लकड़ी के कुट्टे से प्रहार किये। उन्हें मृत समझने के बाद उन्होंने लूटपाट की। नरेन्द्र सिंह के कमरे में वे इसलिए नहीं घुस सके, क्योंकि उसकी कुण्डी अंदर से बंद थी।

कलान साहब के घर में जिस तरह से वारदात हुई, उस तरह की वारदातें बावरिया गिरोह करता है। बावरिया गिरोह के लोग अपने शिकार को मौत के घाट उतारने के बाद ही लूटपाट करते हैं। वारदात में चारपाई के पायों का उपयोग भी इन्हीं लोगों के द्वारा किया जाता है।

जिस तरह के नंगे पैर का निशान कलान साहब के बेड पर मिला, वैसे पैर भी बावरियों के ही होते हैं।

बावरिया गिरोह ने दिल्ली में पहले भी कई वारदातों में ऐसा ही किया था। अतः गुरमीत सिंह को संदेह हुआ कि इस घटना में भी बावरिया गिरोह का ही हाथ होगा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए वह जांच में भी लगे हैं। लेकिन अभी तक कोई भी ऐसा सूत्र उनके हाथ नहीं लगा, जो उन्हें हत्यारों तक पहुंचा सके।

अंजलि अभी अस्पताल में है। अब उसे आर्मीबेस अस्पताल से आर्मी हास्पिटल धौलाकुआं स्थानान्तरित कर दिया गया है। इस घटना में अंजलि के दो दांत टूट गये थे तथा नाक और होंठ बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गये थे।

स्वरूप सिंह कलान के छोटे पुत्र नरेन्द्र सिंह कलान ने इस संवाददाता को बताया कि घटना वाली रात को रमेश अरोड़ा रात ढाई बजे वापस लौटे थे। उन्होंने कोठी का मेन गेट खुला छोड़ दिया था। इसी से हत्यारे आसानी से अंदर घुसे। नरेन्द्र सिंह इस हत्याकांड को संदेह की दृष्टि से देखते हैं। उनका कहना है कि यह मामला अगर सिर्फ लूटपाट के लिए की गयी हत्याओं का होता, तो हत्यारे नकदी और जेवर जरूर ले जाते।

देश की राजधानी दिल्ली में हत्याओं का सिलसिला लगातार चल रहा है। सुरक्षित माने जानेवालों इलाकों में भी अब हादसे होने लगे हैं। यह चिंता की बात है। ●

एक और अनूठा विश्व कीर्तिमान

मनोहर शुक्ला



डेनमार्क के प्रसिद्ध नगर कोपनहेगन के निवासी जान वान इयोअर्न फॉरमैन ने अगस्त १९७९ में एक अनोखा कीर्तिमान स्थापित किया था। इस प्रौढ़ ने सिगरेट के एक कश में से ३५५ छल्ले उड़ाकर विश्वभर को चकित कर डाला था। ये श्रीमान चेन स्मोकर थे और बरसों से धुएं के छल्ले उड़ाने में प्रगति कर रहे थे।

लेकिन भारतीय नौजवान श्रीमान विजय धीमान ने यह कीर्तिमान ध्वस्त कर दिया।

शालिगराम धीमान हिमाचल प्रदेश के वन विभाग में अधीक्षक पद पर कार्य करते थे। ७० वर्षीय इन्हीं धीमान साहब की दो पुत्रियों एवं तीन पुत्रों में सबसे छोटा विजय धीमान है। यह परिवार हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा में नगरोटा बागवान के निकट उपरली कोठी गांव का निवासी है।

विजय धीमान का जन्म १३ अप्रैल, १९६९ को हुआ था। पांचवी क्लास से ही उसे वजीफा मिलने लगा था। धर्मशाला के राजकीय महाविद्यालय से बी० काम० करने के बाद सन् '८९ में उसे होटल मैनेजमेंट के तीन वर्षीय डिप्लोमा में दाखिला मिला और वह मध्य प्रदेश पहुंच गया।

शैक्षणिक योग्यताओं को लेकर विजय का जीवन उपलब्धियों से अटा पड़ा है।

पारिवारिक अनुशासन के सर्वथा विपरीत चलकर विजय ने विश्व कीर्तिमान तोड़ने के साथ अपना एक नया रेकार्ड बनाया है। पिता शालिगराम ने जिंदगी भर सिगरेट-बीड़ी को छुआ नहीं था। मध्य प्रदेश पहुंचने तक विजय ने भी कभी सिगरेट अंगुलियों में थामी नहीं थी। एक रोज वह गिनेस बुक आफ वर्ल्ड रेकार्ड्स देख रहा था। उसमें अंकित विश्व कीर्तिमानों पर सरसरी निगाह दौड़ा रहा था, तो उसकी दृष्टि फॉरमैन के रेकार्ड पर जम गयी।

बस यहीं से विजय पर एक धुन सवार हो गयी। सभी की नजरें बचाकर वह चुपके से धूम्रपान करके एक कश से अधिकाधिक छल्ले उड़ाने का अभ्यास करने लगा।

सिगरेट पीना विजय के लिए कठिन प्रक्रिया से गुजरना था। शुरू में तो उसे धूम्रपान करते समय खांसी के जबरदस्त दौरे पड़े।

अन्ततोगत्वा एक दिन विजय ने महसूस किया कि उसने फॉरमैन का रेकार्ड तोड़ डाला है। तब उसने १६ मई '९१ को बम्बई में मीडिया से जुड़े अनेक महानुभावों के समक्ष इसका प्रदर्शन किया। अपने इस प्रदर्शन में विजय ने सिगरेट के एक कश में (गालों की हरकत के बिना) ५७२ छल्ले उड़ाकर लोगों को दांतों तले उंगली दबाने पर मजबूर कर दिया।

अपने उक्त प्रदर्शन में विजय ने सिगरेट के एक कश से अपने नथुनों से भी १४२ छल्ले उड़ाकर दिखाये। ५७२ छल्ले उड़ाकर विजय ने दुनिया का पिछला रेकार्ड तोड़ा, तो नथुनों से एक साथ इतने छल्ले निकालकर एक नया विश्व कीर्तिमान बनाया है।

'गिनेस बुक आफ रेकार्ड्स' ने अपने १९९२ के संस्करण में विजय की उक्त उपलब्धि को विश्व कीर्तिमान के रूप में सचित्र आंकलित कर लिया है। गिनेस बुकवालों के साथ पत्र-व्यवहार जारी है।

इस समय विजय भोपाल के इंस्टीट्यूट आफ होटल मैनेजमेंट में अंतिम वर्ष का छात्र है।

विजय अपने बारे में बताता है, "मैं अब भी सिगरेट पीने का आदी नहीं हूं। जरूरी नहीं कि छल्ले उड़ाने के वास्ते कश केवल सिगरेट अथवा बीड़ी का हो। कागज के एक रोल में कुछ ऐसा भरकर, जिससे धुआं बनाया जा सके, छल्ले उड़ाकर दिखा सकता हूं। सिगरेट की प्रैक्टिस के साथ मैं योगाभ्यास भी करता हूं। वर्ल्ड रेकार्ड तोड़ने और नया बनाने के लिए योग-शक्ति मेरे अधिक काम आयी है। मैं आज भी सिगरेट उन्हीं दिनों पीता हूं, जब कहीं प्रदर्शन करना होता है।"

निकिता



दो सहेलियां

—पुष्कर पुष्प

बजरंग जालान घर पहुंचे, तो निकिता घर में नहीं थी। नौकरों ने बताया कि मेम साब लगभग चार बजे घर से गयी थीं। साथ में मीनाक्षी मेम साब भी थीं। उस वक्त साढ़े आठ बजे थे। बजरंग जालान ने सोचा कि निकिता और मीनाक्षी शायद शापिंग के लिए गयी होंगी और लौटने ही वाली होंगी। उन्होंने नौकर से कॉफी बनाकर देने को कहा और कपड़े बदलकर बेडरूम में जा लेटे। रात के साढ़े दस बज गये+ निकिता वापस नहीं लौटी, न ही कोई फोन आया। बजरंग जालान को थोड़ी चिंता हुई, लेकिन इतनी नहीं कि उसी समय पत्नी को ढूंढ़ने निकल पड़ते। सोचा, मीनाक्षी साथ है, इसलिए निकिता उसके घर चली गयी होगी।

बजरंग जालान ने मीनाक्षी के घर फोन मिलाया। घंटी बजती रही, फोन किसी ने नहीं उठाया। इसका मतलब मीनाक्षी भी घर में नहीं थी।

मीनाक्षी और निकिता, दोनों ही रंगमंच की कलाकार थीं। रवीन्द्र रंगमंच के बैनर तले उन दोनों ने कितने ही नाटकों में काम किया था। उनके शो जब-तब होते रहते थे। जिस दिन शो होता, उस दिन निकिता रात को एक बजे तक घर लौटती। देर होने पर कभी-कभी वह मीनाक्षी के बजाजनगर स्थित घर पर भी रुक जाती।

किसी ने फोन नहीं उठाया, तो बजरंग जालान ने सोचा कि उन दोनों का कोई शो होगा और वे वहीं गयी होंगी।

पूरी रात बीत गयी। निकिता वापस नहीं लौटी। सुबह बजरंग जालान ने फिर मीनाक्षी के घर फोन मिलाया। घंटी बजती रही, फोन किसी ने नहीं उठाया। बजरंग जालान ने सोचा, दोनों देर रात लौटी होंगी और गहरी नींद सो रही होंगी।

उस दिन बजरंग जालान को कुछ जरूरी काम थे। घर से जल्दी निकलना था। अतः यह सोचकर काम पर चले गये कि निकिता दोपहर तक घर लौट आयेगी।

बजरंग जालान का आभूषणों में इस्तेमाल होनेवाले कीमती पत्थरों का कारोबार था। जवाहरनगर, जयपुर में उनकी अपनी शानदार कोठी थी और सांगानेर में खण्डेलवाल फार्म। कार, कोठी, नौकर-चाकर, सारी सुविधाएं उनके पास थीं। जयपुर के कीमती पत्थरों के व्यापारियों में उनके परिवार का नाम जाना-माना था।

निकिता बजरंग जालान की पत्नी भी थी और प्रेयसी भी। दोनों ने मार्च १९९१ में प्रेम-विवाह किया था। निकिता भी संभ्रान्त परिवार की बेटी थी। उसके पिता सोमनाथ बासु चोमू हाउस, बेनीपार्क में रहते थे। वह जेके टेक्सटाइल्स मिल्स, कोटा में टेक्सटाइल्स इंजीनियर के पद पर काम कर चुके थे और सेवानिवृत्ति के बाद जयपुर आ बसे थे।

सोमनाथ बासु के दो बच्चे थे—डी०के० बासु और निकिता। डी०के० बासु बड़े थे और अम्बानी उद्योग समूह की बम्बई स्थित एक प्रतिष्ठित कम्पनी में केमिकल इंजीनियर के पद पर तैनात थे।

निकिता अपने विधुर पिता के साथ जयपुर में ही रहती थी। उसने सन् १९९० में महारानी डिग्री कालेज से बी०ए० किया था। अध्ययन के दौरान वह रवीन्द्र रंगमंच से जुड़ी थी। महारानी डिग्री कालेज के छात्रावास में रहते हुए उसकी मित्रता मीनाक्षी लालवानी से हुई थी। मीनाक्षी भी महारानी डिग्री कालेज में उसके साथ ही पढ़ती थी।

मीनाक्षी का घर बजाजनगर, जयपुर में था। उसके पिता प्रेमलाल लालवानी रेलवे में उच्च पद पर रहे थे। प्रेमलाल लालवानी की मृत्यु हो गयी थी। उनके तीन बच्चे थे। बड़ी लड़की अजमेर में ब्याही थी। बेटे हेमंत लालवानी मेडिकल रिप्रजेंटेटिव थे और मीनाक्षी पढ़ रही थी।

निकिता और मीनाक्षी महारानी डिग्री कालेज के छात्रावास के एक ही कमरे में रहती थीं। वहीं से दोनों में घनिष्ठता बढ़ी। रंगमंच से भी दोनों वहीं रहते जुड़ीं। धीरे-धीरे निकिता और मीनाक्षी एक-दूसरे के इस हद तक करीब आ गयी थीं, जैसे दो जिस्म एक जान हों। उन दोनों के इस प्रेम को मीनाक्षी के भाई हेमंत भी जानते थे और निकिता के पिता सोमनाथ बासु भी। पर यह दो

बजरंग जालान



निकिता को संदेह हुआ, तो उसने सच्चाई का पता लगाने की कोशिश की। जल्दी ही उसे पता चल गया कि मीनाक्षी उसी का सहारा लेकर उसके पति से प्रेम करने लगी है। यह बात निकिता को अच्छी नहीं लगी। इस पूरे मामले में अजीब बात यह थी कि निकिता ने अपनी सहेली मीनाक्षी से कभी कोई शिकायत नहीं की थी। उसके साथ सम्बन्ध पहले की तरह सामान्य बने हुए थे

लड़कियों का प्रेम था, सो किसी को आपत्ति नहीं हुई।

उन दोनों ने कसम खायी थी कि वे कभी शादी नहीं करेंगी और साथ-साथ रहेंगी। सन् १९९० में बी०ए० करने के बाद जब मीनाक्षी और निकिता ने कालेज छोड़ दिया, तब भी उनके सम्बन्ध उसी तरह से घनिष्ठ बने रहे। दोनों रंगमंच से भी जुड़ी रहीं। दोनों का रोज-रोज का साथ था। कभी उनकी रात मीनाक्षी के घर पर गुजरती, तो कभी निकिता के घर पर।

दिसम्बर '९० से निकिता और मीनाक्षी के आपसी सम्बन्धों में ठहराव आना शुरू हुआ। इस ठहराव का कारण थे बजरंग जालान।

जयपुर के एक प्रतिष्ठित व्यावसायिक घराने से सम्बन्धित बजरंग जालान को नाटक देखने का शौक था। रवीन्द्र रंगमंच की एक प्रस्तुति में उनकी नजर निकिता पर पड़ी और वह उसे अपना दिल दे बैठे। मीनाक्षी और निकिता के प्रेम-सम्बन्ध से अनभिज्ञ बजरंग जालान ने निकिता को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास किया और अन्ततः सफलता मिल गयी।

निकिता को मीनाक्षी से बेहद प्यार था और उसके प्यार पर भरोसा भी। लेकिन जब उसे जीवन भर साथ निभाने का वादा लिये एक सशक्त, समृद्ध पुरुष नजर आया, तो उसे मीनाक्षी का प्यार मृगतृष्णा से ज्यादा कुछ नहीं लगा। सवाल जिंदगी का था और जिंदगी सहेली के सहारे नहीं गुजारी जा सकती थी, अतः निकिता बजरंग जालान से प्रेम करने लगी।

मीनाक्षी को पता चला, तो उसने निकिता के कदमों को रोकने की कोशिश नहीं की। वह जानती थी कि निकिता को जो राह मिली है, उसी राह पर चलकर उसके जीवन को सार्थकता मिलेगी। इसलिए उसने निकिता को प्रोत्साहित भी किया। फलस्वरूप निकिता और बजरंग जालान के सम्बन्ध बढ़ते गये। फिर शादी की भूमिका बन गयी।

मीनाक्षी को पता चला, तो वह निकिता से सामान्य भाव से बोली, "तुम जानती हो, जितना प्यार मैंने तुम्हें दिया है, बजरंग से कभी मिल पायेगा। लेकिन इस जिंदगी में प्यार ही सब कुछ नहीं होता। और भी कई चीजें हैं, जो जीने के लिए जरूरी हैं। तुम्हें मौका मिल रहा है, इस मौके का लाभ उठाओ। लेकिन अपनी इस सहेली को कभी मत भूलना। तुमसे जितना कुछ तुम्हारे पति को चाहिए, उतना ही मुझे भी चाहिए।"

"मैं न तो तुम्हारे बिना रह सकती हूं और न ही तुम्हारे बिना कुछ कर सकती हूं," निकिता भावनाओं में बहते हुए बोली, "मेरे लिए पहले तुम हो, बाद में पति। मुझ पर विश्वास रखना मीनाक्षी।"

निकिता ने जो कहा, मीनाक्षी ने मान लिया। निकिता और बजरंग जालान ने अपने-अपने संरक्षकों की मर्जी के विरुद्ध मार्च १९९१ में प्रेम-विवाह कर लिया। मीनाक्षी ने उनके विवाह में सच्ची मित्र के नाते महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

निकिता ने बड़े साफ शब्दों में बजरंग जालान को बताया था, "मैं मीनाक्षी से बेहद प्यार करती हूं। उसके बिना एक कदम चलना भी मेरे लिए संभव न होगा। आप हम दोनों के प्यार को कभी संदेह की दृष्टि से मत देखियेगा। देखेंगे, तो हम दोनों के नहीं, बल्कि मेरे और आपके बीच दूरियां आ जायेंगी।"

बजरंग जालान निकिता से प्यार करते थे। उन्होंने कह दिया, "जितना विश्वास तुम्हें अपनी सहेली पर है, उतना ही विश्वास तुम मुझ पर भी कर सकती हो। मैं तुम दोनों को कभी अलग करने की कोशिश नहीं करूंगा।"

बजरंग जालान ने उन दोनों को कभी अलग करने की कोशिश की भी नहीं। यही वजह थी कि शादी के बाद भी जब निकिता को कभी मीनाक्षी के घर रुकना होता, तो वह कोई आपत्ति नहीं करते थे।

इसी लिए उस रात भी बजरंग जालान ने निकिता के घर न लौटने को गंभीरता से नहीं लिया था।

निकिता २२ अक्टूबर की शाम को चार बजे घर से गयी थी। जब वह २३ अक्टूबर की शाम के चार बजे तक भी न लौटी, तो बजरंग जालान को चिंता हुई। वह मीनाक्षी के घर गये, लेकिन वहां ताला लगा हुआ था। अड़ोस-पड़ोस में पूछताछ करने पर पता चला कि मीनाक्षी २२ अक्टूबर की दोपहर को घर से गयी थी। बजरंग जालान ने वापस लौटकर अपने ससुर को फोन किया। पता चला, निकिता वहां भी नहीं गयी थी।

निकिता और बजरंग जालान के बीच कुछ मतभेद जरूर थे, लेकिन इतने नहीं कि निकिता उन्हें बिना बताये शहर से बाहर चली जाती।

जब निकिता का कोई पता न चला, तो बजरंग जालान ने थाना जवाहरनगर में उसकी गुमशुदगी की रपट दर्ज करा दी। थाना प्रभारी रामसिंह ने निकिता की खोज की जिम्मेदारी सब-इंसपेक्टर आसाराम को सौंपी। यह २५ अक्टूबर '९१ की बात है।

इससे पहले २३ अक्टूबर को सांगानेर पुलिस ने सांगानेर स्थित

खण्डेलवाल फार्म के बाहर से २६-२७ वर्षीया एक महिला की लाश बरामद की थी। मृतका पीली साड़ी, सोने के कंगन, मंगलसूत्र और सोने के टाप्स पहने थी। उसे गला काटकर मारा गया था और पहचान मिटाने के लिए तेजाब डालकर उसका चेहरा बुरी तरह जला दिया गया था।

सांगानेर पुलिस ने मृतका की शिनाख्त कराने की काफी कोशिश की। लेकिन कोई भी उसे पहचान नहीं सका था। पुलिस ने हत्या का केस दर्ज करके लाश पोस्टमार्टम के लिए भेज दी। सांगानेर पुलिस को एक अज्ञात महिला की लाश मिलने की सूचना मिसिंग पर्सन स्क्वाड के पास थी। २५ अक्टूबर को निकिता की गुमशुदगी की रिपोर्ट दर्ज होने के बाद जब यह सूचना मिसिंग स्क्वाड के पास पहुंची, तो वहां से थाना जवाहरनगर सूचना दी गयी।

जस्साराम बजरंग जालान को साथ लेकर थाना सांगानेर पहुंचे। पता चला कि उस औरत की लाश सवाई मानसिंह अस्पताल के शवगृह में रखी थी। जस्साराम बजरंग जालान को सवाई मानसिंह अस्पताल ले गये और लाश दिखायी। तेजाब से मृतका का चेहरा इतना विकृत हो गया था कि उसे पहचानना मुश्किल था। बजरंग जालान ने कपड़ों और आभूषणों को देखकर बताया कि लाश उनकी पत्नी निकिता की है।

थाना सांगानेर में दर्ज हत्या का केस थाना जवाहरनगर स्थानांतरित कर दिया गया। केस की जांच की जिम्मेदारी इंसपेक्टर रामसिंह ने अपने हाथ में ली। लाश जिस खण्डेलवाल फार्म के बाहर मिली थी, वह जालान परिवार का ही था। इससे रामसिंह को संदेह हुआ कि किन्हीं मतभेदों के कारण निकिता की हत्या उसके पति बजरंग जालान ने ही की होगी। उन्होंने सादे कपड़ों में अपना एक सिपाही बजरंग जालान की गतिविधियों का पता लगाने के लिए उनके पीछे लगा दिया। सिपाही ने जांच-पड़ताल के बाद बताया कि बजरंग जालान और निकिता के बीच काफी गहरे मतभेद थे। घटना से दो दिन पहले उन दोनों में झगड़ा भी हुआ था।

सिपाही ने यह भी बताया कि मीनाक्षी से केवल निकिता के ही घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं थे, बल्कि बजरंग जालान भी उसके काफी करीब थे। बजरंग जालान और मीनाक्षी निकिता से नजरें बचाकर साथ-साथ घूमते भी थे।

बजरंग जालान और मीनाक्षी के सम्बन्धों के बारे में पुलिस को जानकारी जरूर मिल गयी थी, लेकिन बजरंग जालान के विरुद्ध हत्या का कोई सबूत पुलिस के पास नहीं था। कोई भी कार्रवाई करने से पहले इंसपेक्टर रामसिंह ने मीनाक्षी से पूछताछ करना जरूरी समझा। मीनाक्षी इस रहस्य से पर्दा हटाने में मददगार हो सकती थी। रामसिंह को विश्वास था कि यदि निकिता की हत्या बजरंग जालान ने की होगी, तो यह बात मीनाक्षी भी जानती होगी। बजरंग के बजाय उससे सच उगलवाना उन्हें आसान लग रहा था।



इंसपेक्टर राम सिंह

इंसपेक्टर रामसिंह मीनाक्षी के घर गये। मीनाक्षी घर में नहीं थी। उसके भाई हेमंत लालवानी ने बताया कि वह २२ अक्टूबर को सीकर गये थे और अभी सुबह ही लौटे थे। मीनाक्षी के बारे में उन्होंने बताया कि वह संभवतः बड़ी बहन के पास अजमेर गयी होगी।

"बजरंग जालान को आप जानते हैं?" रामसिंह ने पूछा, तो हेमंत लालवानी ने बताया, "मीनाक्षी की सहेली निकिता के पति का नाम बजरंग जालान है। मैंने आज ही बजरंग जालान के घर फोन किया था। उन्होंने बताया कि उनकी पत्नी का कत्ल हो गया है।"

शक की सुई मीनाक्षी की ओर भी घूम रही थी। अतः रामसिंह ने हेमंत से उनकी बड़ी बहन का अजमेर का पता लेकर मीनाक्षी की तलाश में एक पुलिस पार्टी अजमेर भेज दी। लेकिन मीनाक्षी वहां भी नहीं थी। उसकी बहन ने बताया कि वह वहां आयी ही नहीं थी।

अभी इंसपेक्टर रामसिंह इस मामले की छानबीन में लगे ही थे कि पहली नवम्बर को निकिता वापस लौट आयी। उसे जिंदा देख सभी चौंके। निकिता जिंदा थी, तो फिर खण्डेलवाल फार्म के बाहर मिली लाश किसकी थी?

रामसिंह ने पूछताछ की, तो निकिता ने बताया, "मैं यहां से २२ अक्टूबर को सवाई माधोपुर गयी थी। वहां से २३ अक्टूबर को ट्रेन पकड़कर बम्बई चली गयी। बम्बई में सान्ताक्रुज स्थित अपने भाई डी०के० बासु के घर ठहरी। २९ अक्टूबर को मेरे पिताजी का टेलीग्राम मिला। टेलीग्राम में उन्होंने निकिता यानी मेरे कत्ल की सूचना दी थी।

"मैं आश्चर्य में रह गयी। मैं तो जिंदा थी, फिर पिताजी ने ऐसा टेलीग्राम क्यों दिया? मैंने तुरंत लौटने का निर्णय किया। मैं ३० अक्टूबर को बम्बई से रवाना हुई और पहली नवम्बर को जयपुर आ पहुंची। यहां आकर मैं सबसे पहले अपने पिताजी से मिली। उन्होंने बताया कि खण्डेलवाल फार्म के बाहर कोई लाश मिली है, जिसे मेरी लाश समझा जा रहा है।"

रामसिंह ने मृतका के कपड़े और जेवर निकिता को दिखाये, तो उसने इस बात से इनकार किया कि वे उसके हैं।

बजरंग जालान ने कपड़े और जेवर निकिता के बताये थे, जबकि निकिता इस बात से इनकार कर रही थी। रामसिंह को लगा कि इस बात में कोई न कोई रहस्य जरूर है। रामसिंह ने पोस्टमार्टम रिपोर्ट देखी। रिपोर्ट के मुताबिक मृतका की मृत्यु २२ अक्टूबर की रात को आठ से दस बजे के बीच हुई थी। मृतका का गला तेज धारवाले किसी हथियार से काटा गया था। रिपोर्ट में इस बात का भी जिक्र था कि मृतका के बायें पैर की छोटी अंगुली के पास आपरेशन का एक निशान था।

इंसपेक्टर रामसिंह हेमंत लालवानी से मिले। उन्होंने हेमंत से मीनाक्षी का फोटो लेकर देखा। फोटो से उन्होंने अनुमान लगाया कि मीनाक्षी और निकिता के शारीरिक गठन में कोई विशेष अन्तर नहीं था। उन्हें संदेह हुआ कि खण्डेलवाल फार्म के बाहर मिली लाश कहीं मीनाक्षी की न हो। पूछताछ में हेमंत ने बताया कि मीनाक्षी के बायें पैर में छः अंगुलियां थीं। छः साल पहले उसने आपरेशन कराकर छठी अंगुली निकलवा दी थी।

यह जानकारी बड़ी महत्वपूर्ण थी। इससे यह बात स्पष्ट हो गयी कि खण्डेलवाल फार्म के बाहर मिली जिस लाश को वह निकिता की समझ रहे थे, हकीकत में वह मीनाक्षी की थी। अब मामला और भी उलझ गया।

रामसिंह ने पूरे मामले का विश्लेषण किया, तो इस नतीजे पर पहुंचे कि मीनाक्षी का कत्ल बजरंग जालान और निकिता में से ही किसी ने किया है। दोनों ने मिलकर मीनाक्षी को ठिकाने लगाया होगा, इसकी संभावना नहीं थी। कोई भी ऐसा कारण नहीं था, जो निकिता और बजरंग जालान को एक साथ दुष्प्रेरित करता। अलबत्ता ऐसे कारण जरूर थे, जो उन दोनों को अलग-अलग दुष्प्रेरित कर सकते थे।

इस पूरे प्रकरण में बजरंग जालान के मुकाबले निकिता की भूमिका ज्यादा रहस्यमयी लग रही थी। वह बम्बई भी रहस्यमयी परिस्थितियों में गयी थी। इसलिए रामसिंह ने पहले उसी से पूछताछ करना उचित समझा।

बजरंग जालान इस मामले को लेकर बहुत घबराये हुए थे। उन्हें लग रहा था कि वह निर्दोष होते हुए भी इसलिए फंस जायेंगे, क्योंकि मीनाक्षी के साथ उनके अंतरंग सम्बन्ध थे।

निकिता भी बुरी तरह घबरायी हुई थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि पुलिस के जाल से कैसे निकले। रामसिंह बौखलाये बैठे थे। उन्होंने निकिता पर सवालों की झड़ी लगायी, तो वह उलझकर रह गयी।

उसने स्वीकार कर लिया कि मीनाक्षी की हत्या उसी ने की थी।

दरअसल जब मीनाक्षी और निकिता कालेज हास्टल में रहती थीं, तो दोनों के बीच दोस्ती के साथ-साथ समलैंगिक सम्बन्ध भी बन गये थे। फिर निकिता और बजरंग जालान के सम्बन्ध गहराने लगे, तो मीनाक्षी को लगा कि निकिता को रोकना बेकार है, वह मानेगी नहीं। इसी लिए उसने पुराने वादों को न केवल भुला दिया, बल्कि निकिता को सहयोग भी देने लगी। निकिता की शादी के बाद भी उसके और मीनाक्षी के समलैंगिक सम्बन्ध उसी तरह बने रहे।

बजरंग जालान को जब यह पता चला कि निकिता और मीनाक्षी के बीच शारीरिक सम्बन्ध है, तो उन्हें लगा कि मीनाक्षी के मन में पुरुष की चाह है, जिसकी पूर्ति वह निकिता से करती है।

मीनाक्षी निकिता के पास आती ही रहती थी। बजरंग जालान ने उस पर डोरे डालने शुरू किये। शादी के बाद निकिता की ओर से उनके सम्बन्ध में वैसी गर्मी न रही थी, जैसी शादी से पहले थी—यह बात मीनाक्षी अच्छी तरह महसूस कर रही थी। इसी लिए जब बजरंग जालान ने निकिता से नजर बचाकर मीनाक्षी की ओर बाहें फैलायीं, तो वह बिना किसी विरोध के उनकी बाहों में सिमट गयी। उसने सोच लिया कि जब निकिता अपना वादा तोड़कर शादी कर सकती है, तो क्या वह उसके पति से सम्बन्ध भी नहीं बना सकती।

बजरंग जालान की दोस्ती मीनाक्षी से हुई, तो उन्होंने निकिता में रुचि लेना कम कर दिया। निकिता उन दोनों के इस सम्बन्ध से अनभिज्ञ थी। पति के प्रेमोत्साह में कमी आने पर निकिता का झुकाव मीनाक्षी की ओर बढ़ा। लेकिन अब मीनाक्षी उससे सम्बन्ध रखने में उत्साहित नहीं रही थी।

निकिता को संदेह हुआ, तो उसने सच्चाई का पता लगाने की कोशिश की। जल्दी ही उसे पता चल गया कि मीनाक्षी उसी का सहारा लेकर उसके पति से प्रेम करने लगी है। यह बात निकिता को अच्छी नहीं लगी। उसने मीनाक्षी से कुछ नहीं कहा, पर बजरंग जालान को खूब फटकारा। फिर भी बजरंग जालान ने मीनाक्षी से मिलना-जुलना जारी रखा। इसी बात को लेकर उनके और निकिता के बीच झगड़ा होने लगा।

इस पूरे मामले में अजीब बात यह थी कि निकिता ने अपनी सहेली मीनाक्षी से कभी कोई शिकायत नहीं की थी। उसके साथ उसके सम्बन्ध पहले की तरह सामान्य बने हुए थे।

जब मीनाक्षी और बजरंग के सम्बन्ध गहराते गये, तो निकिता को लगा कि बजरंग उसे छोड़कर मीनाक्षी से शादी कर लेंगे। इसलिए उसने मीनाक्षी को अपने रास्ते से हटाने का आपराधिक निश्चय कर लिया।

२२ अक्तूबर को निकिता ने मीनाक्षी को यह कहकर अपने घर बुलाया कि पिकनिक के लिए सांगानेर चलना है। मिनाक्षी दोपहर में बजरंग जालान के घर पहुंच गयी। उस समय वह सलवार कमीज पहने थी। निकिता ने मीनाक्षी से कहा कि वे शाम के समय सांगानेर चलेंगी और रात खण्डेलवाल फार्म पर गुजारेंगी।

जब निकिता तैयार होने लगी, तो मीनाक्षी से बोली, "आज की रात हम दोनों की रात है। तुम भी मेकअप कर लो।"

मीनाक्षी मेकअप करने लगी। निकिता उसे चिकोटी काटते हुए बोली, "सुन यार, तेरा यह सूट मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा है। तू ऐसा कर, मेरी साड़ी और ब्लाउज पहन ले।"

निकिता ने अपनी पीली साड़ी, ब्लाउज और पेटीकोट मीनाक्षी को दे दिया। मीनाक्षी ने सूट उतारकर साड़ी-ब्लाउज पहन लिया। तब निकिता ने उसे अपने कंगन, टाप्स और सैंडिल भी यह कहकर पहना दीं कि बिना गहनों के साड़ी अच्छी नहीं लगती। मीनाक्षी पूरी तरह तैयार हो गयी, तो निकिता अपना मंगलसूत्र उसके गले में डालते हुए बोली, "आज पत्नी की भूमिका तू निभाएगी, इसलिए इसे भी तू ही पहन ले।"

मीनाक्षी ने उसकी सारी बातें सहर्ष मान लीं।

निकिता कम्पोज की गोलियां पहले ही खरीद लायी थी। उसने छह गोलियां खाली फ्लास्क में पहले ही डाल रखी थीं। जब तैयारी हो गयी, तो निकिता ने पिकनिक के लिए मूंग की दाल का हलवा बनाया। चाय बनाकर कम्पोज की गोलियोंवाले फ्लास्क में भर ली।

चाय का फ्लास्क मीनाक्षी को थमाते हुए वह बोली, "कॉफी पीने का मन है। तुम थोड़ी देर बैठो, मैं कॉफी बना लेती हूं। एक-एक प्याला पी लेंगे और एक फ्लास्क भरकर साथ लेते चलेंगे।"

मीनाक्षी को ड्राइंगरूम में बैठाकर निकिता अंदर गयी और दो प्याले कॉफी बनायी। कॉफी को प्यालों में डालकर उसने फ्लास्क उठाया और टायलेट जाकर वहां रखी तेजाब की बोतल से उसमें तेजाब भर लिया। फ्लास्क उसने किचेन में छोड़ा और कॉफी के प्याले लेकर ड्राइंगरूम में आ गयी।

दोनों सहेलियों ने कॉफी पी। निकिता किचेन से फ्लास्क उठा लायी। दोनों बाहर निकलीं और आटोरिक्शा लेकर सांगानेर चली गयीं। वे जब खण्डेलवाल फार्म पर पहुंची, तब तक अंधेरा उतर आया था। फार्म हाउस पर दोनों ने थोड़ी देर आराम किया। फिर निकिता मीनाक्षी से बोली, "आओ चलें।"

मीनाक्षी तैयार थी। निकिता ने दोनों फ्लास्क कंधे पर टांगे, हलवे का डिब्बा बायें हाथ में लिया और सहेली का हाथ थामकर फार्म हाउस से बाहर निकल आयी। वह मीनाक्षी से बोली, "इस इलाके में कोई डर नहीं है। मैंने फार्म के बाहर एक एकांत जगह देख रखी है, वहीं बैठेंगे।"

मीनाक्षी कुछ नहीं बोली। निकिता मीनाक्षी को फार्म के बाहर एक एकांत स्थान पर ले गयी। पहले दोनों वहीं बैठकर गप्पें लड़ाती रहीं। जब साढ़े सात बज गये, तो निकिता ने फ्लास्क से चाय निकालकर मीनाक्षी को दी।

"तुम भी पियो।" मीनाक्षी ने कहा।

निकिता बोली, "मैं थोड़ी देर बाद कॉफी पिऊंगी। अभी तुम्हारे साथ हलवा खाती हूं।"

दोनों ने साथ-साथ हलवा खाया। मीनाक्षी चाय भी पीती रही। चाय में कड़वाहट थी। मीनाक्षी ने यह बात निकिता से कही, तो वह बोली, "काफी देर की बनी हुई है। कड़वाहट नहीं होगी, टेस्ट चेंज हो गया होगा। वैसे भी मैंने पत्ती ज्यादा डाली थी।"

मीनाक्षी ने सहेली की बात पर विश्वास करके पूरी चाय पी ली। निकिता मीनाक्षी को अपनी ओर खींचती हुई बोली, "मेरी गोद में सिर रखकर लेट जाओ। आज मैं तुम्हें जी भरकर प्यार करना चाहती हूं।"

मीनाक्षी उल्लसित होकर निकिता की गोद में सिर रखकर लेट गयी। निकिता उसके बालों में अंगुलियां फिराते हुए बार-बार उसके गाल और माथा चूमने लगी।

एक तो नशा, ऊपर से प्यार। दस-पन्द्रह मिनट में ही मीनाक्षी सो गयी। निकिता ने आधा घंटा इंतजार किया। आठ बज गये। निकिता ने अपने पर्स से नया ब्लेड निकाला और मीनाक्षी का सिर अपनी गोद से हटा कर उसका गला काट दिया। मीनाक्षी छटपटायी और फिर हमेशा के लिए शांत हो गयी। निकिता ने तेजाब वाला फ्लास्क खोला और उसके चेहरे पर उलट दिया। इसके बाद निकिता एक पल भी वहां नहीं रुकी। सारा सामान समेटकर वह फार्म हाउस पर चली गयी। वह रात निकिता ने फार्म हाउस पर ही बितायी।

२३ अक्तूबर की सुबह निकिता ने सांगानेर से बस पकड़ी और सवाई माधोपुर चली गयी। रात वह वहीं रही। २४ अक्तूबर को ट्रेन पकड़कर वह बम्बई चली गयी।

ये सारी बातें पता चलने पर इंसपेक्टर रामसिंह ने निकिता को गिरफ्तार कर लिया। उसकी निशानदेही पर बजरंग जालान के घर से मीनाक्षी के कपड़े और सैंडिल भी बरामद हो गयीं।

पूछताछ के बाद रामसिंह ने निकिता को छह नवम्बर को अदालत पर पेश किया, जहां से उसे जयपुर कारागार भेज दिया गया। इस तरह अत्यन्त दुःखद रूप से समाप्त हुआ दो सहेलियों का परस्पर प्रेम उनके ही अविवेक से। ●

—महिमा पैसे की—

(पृष्ठ ६६ का शेष)

रही थी। इस अवधि के अंतिम दिन मुल्जिम को अदालत पर पेश करना जरूरी होता है। लेकिन अनुपम के मामले में ऐसा नहीं हुआ।

दो बज गये थे। पांच बजे तक मेरठ से लाकर मुल्जिम को अदालत पर पेश करना सम्भव नहीं था। कोई और चारा न देख किसन सिंह ने प्रार्थनापत्र देकर अदालत से स्पष्टीकरण मांगा और साथ ही जेल में मुल्जिम अनुपम प्रकाश का बयान लेने की अनुमति भी मांगी।

न्यायाधीश महोदय ने उनके प्रार्थनापत्र के आधार पर अनुपम प्रकाश का ज्युडीशियल रिमांड १० अक्टूबर तक के लिए बढ़ा दिया। साथ ही उन्हें जेल में उसका बयान लेने की अनुमति भी दे दी। किसन सिंह ने अदालत के आदेश के साथ कोर्ट मोहर्रिर को साथ लिया और उसी समय मेरठ जेल के लिए रवाना हो गये चार बजे वह मेरठ जेल पहुंचे। लेकिन मेरठ जेल में जब उन्होंने अनुपम प्रकाश से पूछताछ की, तो किसन सिंह को उस पर संदेह हुआ था।

अनुपम को अदालत पर पेश करने की अगली तारीख १० अक्टूबर थी। उसी दिन उसकी जमानत के प्रार्थनापत्र पर भी बहस होनी थी। लेकिन इसी बीच किसन सिंह ने यह पता लगा लिया था कि इस केस के सिलसिले में जेल में बंद मुल्जिम अनुपम प्रकाश नहीं है। यह मामला प्रकाश में आने से यह केस और भी पेचीदा हो गया।

१० अक्टूबर को जब अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत में अनुपम की जमानत पर सुनवाई हुई, तो किसन सिंह ने यह प्रार्थनापत्र देकर सबको चौंका दिया कि जिस मुल्जिम की जमानत के लिए सुनवाई हो रही है, वह अनुपम प्रकाश है ही नहीं। इस पर अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने अनुपम को १५ अक्टूबर को अदालत पर पेश करने का आदेश दिया, साथ ही यह भी कि उसे पहचाननेवाले गवाह भी अदालत में मौजूद रहें।

सारा खेल पैसे का था। अतः उम्मीद थी कि १५ अक्टूबर को कोई तमाशा जरूर होगा। जिस वक्त पुलिस ने मेरठ जेल से अनुपम को लाकर अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत पर पेश किया, उसी समय सी०जे०एम० श्री आर०एस० यादव की अदालत में एक और अनुपम प्रकाश ने आत्मसमर्पण कर दिया। इस अनुपम प्रकाश का आत्मसमर्पण अधिवक्ता मनमोहन वाली ने कराया था।

केस के गवाह अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत में मौजूद थे। उन्होंने मेरठ जेल से आये अनुपम प्रकाश को पहचान कर बताया कि वह अनुपम प्रकाश सिंह है। उससे पूछताछ की गयी, तो उसने बताया कि उसका नाम अनुपम नहीं, बल्कि बलवीर सिंह है और वह थाना मसूरी के गांव गालंद का रहनेवाला है। उसने यह भी कहा कि उसे इस केस में फंसाया गया है।

सी०जे०एम० कोर्ट में पेश हुए अनुपम प्रकाश के बारे में पता चला कि वही असली अनुपम प्रकाश है।

सच्चाई खुलकर सामने आ गयी थी। अदालत ने निर्देश दिया कि फर्जी अनुपम प्रकाश बनकर जेल गये बलवीर सिंह के विरुद्ध ४२० का मुकदमा दर्ज किया जाये। उसके विरुद्ध थाना सिहानी गेट में मुकदमा दर्ज हो गया। असली अनुपम प्रकाश को उसी दिन चौदह दिन की ज्युडीशियल कस्टडी पर मेरठ जेल भेज दिया गया।

इस मामले में गौरतलब बात यह है कि जिस बलवीर सिंह को फर्जी अनुपम प्रकाश बनाकर अदालत पर पेश किया गया, वह गालंद निवासी है।

बलवीर सिंह एम०ए०बी०एड० पास था। पहले वह ऊंचा गांव में अपना प्राइमरी स्कूल चलाता था। लेकिन जब स्कूल की जमीन राष्ट्रीय राजधानी विद्युत परियोजना में अधिगृहीत हो गयी, तो बलवीर सिंह को स्कूल बंद करना पड़ा। बाद में बलवीर सिंह रसूलपुर के महाराजा प्रताप इंटर कालेज का

अनुपम, विवेक और संजय स्वामी, तीनों ही उच्छृंखल प्रवृत्ति के युवक थे। रोमांचक जिंदगी जीने का उन्हें शौक था। जिंदगी को अपने ढंग से जीने के चक्कर में ही उन्होंने लूटपाट की कुछ और वारदातें भी की थीं। शिवकुमार मित्तल के घर में इन लोगों को काफी माल मिलने की उम्मीद थी।

प्रिंसिपल बन गया। मौजूदा समय में भी वह वहीं कार्यरत था।

कहा जाता है कि परमात्मा शरण गौड़ ने बलवीर सिंह को फर्जी नाम से इस दिन की जेल काट आने के बदले एक लाख रुपये का लालच दिया था। किस केस में और किस नाम से जेल जाना है, यह परमात्मा शरण ने उसे नहीं बताया। उन्होंने उसे समझा दिया कि तुम्हें तो बस जेल जाना है। दस दिन बाद जमानत हो जाएगी। फिर असली मुल्जिम केस लड़ता रहेगा। तुम अपने नाम से जेल नहीं जा रहे हो, इसलिए तुम्हें कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

बलवीर सिंह १५ सितम्बर को अपने घर से यह कहकर गाजियाबाद आया था कि वह परमात्मा शरण के पास गाजियाबाद जा रहा है। वहां से वह उनके एक काम से इलाहाबाद जायेगा। परमात्मा शरण गौड़ ने उसे यह तो समझा दिया कि उसे अनुपम प्रकाश के नाम से जेल जाना है, लेकिन यह नहीं बताया कि केस कत्ल और लूटपाट का है। केस के दूसरे विवरण भी उन्होंने बलवीर को नहीं बताये।

इस तरह १८ सितम्बर को बलवीर सिंह को अनुपम प्रकाश बनाकर जेल भेज दिया गया। उसे जेल भेजने के बाद परमात्मा शरण गौड़ ने उसकी जमानत का भी भरपूर प्रयास किया, लेकिन जमानत हो पाती, इससे पहले ही भेद खुल गया था। भेद खुल जाने के डर के कारण ही राम प्रकाश को अपने बेटे अनुपम प्रकाश का आत्मसमर्पण कराना पड़ा।

अब ४२० के केस में बलवीर सिंह की जमानत हो गयी है और असली अनुपम प्रकाश जेल में है।

अनुपम प्रकाश का साथी विवेक यादव पहाड़ी धीरज, दिल्ली की गली अहिरान का रहनेवाला था। उसके पिता वीरेन्द्र यादव लीबिया में इंजीनियर थे। कई साल पहले एक सुरंग दुर्घटना में उनकी मौत हो गयी थी। पिता की मौत के बाद विवेक की मां ने उसके मामला अनिल यादव के पास मेरठ भेज दिया था। विवेक उन्हीं के पास रहते हुए मेरठ कालेज में बी०ए० में पढ़ रहा था।

संजय स्वामी झण्डोरा हाउस, बुढ़ाना गेट, मेरठ का रहनेवाला था। उसके पिता का नाम नरेन्द्र स्वामी था। वह भी मेरठ कालेज में ही विवेक और अनुपम के साथ पढ़ता था।

अनुपम, विवेक और संजय स्वामी, तीनों ही उच्छृंखल प्रवृत्ति के युवक थे। रोमांचक जिंदगी जीने का उन्हें शौक था। जिंदगी को अपने ढंग से जीने के चक्कर में ही उन्होंने लूटपाट की कुछ और वारदातें भी की थीं। शिवकुमार मित्तल के घर में इन लोगों को काफी माल मिलने की उम्मीद थी। वे इस ताक में थे कि वारदात उस दिन करें, जिस दिन नीना मित्तल घर में अकेली हों। लेकिन उस दिन जब नीना मित्तल ने अनुपम से यह कहा कि वह १३ अक्टूबर को उसके घर आयेगी, तो अनुपम को लगा कि सारा भेद खुल जायेगा। इसी लिए उसने अपनी योजना बदल दी और पूरे परिवार को ठिकाने लगाने का इरादा कर लिया था।

फर्जी मुल्जिमवाले केस की जांच रिपोर्ट में अगर राम प्रकाश और परमात्मा शरण गौड़ को दोषी पाया गया, तो उनके खिलाफ भी कार्रवाई की जायेगी। ●

संस्थापक : स्वर्गीय श्री क्षितीन्द्र मोहन मित्र। सम्पादक : आलोक मित्र। सहायक सम्पादक : देवकुमार सिंह। श्री वीरेन्द्रनाथ घोष द्वारा मित्र प्रकाशन प्रा०लि० के लिए प्रकाशित तथा माया प्रेस प्रा०लि०, इलाहाबाद—३ में मुद्रित। दिल्ली कार्यालय—१०५ रोहित हाउस, ३ टालस्टाय मार्ग, नई दिल्ली—११०००१।


WHITELINE
TURBO MIXIE
WITH SILICON
टर्बो पावर 1 और 3 जार के साथ उपलब्ध।
शक्ति घनाघन, काम दनादन
MAHARAJA INTERNATIONAL LIMITED
806, Vikram Tower, 16, Rajendra Place, New
008 Tlx: 3177350 BIRD IN, Fax: 5752484

Regd. No. AD-5
Lic. No. U/AD-5
MANOHAR KAHANIYAN
January 1992
RNI No. RN 2393/57
Rs. 10.00 Per Copy



शुद्ध जैसा माँ का प्यार

किशोरावस्था के रंगीन दिनों को निर्भरता
और आशाओं से भर देती है माँ का प्यार ।
समय के परिवर्तन के साथ ऐसी अनेक चीजें
हैं जो माँ के प्यार के समान ही पवित्र है ।
जैसे शालीमार नारियल तेल । विगत ४०
वर्षों से इसके कारण ही प्रत्येक परिवार में
इसका इतना सम्मान है ।



शालीमार
नारियल तेल — जैसा मां का कांचन स्पर्श

शालीमार केमिकल वर्क्स लिमिटेड